साहित्य अमृत
मासिक

वर्ष-२४ अंक-४ ❖ पृष्ठ ८८ | कार्तिक-मार्गशीर्ष, संवत्-२०७५ | नवंबर २०१८

संस्थापक संपादक
स्व. पं. विद्यानिवास मिश्र

पूर्व संपादक
स्व. डॉ. लक्ष्मीमल्ल सिंघवी

संपादक
त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी

प्रबंध संपादक
श्यामसुंदर

संयुक्त संपादक
डॉ. हेमंत कुकरेती

कार्यालय
४/१९, आसफ अली रोड,
नई दिल्ली-११०००२
फोन : २३२८९७७७ • फैक्स : २३२५३२३३
इ-मेल : sahityaamrit@gmail.com

शुल्क
एक अंक —₹ ३०
वार्षिक (व्यक्तियों के लिए)—₹ ३००
वार्षिक (संस्थाओं/पुस्तकालयों के लिए)—₹ ४००
विदेश में
एक अंक—चार यू.एस. डॉलर (US$4)
वार्षिक—पैंतालीस यू.एस. डॉलर (US$45)

प्रकाशक, मुद्रक तथा स्वत्वाधिकारी श्यामसुंदर द्वारा
४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-२
से प्रकाशित एवं ग्राफिक वर्ल्ड, १६८६,
कूचा दखनीराय, दरियागंज, नई दिल्ली-२ द्वारा मुद्रित।

साहित्य अमृत में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण संबंधित लेखक के हैं। संपादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

इस अंक में

संपादकीय
न्यायपालिका के बदलते आयाम ४

प्रतिस्मृति
अमन के रक्षक/ *श्रीरामवृक्ष बेनीपुरी* ९

कहानी
ईशरदास की वसीयत/ *नरेंद्र कोहली* ११
दादाजी की कहानी/ *मोहनदास नैमिशराय* १८
हद से हद तक/ *माया मिश्र* २७
कौआ/ *रश्मि गौड़* ३४
संबंध विच्छेद/ *गरिमा संजय* ४०
मेरी विद्या दी/ *शोभा दानी* ५६

आलेख
दीपों का त्योहार दीवाली/ *आनंद शर्मा* २२
भाई के लिए बहन का दिया हुआ कवच—भैया दूज/ *विद्या विंदु सिंह* ३०
लोक आस्था और समरसता का महापर्व छठ/ *संजय पंकज* ५२
जाँबाज क्रांतिकारी प्रफुल्ल चंद्र चक्रवर्ती *ऊषा निगम* ६०

लघुकथा
एकमात्र दिवस/ कोमल वाधवानी 'प्रेरणा' १५
जमाना नहीं रहा/ कोमल वाधवानी 'प्रेरणा' ३३
गौ-ग्रास/ कोमल वाधवानी 'प्रेरणा' ६३

कविता
हुकुम का गुलाम/ *शिवनारायण जौहरी विमल* १६
तब तक ऐसे ही/ शशींद्र अग्निहोत्री २१
शुभ दीपावली/ *ममता पाठक* ३५
दीवाली का नजराना जवानों को/ *सूबेदार कृष्णदेव प्रसाद सिंह* ३७
उठा ले गई उसको/ *महाराजकृष्ण रसगोत्र* ३८
माली/ *सूर्य प्रकाश मिश्र* ४२
शिखर-पुरुष के लिए नमन है/ *कृष्ण मित्र* ४९
मन की पुकार/ *अनीता प्रभाकर* ५५
दीपावली/ अविनाश ब्यौहार ७०

निबंध
मनुष्य नहीं हुआ पुराना/ *नर्मदा प्रसाद उपाध्याय* ३६

राम झरोखे बैठ के
मौसम के रंग/ *गोपाल चतुर्वेदी* ४७

ललित-निबंध
त्योहारों की परिधि में लोक-संस्कृति की ज्योति/ *नलिनी श्रीवास्तव* ६६

व्यंग्य
हे उलूकवाहिनी! बरसो छप्पर फाड़ के/ *ओम उपाध्याय* ६४

साहित्य का भारतीय परिपार्श्व
अंतरगंगी/ *राघवेंद्र पाटील* ६२

साहित्य का विश्व परिपार्श्व
समर्पित मित्र/ *ऑस्कर वाइल्ड* ७२

लोक-साहित्य
निमाड़ की पारंपरिक दीवाली/ *सुमन चौरे* ७६

बाल-संसार
जब भी बोलें, मीठा बोलें/ *प्रेम किशोर 'पटाखा'* १७
मेरी दीवाली तो आज ही है/ *प्रकाश मनु* २४
दादी की बगिया/ *रमेश यादव* ५०
करते खुट्टी-मेल/ *जयराम जय* ५८
बाल-बूझ पहेलियाँ/ *शिव अवतार सरस* ५९
दौड़ी-दौड़ी बिल्ली आई/ *शिवचरण सरोहा* ६१
कलियुग के चूहे/ मंजुरानी जैन ६८
जय-जय गौरी मैया/ *शिवचरण चौहान* ७१

पाठकों की प्रतिक्रियाएँ ७८
वर्ग-पहेली ८०
साहित्यिक गतिविधियाँ ८१

संपादकीय

न्यायपालिका के बदलते आयाम

इस वर्ष की १२ जनवरी से शीर्ष न्यायालय काफी सुर्खियों में रहा है। कारण कि अप्रत्याशित रूप से यकायक शीर्ष न्यायालय के चार वरिष्ठ न्यायाधीशों ने जस्टिस चेमलेश्वर के निवासस्थान पर एक प्रेसवार्त्ता आयोजित की, जो उस समय मुख्य न्यायाधीश दीपक मिश्रा के बाद सबसे वरिष्ठ न्यायाधीश थे। यह भी एक संयोग था कि जस्टिस मिश्रा और जस्टिस चेमलेश्वर का शपथ-ग्रहण समारोह एक दिन ही हुआ, किंतु जस्टिस मिश्रा का नाम राष्ट्रपति के आदेश में शीर्ष न्यायालय के प्रस्तावित न्यायाधीश के रूप में पहले था, अतएव वरिष्ठता सूची में जस्टिस दीपक मिश्रा पहले शपथ ग्रहण कर सीनियर हो गए। उम्र में कुछ बड़े होने के कारण जस्टिस चेमलेश्वर का सेवा-निवृत्तकाल पहले था। जस्टिस चेमलेश्वर ने जब जस्टिस ठाकुर मुख्य न्यायाधीश कॉलेजियम पद्धति को अपारदर्शी कहा था। पाँच वरिष्ठ न्यायाधीशों का कालेजियम सर्वोच्च न्यायालय और उच्चन्यायालयों के न्यायाधीशों का चयन कर नियुक्ति के लिए राष्ट्रपति को प्रस्तावित करता है। इसी कारण उन्होंने कॉलेजियम को चयन प्रक्रिया से भी अपने को अलग कर लिया था। तत्कालीन मुख्य न्यायमूर्ति टी.एस. ठाकुर के बहुत अनुरोध करने पर भी वे कॉलेजियम की चयन प्रक्रिया में भाग लेने के लिए सहमत नहीं हुए। उस समय के चीफ जस्टिस केहर सिंह को पीठ के सदस्य के नाते संसद् द्वारा सर्व समिति से पारित न्यायिक कमीशन कानून को संवैधानिक माना था, जबकि अन्य चार जजों ने उसे बहुमत से असंवैधानिक करार दिया। उनका असहमति का माइनॉरिटी निर्णय था। वे कॉलेजियम की चयन प्रणाली को उचित नहीं मानते थे। जस्टिस चेमलेश्वर ने कॉलेजियम को दोषपूर्ण मानते हुए इसमें भाग लेने से इनकार किया था, तभी से कानूनी क्षेत्र में विवाद शुरू हो गया था। कुछ विधिविज्ञों ने उनके दृष्टिकोण को सही कहा, कुछ ने समर्थन नहीं किया। कॉलेजियम के एकमत होकर उच्च न्यायालयों और शीर्ष न्यायालय के न्यायाधीशों के चयन पर मतभेद को एक वरिष्ठ न्यायविज्ञ श्री नारोमन ने कहा कि यह न्यायपालिका के किले में एक दरार की तरह है और उसके परिणाम अच्छे नहीं होंगे। जस्टिस चेमलेश्वर का मत था कि चयन प्रक्रिया खुली होनी चाहिए और कॉलेजियम के सदस्य को अपनी राय लिखकर देनी चाहिए कि वे क्यों किसी का समर्थन करते हैं और क्यों विरोध। इस अपारदर्शिता के कारण कॉलेजियम की चयन प्रणाली पर उँगलियाँ उठाई जा रही थीं। किंतु इस विषय में जस्टिस चेमलेश्वर अपनी राय पर दृढ़ रहे। इस प्रकरण पर हम इस स्तंभ में समय-समय पर विचार करते रहे हैं। अत: अधिक विस्तार में जाने की आवश्यकता नहीं है।

१२ जनवरी की अप्रत्याशित प्रेस कॉन्फ्रेंस के कारण न्यायिक क्षेत्र के विवाद ने उग्र रूप धारण कर लिया। इस प्रेस कॉन्फ्रेंस में जजों ने अलग-अलग ढंग से कहा कि उन्हें यह अप्रत्याशित कदम उठाना पड़ा, क्योंकि उनके अनुसार न्यायिक स्वतंत्रता और लोकतंत्र खतरे में है। वे प्रेस कॉन्फ्रेंस द्वारा जनता को आगाह कर रहे हैं, और यदि ऐसा नहीं करते तो आनेवाली पीढ़ियाँ उन्हें दोष देतीं। दो शिकायतें प्रेस-कॉन्फ्रेंस में रखी गईं, उनमें मुख्य थी—चीफ जस्टिस संवेदनशील मामलों में वरिष्ठ जजों को शामिल नहीं करते हैं। दूसरे, मामला जज लोया की आकस्मिक मृत्य का था और उनके अनुसार उसकी पुन: जाँच होनी चाहिए। दूसरा मामला गौण हो गया और बाद में चीफ जस्टिस मिश्रा की बेंच ने सर्वमत से निर्णय दे दिया कि इस मामले में किसी प्रकार के शक-सुबहा की गुंजाइश नहीं है। जज लोया की मृत्यु हृदय गति रुक जाने से हुई थी। बेंच के निर्णय में वरिष्ठ जजों की अवहेलना हो रही है। यह ठीक है कि चीफ जस्टिस मास्टर ऑफ रोल है, यह शीर्ष न्यायालय पहले कई बार निर्णय कर चुकी है, बेंच बनाना उनके अधिकार में है, किंतु वरिष्ठ न्यायाधीशों की अवहेलना नहीं होनी चाहिए। इन जजों का कहना था कि वे लिखकर और बातचीत करके भी चीफ जस्टिस को अपने दृष्टिकोण से सहमत नहीं करा सके, इसीलिए जनता से अपील के रूप में वस्तुस्थिति को स्पष्ट करने के लिए उन्हें प्रेस-कॉन्फ्रेंस बुलानी पड़ी। वैसे जनता क्या कर सकती है, यह समझ के बाहर है। जिसे सिविल सोसाइटी कहा जाता है, उसकी भी सीमाएँ हैं। संविधान के अनुसार शासन के कार्य तो एक-दूसरे के अधिकार क्षेत्र को ध्यान में रखते हुए विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका को ही अंत में करना है। इसके बाद न्यायपालिका काफी विवादग्रस्त हो गई। दोनों दृष्टिकोणों से मीडिया में बहस होने लगी, आलेख आने लगे। कुछ लोग चीफ जस्टिस के पीछे पड़ गए। भाँति-भाँति के लेख प्रकाशित हुए। मुख्य न्यायाधीश चुप रहे और कोई भी वक्तव्य स्पष्टीकरण का उन्होंने नहीं दिया। यह ठीक ही रहा, क्योंकि उनके स्पष्टीकरण या वक्तव्य से विवाद और रंग ले लेता। फिर भी विरोधी दलों में कांग्रेस और कम्युनिस्ट दलों के सदस्य मुख्य न्यायाधीश दीपक मिश्रा के खिलाफ महाभियोग का प्रस्ताव ले आए। कांग्रेस में भी इस पर एकमत नहीं था। पूर्व प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह ने अभियोग-पत्र पर हस्ताक्षर नहीं किए। विरोधी दलों में बीएसपी, तृणमूल कांग्रेस तथा बीजू जनता दल आदि अन्य दल भी इस महाभियोग के अभियान में शामिल नहीं हुए। राज्यसभा के अध्यक्ष एवं देश के उपराष्ट्रपति ने महाभियोग के प्रस्ताव को स्वीकार नहीं किया और उसके कारणों को स्पष्ट भी कर दिया। यह खेदजनक है कि पहली बार एक शीर्ष न्यायालय के मुख्य न्यायमूर्ति के खिलाफ इस प्रकार की चेष्टा कुछ सांसदों द्वारा की गई। नतीजा कुछ भी नहीं निकला। हाँ, शीर्ष न्यायालय की गरिमा को धक्का अवश्य लगा।

यही नहीं, फिर कानाफूसी होने लगी कि चूँकि जस्टिस रंजन गोगोई ने १२ जनवरी की प्रेस कॉन्फ्रेंस में भाग लिया था, अतएव चीफ जस्टिस मिश्रा के उपरांत शायद उनका नाम मुख्य न्यायाधीश के लिए न प्रस्तावित किया जाए। यद्यपि वे वरिष्ठता सूची में उसके अधिकारी हैं। इस पर भी मीडिया में काफी उथल-पुथल रही। परिपाटी है कि शीर्ष न्यायालय का सेवानिवृत्त होनेवाला मुख्य न्यायमूर्ति पहले अपने उत्तराधिकारी का नाम प्रस्तावित करता है राष्ट्रपति महोदय की स्वीकृति के लिए। आपातकाल के

समय और उसके पहले भी इस परंपरा का उल्लंघन उस समय की सरकार द्वारा हुआ और उसकी बहुत आलोचना भी हुई। लेकिन सब शंकाएँ दूर हो गईं, जब चीफ जस्टिस मिश्रा ने परंपरा का अनुपालन करते हुए जस्टिस रंजन गगोई के नाम का सुझाव माननीय राष्ट्रपति महोदय को अगले मुख्य न्यायाधीश के रूप में प्रेषित कर दिया, जिसे राष्ट्रपति महोदय ने स्वीकार कर लिया। २ अक्तूबर को मुख्य न्यायाधीश मिश्रा का कार्यकाल समाप्त हुआ। ३ अक्तूबर को राष्ट्रपति श्री रामनाथ कोविंद ने जस्टिस रंजन गोगोई को सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश की सपथ दिलाई। आशा है कि कुछ पुराने विवादों और १२ जनवरी को चार जजों द्वारा उठाए गऐ मुद्दों, विशेषता या संवेदनशील एवं महत्त्वपूर्ण मुकदमों को सुनने के लिए बेंचों के बनाने विषयक प्रश्न का हल नए मुख्य न्यायाधीश गोगोई निकाल लेंगे। चीफ जस्टिस रंजन गोगोई एक अनुभवी, विद्वान् और सुलझे हुए न्यायाधीश हैं। उनके पिता असम के मुख्यमंत्री रहे हैं। वे स्वयं जनता के सरोकारों से भली-भाँति परिचित हैं। अपने विषय में उन्होंने कहा कि जैसे वह हैं। अपनी अस्मिता, व्यक्तित्व और अपने विचारों के प्रति प्रतिबद्धता होनी ही चाहिए। कुछ टिप्पणीकारों ने प्रश्न उठाए हैं कि शायद पिछले कुछ फैसलों को ध्यान में रखते हुए कि क्या अब फैसले आइडियोलॉजिकल अर्थात् व्यक्तिगत विचारधारा द्वारा निर्धारित होंगे अथवा संविधान और कानूनों की भाषा के अनुसार। यह ठीक है कि संविधान गतिशील है, वह जड़ नहीं है, उभरती हुई सामाजिक समस्याओं को नई परिस्थितियों में आँकना होता है, किंतु फिर भी संविधान की स्थिरता, शुचिता और विश्वसनीयता बरकरार रहनी चाहिए। संविधान निर्माताओं का क्या मंतव्य था, उसकी व्याख्या बदलती परिस्थितियों में करना कठिन कार्य है, जिसका दायित्व शीर्ष न्यायालय का है। चीफ जस्टिस गोगोई ने अदालतों में बढ़ते हुए मुकदमों के प्रति चिंता व्यक्त की है। उन्होंने उच्च न्यायालयों समेत सभी से कहा कि जब अदालतों के कार्य करने के दिन हों, तो वे अन्य कार्यक्रमों में न जाएँ। इसका असर होगा। उन्होंने कुछ व्यर्थ की तथाकथित जन-याचनाओं पर नकेल लगाई है; शीघ्रता से उनके मुकदमे सुने जाएँ, इसकी होड़ सोमवार को शीर्ष न्यायालय खुलते ही अधिवक्ताओं द्वारा लग जाती थी, उसको नियंत्रित करने की कोशिश की है। ये सब कदम स्वागत-योग्य हैं।

शीर्ष न्यायालय के विचाराधीन कई संवेदनशील मामले हैं। उनमें हैं—राममंदिर और बाबरी मसजिद का विवाद, जिसमें इलाहाबाद उच्च न्यायालय के तीन जजों की बेंच के निर्णय को चुनौती दी गई है। वैसे शीर्ष न्यायालय ने स्पष्ट कर दिया है कि वह इस विवादित मामले को धर्म या आस्था के आधार पर नहीं, बल्कि मालकियत के आधार पर देखेंगे कि किसका हक बैठता है। एक अन्य मामला है शीर्ष न्यायालय के पुनर्निरीक्षण था, जिसमें कहा गया था कि मसजिद में नमाज पढ़ना इसलाम का अभिन्न अंग नहीं है। अभी तक शीर्ष न्यायालय के अनुसार नमाज कहीं भी पढ़ी जा सकती है। इसको शीर्ष न्यायालय ने पाँच जजों की बड़ी पीठ में भेजने से इनकार कर दिया। एक पेचीदा मामला और शीर्ष न्यायालय के सामने है, वह है केंद्र सरकार के तीन तलाक वाले सरकार के अध्यादेश के विषय में। शीर्ष न्यायालय ने निर्णय दिया था कि तीन तलाक इसलाम का अंग नहीं है, इसमें संविधान के समता का सिद्धांत भी निहित है। मुसलिम महिलाओं के अधिकार का सवाल भी है। यह सरकारी बिल के संसदीय समिति के विचाराधीन था, किंतु अब राष्ट्रपति का अध्यादेश जारी हो गया है। इसकी वैधानिकता को ही चुनौती दी गई है। विशेषतया इस कारण मुसलिम विधिवेत्ताओं और कुछ मुसलिम संगठनों का विरोध है कि तीन तलाक को अपराध घोषित कर दिया गया है, जब इसलाम में शादी एक सिविल करार, अनुबंध अथवा कॉण्ट्रेक्ट है। इन विवादित विषयों की राजनैतिक पृष्ठभूमि भी है। अतएव इनके फैसलों में शीघ्रता की आवश्यक है। जो भी फैसले संविधान के अनुसार आएँगे, उनके दीर्घकालीन प्रभावों की संभावनाओं से इनकार नहीं किया जा सकता है।

कानून और मानसिकता सामंजस्य

पिछले दिनों शीर्ष न्यायलय ने कई महत्त्वपूर्ण निर्णय लिये हैं, जिनका अनुपालन कठिनाइयाँ पैदा कर सकता है। वैसे संविधान सर्वोपरि है। जो फैसला शीर्ष न्यायालय ने लिया, वही देश का कानून है और उसका अनुपालन करवाना केंद्र व राज्य सरकारों का संवैधानिक दायित्व है। दिक्कत वहाँ आती है, जहाँ समाज की मानसिकता और कानून के बीच एक गहरी खाई हो। पहले समाज की मानसिकता बदले कि कानून बदले? यह वही सवाल है कि पहले अंडा या मुरगी? कानून और सामाजिक परिवर्तन, दोनों का साथ-साथ चलना जरूरी है। उसी स्थिति में कानून प्रभावी होता है। शारदा ऐक्ट के होते हुए भी राजस्थान तथा अन्य राज्यों में खुलेआम कम उम्र के बच्चों के विवाह होते हैं। कानून मजबूर है; इसलिए हम निरंतर इस स्तंभ में जोर देते रहते हैं कि स्वतंत्रता प्राप्त होने के उछाह में हमें यह भ्रम हो गया कि अब स्वयमेव देश की सामाजिक समस्याएँ सुलझ जाएँगी। हमारे समाज-सुधार, सामाजिक पुनर्जागरण, सामाजिक नवोत्थान की प्रक्रिया ही अधूरी रह गई, जिसका दुष्परिणाम देश आज भुगत रहा है। अधिकतर सामाजिक सुधारवादी संगठन ढीले हो गए, निष्क्रिय हो गए अथवा केवल एक विषय को लेकर चल पड़े। एक और नवजागरण की आवश्यकता है। राजनेताओं को इसके लिए समय कहाँ? राजनैतिक दल कभी-कभी घड़ियालू आँसू बहा लेते हैं। हमारे देश के बड़े-बड़े मठाधीश, शंकराचार्य आदि अपने अरबों की संपत्ति के प्रबंधन में व्यस्त या चैन की नींद सो रहे हैं। कभी-कभी अखबारों और टी.वी. पर नसीहत देते दिखाई दे जाते हैं, जिसे देखकर लोग टी.वी. बंद कर देते हैं। वे स्वयं जनता और सरकार से अपने आडंबरी जीवन-शैली में सम्मान के भूखे हैं। कुछ हैं—रामफल, तथाकथित सच्चा सौदावाला गुरमीत सिंह, आशाराम जैसे अनेक भेड़िये, जिनकी करतूतों का पर्दाफाश हो गया है। सामाजिक पुनरुत्थान के लिए कहाँ से लाएँ राजा राममोहन राय, स्वामी दयानंद, स्वामी विवेकानंद, ज्योतिबा फूले, आंध्र के वीर शिलिंगम, ईश्वरचंद्र विद्यासागर, नारायण गुरु, महात्मा गांधी जैसे जीवट के मार्गदर्शक, जिनकी कथनी-करनी में भेद नहीं और जो जनोद्धार के लिए अपने जीवन को होम देने की क्षमता रखते थे। ऐसे समय में वे समाज-सुधार के प्रति समर्पित थे, जब शासन विदेशी था, रजवाड़े दासानुदास थे और आज की तरह प्रचार के साधन भी नहीं थे। 'एकला चलो' उनके जीवन का मूलमंत्र था। अथक आत्मविश्वास और जनोत्थान की प्रेरणा ही उनके संबल थे। जिसे हम भक्तिकाल कहते हैं, उसके संत और महात्मा किस तरह दक्षिण, उत्तर, पश्चिम से पूर्व तक

घूम-घूमकर जन-जागरण का प्रयास करते रहे। किसका-किसका नाम लिया जाए। यह लंबी कहानी है। अब तो केवल हर नागरिक को विचार करना है, प्रयास करना है, स्वयं में वह परिवर्तन लाए, जो समाज में लाना आवश्यक है। निज प्रयास और निर्भीकता ही अब पथ-प्रदर्शक हो सकते हैं। वे ही साधन और साध्य हैं पुनरुत्थान के।

सबरीमाला में चुनाव क्यों?

आजकल एक विचित्र बात देखने में आ रही है—घोर विरोध शीर्ष न्यायालय के निर्णय सबरीमाला मंदिर में १० से ५० वर्ष की महिलाओं के प्रवेश के विषय में। महिलाओं के समता, समानाधिकार और मौलिक अधिकारों का सवाल है। सब मंदिरों में उनको जाने का अधिकार होना चाहिए, यह महिलाओं और सब पढ़े-लिखे वर्ग की माँग रही है। मुसलिम, ईसाई, पारसी आदि सभी धर्मों की अनुयायी महिलाओं में समता की माँग है। मुंबई में मुसलिम महिलाओं को हजरत अली की मजार में जाने की सुविधा संघर्ष के बाद मिली। इसी प्रकार लंबे संघर्ष के बाद महाराष्ट्र के कई मंदिरों में महिलाओं के प्रवेश पर से अदालत द्वारा निषेध हटा। अब केरल में शीर्ष न्यायालय के निर्णय का विरोध महिलाओं द्वारा हो रहा है। कहा जाता है कि गुलाम को अपनी जंजीरों से प्यार हो जाता है। पिंजड़े का तोता उड़ना नहीं चाहता।

शायद विरोध का कारण वहाँ की कम्युनिस्ट सरकार के कार्य करने के ढंग का एह प्रकार से विरोध है। विरोध की राजनीति में जाना अनावश्यक है। मंदिर खुल जाने पर भी सबरीमाला में महिलाएँ जा नहीं पा रही हैं, सच्चाई यह है किस प्रकार से राज्य सरकार शीर्ष न्यायालय के निर्णय का अनुपालन करवा पाएगी, यह विकट समस्या हो गई है। जबरदस्त तनाव है। आवश्यकता सुबुद्धि, आत्म-नियंत्रण और संतुलन की है, ताकि शांति बनी रहे।

कार्यपालिका का दायित्वमान

एक और प्रश्न ध्यान देने योग्य है। ऐसा मालूम होता है कि प्रशासन में चुस्ती की जगह सुस्ती और सावधानी की जगह लापरवाही घर करती जाती है। आए दिन उच्च न्यायालय और शीर्ष न्यायालय काफी सख्त एवं चुभती हुई टिप्पणियाँ करते दिखते हैं, जब जनता की अभाव और अभियोग विषयक याचिकाएँ न्यायालयों के सामने आती हैं। दिल्ली में कूड़ा न हटाने के मामले में कहना पड़ा कि उसे उप-राज्यपाल के यहाँ क्यों न इकट्ठा करके डाला जाए! यह इस बात का परिचायक है कि अदालत भी खिसियाहट महसूस करती हैं कि उनके आदेशों की अवहेलना हो रही है। सरकार ने सर्वोच्च न्यायालय से कहा था कि आरोपी विधायकों और सांसदों के मुकदमे का निपटारा शीघ्र होना चाहिए। शीर्ष अदालत ने जल्दी निपटारे के लिए विशेष अदालतें, फास्ट ट्रैक कोर्ट्स स्थापित करने के लिए कहा। कुछ दिनों के बाद शीर्ष न्यायालय को सरकार को लताड़ना पड़ा कि केवल बारह ऐसी अदालतों की स्थापना हुई, जो बिल्कुल नाकाफी हैं। अतएव शीर्ष न्यायालय को फिर एक तारीख निश्चित करनी पड़ी कि उक्त तारीख तक ऐसी अदालतें स्थापित होनी चाहिए। उच्च न्यायालय और शीर्ष न्यायालय को समय-समय पर धमकी देनी पड़ती है कि यदि अबकी कोताही हुई तो राज्य के मुख्य सचिव, डी.जी.पी. अथवा केंद्र के गृह सचिव को पूरी जानकारी स्वयं आकर देनी पड़ेगी। इन सबसे शासन की किरकिरी होती है। जनता की दृष्टि में अधिकारियों की विश्वसनीयता और रुतबे में गिरावट आती है। इस विषय में राज्य सरकारों और केंद्रीय मंत्रालयों को अधिक सावधान व संवेदनशील होना चाहिए। इन न्यायालयों के क्या आदेश हैं, उनके अनुपालन का दायित्व जिन अधिकारियों पर है, उन पर अंकुश लगाना चाहिए। यही नहीं, चूँकि जनता के अभाव-अभियोगों की ओर इन मामलों से संबंधित अधिकारी ध्यान नहीं देते, बाहर के दवाब के कारण अथवा भ्रष्टाचार के कारण, और उच्च अधिकारी तक उनकी पहुँच नहीं हो पाती है, अतएव जनता भी सोचती है कि केवल अदालत का ही सहारा है। वकीलों की कमी नहीं, उनकी पौ बारह है। बिना इजाजत के मकान बनाना, सरकारी जमीनों पर कब्जा कर लेना, खतरेवाले पुराने मकानों को न गिराना आदि सैकड़ों ऐसे मामले हैं, जो पुलिस तथा स्थानीय अधिकारियों के नाक के नीचे होते हैं, पर कोई परवाह नहीं करता। जब बड़ा हादसा हो जाता है, तब प्रशासन मीडिया या अदालत की चपत के बाद कुछ समय के लिए हरकत में आते हैं, और इसके बाद फिर कुंभकर्णी नींद अगली दुर्घटना तक। इसकी आखिरकार जिम्मेदारी सत्तारूढ़ विभागीय अधिकारियों और मंत्रियों की ही है। न्यायपालिका लक्ष्मण रेखा का उल्लंघन कर रही है, यह रोना आखिर कब तक चलेगा। कभी-कभी ऐसा आभास होता है कि देश में शासन न्यायपालिका ही करेगी, विधायिका और कार्यपालिका केवल न्यायपालिका का मुँह ताकेंगी और उसकी लताड़ की अनसुनी ही करेंगी। न्यायपालिका का निरंतर हस्तक्षेप सुशासन का स्थायी रास्ता नहीं हो सकता है। आवश्यकता है कार्यपालिका को विशेष आत्मावलोकन और आत्ममंथन करने की।

पिछली सदी के चौथे दशक में हम इलाहाबाद विश्वविद्यालय के विद्यार्थी थे। विश्वविद्यालय खासकर हॉस्टलों में क्लब एवं एसोसिएशन होते थे। समय-समय पर मुख्य न्यायपालिका से विशिष्ट व्यक्तियों को मुख्य अतिथि के रूप में आमंत्रित किया जाता था। कभी वे किसी गोष्ठी के अध्यक्ष होते थे, कभी किसी विषय पर भाषण देते। इलाहाबाद में विश्वविद्यालय के शिक्षकों के अतिरिक्त बौद्धिक लोगों का तबका था बार में, यानी प्रसिद्ध वकीलों में अथवा हाई कोर्ट के जजों में। कभी-कभी पं. हृदयनाथ कुंजरू जैसे समाजसेवी और राजनेता भी उपलब्ध हो जाते थे। उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों को अकसर आमंत्रित करते थे। वे सत्ता के प्रतीक और विद्वत्ता के भी। उनका कई विषयों पर भाषण होता था विद्वत्तापूर्ण और स्पष्ट। मुकदमों की सुनवाई पर अनावश्यक टीका-टिप्पणी भी नहीं होती थी। व्यर्थ की नोक-झोंक की खबरें नहीं के बराबर होती थीं। इसी प्रकार कभी न्यायाधीशों को साक्षात्कार देते या प्रेस को कुछ कह रहे हों, यह देखने में नहीं आया। अदालत में सुनवाई के समय वे वकीलों से यदि आवश्यक हुआ स्पष्टीकरण माँगेंगे। किंतु किसी प्रकार की टीका-टिप्पणी, जो विवादित मामले से संबंधित हो, न सुनने को मिलती थी, न देखने को। न्यायालय के निर्णय में ही उनके विचार जनमे और पढ़ने को मिलते थे। पर अब परिदृश्य बदलता जा

रहा है, ऐसा मालूम होता है। अनेक विषयों पर न्यायाधीश अदालत के बाहर के भाषण होते हैं। कभी-कभी विवादित मसले पर आलेख भी प्रकाशित होते हैं। साक्षात्कार समाचार-पत्रों में और टी.वी. पर देखने को मिलते हैं। संविधान के लागू होने पर प्रारंभ में यह देखने को नहीं मिला। आपातकाल के बाद से शायद संवैधानिक न्यायालय, हाईकोर्ट और सुप्रीम कोर्ट अधिक मुखर हो गए। शायद यह लोकतंत्र की माँग हो। यह भी कहा जा सकता है कि न्यायाधीश संभवत: अपने अभिव्यक्ति के अधिकार का ही उपयोग कर रहे हैं, जो वे जन-साधारण को उपलब्ध कराते हैं। हो सकता है कि लोकतंत्र में ऐसा अपेक्षित और उचित हो। अब ऐसा नहीं है कि न्यायाधीश कम दिखाई दें या कम सुनाई दें। अब वे दिखते भी काफी हैं तथा और सुनाई भी काफी देते हैं।

गांधी को खोजे कहाँ?

महात्मा गांधी की १५०वीं जयंती का समारोह २ अक्तूबर से प्रारंभ हो गया है। केंद्र सरकार का अपना कार्यक्रम है। राज्य सरकारें भी अपने कार्यक्रम बना रही हैं। हर प्रकार के संस्थान, शिक्षण संस्थाएँ और सिविल सोसाइटी (नागरिक समाज) की संस्थाएँ भी अपने-अपने ढंग से गांधीजी की १५०वीं जयंती मनाने का आयोजन कर रहे हैं। कुछ पूरे वर्ष हर मास किसी प्रतिष्ठित विद्वान् द्वारा एक जन-विषयक भाषण आयोजित करेंगे। २ अक्तूबर के उपरांत जो समाचार प्रकाशित हुए हैं, उससे भविष्य में होनेवाली गतिविधियों की झलक दिखाई देती है। नेताजी सुभाष चंद्र बोस ने द्वितीय विश्वयुद्ध के समय राष्ट्रपिता के रूप में गांधीजी को संबोधित किया था, उसमें बड़ी सार्थकता है। अमरीका की प्रसिद्ध 'टाइम' मैगजीन ने १९३० में नमक सत्याग्रह के बाद उनको 'मैन ऑफ द इयर' का दर्जा दिया। अमरीका में रेवरेंड जे.एच. होम्स ने १९२० में ही उनको विश्व का सबसे महान् व्यक्ति घोषित किया था। महात्मा गांधी ने भारतीय मानस पर एक विशेष छाप छोड़ी। इसको परिभाषित करना कठिन है। कोई भी प्रश्न चाहे समाज का हो या व्यक्ति का, ऐसा नहीं है कि गांधीजी ने उस विषय पर अपने विचार प्रकट न किए हों। जो भी उनको पत्र लिखता, उसका वह उत्तर देते और उसे सभी के जानने के लिए प्रकाशित भी कर देते थे। भाषणों और अपने समाचार-पत्रों में वे भाँति-भाँति के प्रश्नों और शंकाओं पर विचार प्रकट करते।

उनका समग्र साहित्य १०० ग्रंथों में छपा है। नई सामग्री फिर भी निकलती रहती है। उनके कृतित्व, व्यक्तित्व और विरोध विचारों के विषय में भी काफी साहित्य है। संयुक्त राष्ट्र संघ ने २ अक्तूबर को 'अंतरराष्ट्रीय अहिंसा दिवस' घोषित किया है। वैसे दिलचस्प बात है कि जहाँ तक नोबल शांति का पुरस्कार न टालस्टॉय को दिया गया और न महात्मा गांधी को, जो पिछली सदी के सबसे बड़े शांतिदूत रहे थे। जिन्हें शुद्ध गांधीवादी कहा जाता था, वह पीढ़ी तो कब की बीत गई। फिर भी अंतरराष्ट्रीय स्तर पर और देश में भी गांधी की देन की चर्चा होती रहती है। इस वर्ष शायद यह और अधिक घनीभूत ढंग से होगी।

प्रतिदिन देश में व्याप्त विसंगतियाँ और विकृतियाँ स्वाभाविक रूप से प्रश्न प्रस्तुत करती हैं कि गांधी को कहाँ खोजा जाए। हर क्षेत्र में विडंबनाएँ दिखाई देती हैं। यह मानना पड़ेगा कि प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी का स्वच्छता अभियान काफी हद तक कामयाब रहा है। इसकी उपयोगिता का भाव जन-साधारण में हो रहा है। बालक-बालिकाओं में स्वच्छता के प्रति आकर्षण उत्पन्न हो रहा है। यह मान लेना कि अभियान का उद्देश्य पूरा हो गया है, केवल आत्मप्रवंचना होगी। समस्या विकट और विशाल है। अभियान जारी रखना होगा। इसका सीधा संबंध स्वास्थ्य से है। शौचालय और मूत्रालय निर्माण की निगरानी निरंतन होनी चाहिए। इधर एक विसंगति है कि अभी भी जगह-जगह से गंदगी होने के समाचार मिलते हैं। यही नहीं, शहरों में सीवर, बंद नालियाँ साफ करने में गरीब सफाई कर्मचारियों की जानें प्रतिवर्ष जाती हैं। यह संदेहास्पद है कि राज्य सरकारें या म्यूनिसपैलिटी इन दुर्घटनाओं से वास्तव में चिंतित हैं। इसी प्रकार कूड़ा-कचरा के अंबार भी जगह-जगह दिखाई देते हैं, जन-साधारण जानता है कि कौन इसके लिए उत्तरदायी है। वह फिर भी अपने को असहाय पाता है। इसका एक उपाय है, जिसे Associational Democracy कहते हैं, जिसमें सिविल सोसाइटी सक्रिय होकर जवाबदेही माँगेगी। बात Participating Democracy की होती है, यानी जन की भागीदारी। यह एक जुमला बन जाता है, सत्यता नहीं। वास्तविकता नहीं है। केवल चुनाव के पहले ही नेता जनता की खुशामद में जाते हैं। यदि निरंतर संपर्क रखें तो तरह-तरह की यात्राओं की न आवश्यकता रहे, न धन का अपव्य हो।

कुछ उदाहरण लीजिए, जिससे पता चलता है कि कितनी सामाजिक कुरूपताएँ और विद्रूपताएँ व्याप्त हैं। गांधी छुआछूत को समाज का कोढ़ कहते थे। इस रोग का निदान वे स्वराज प्राप्ति से अधिक महत्त्व का कहते थे। अब भी समाज में अनटचेबिलिटी, अस्पृश्यता भयंकर रूप में व्याप्त है। स्कूलों में अछूत और दलित अलग बैठाए जाते हैं तथा तरह-तरह के अत्याचार होते हैं। वे शादी में घोड़े पर नहीं बैठ सकते, वे अपने गाँव से अपनी बरात का जुलूस नहीं निकाल सकते हैं। यद्यपि संविधान के अनुसार छुआछूत समाप्त हो गई है। उनसे मरे जानवरों के उठाने की अपेक्षा की जाती है और फिर उनकी पिटाई होती है कि गाय को उन्होंने मार दिया। वे धर्म-परिवर्तन कर लें तो उनकी तरफ तथाकथित उच्च वर्ग के लोग आँख उठाने की हिम्मत नहीं कर सकते। उनकी महिलाओं और बालिकाओं के साथ ज्यादतियाँ होती हैं, पर पुलिस आँख मूँद लेती है।

वैसे भी देखिए कि कैसा सामाजिक विघटन हो रहा है। दो साल की बच्चियों से लेकर वृद्ध महिलाओं के साथ बलात्कार के समाचार नित-प्रति समाचार-पत्रों में पढ़ते हैं। निरीह बच्चियों के साथ बलात्कार और फिर हत्या। भ्रूण हत्या का सिलसिला जारी है। नवजात बच्चियाँ कूड़े के ढेर पर पाई जाती हैं, कभी मरी, कभी साँस लेती हुई। यह दशा है देश में, जहाँ महिलाओं को देवीस्वरूप माना गया है। प्रधानमंत्री मोदी ने 'बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ' का नारा दिया, किंतु उनकी सुरक्षा नहीं। स्कूल, कॉलेज जाते समय वे यौन उत्पीड़न की शिकार होती हैं। सजा दिलाने की बात तो दूर, प्राथमिकी लिखाने में भी पुलिस आनाकानी

करती है। महात्मा गांधी महिलाओं को परदे से निकालकर जन-जीवन में लाए। आशा बँधी कि वे समाज का नेतृत्व करेंगी, स्वावलंबी होकर देश के विकास में भागीदार होंगी, पर उनको चिंता है अपनी सुरक्षा और इज्जत बचाने की।

अमरीका के बाद अब यहाँ भी 'मी टू' का आंदोलन प्रारंभ हो गया है। सर्वोच्च न्यायालय ने कामकाजी स्थानों पर महिलाओं की सुरक्षा के नियम बनाए थे, क्या अनुचित व्यवहार कहलाएगा उसको भी सूचीबद्ध किया था। अब गड़े मुरदे उखाड़े जा रहे हैं, कहाँ तक यह प्रक्रिया जाती है, देखने की बात है। अच्छा हुआ, गंदगी बाहर आ गई है। पढ़ी-लिखी महिलाओं ने हिम्मत की और उनके साथ हुए यौन दुर्व्यवहार के विवरण दिए। पहले आंध्र में एक एक्ट्रेस ने इस मामले को उठाया, पर उसकी अनदेखी कर दी गई। एक वरिष्ठ पत्रकार और मंत्री, यू.पी.ए. के पूर्व मंत्री, कई डायरेक्टर, संगीतज्ञ, प्रसिद्ध अभिनेता आदि के विरुद्ध सोशल मीडिया आदि में शिकायतें आई हैं तथा और भी आ रही हैं। एक मंत्री ने इस्तीफा दे दिया है। मुकदमेबाजी भी शुरू हो गई है। बहुत कुछ मीडिया, लिखित और दृश्य में आ रहा है। आशा कर सकते हैं कि शायद भविष्य में इन गलत गतिविधियों की रोकथाम हो सकेगी। यह तो बात रही शिक्षित, शहरी और मुखर महिलाओं की, पर गाँवों की अशिक्षित, दब्बू व पीड़ित महिलाओं की क्या दु:खभरी कहानी है, उसका पता नहीं? चूँकि एक प्रक्रिया अभी शुरू ही हुई है, अत: अधिक लिखना उचित नहीं है। यह हाल है, जब हम गर्व से कहते हैं कि एक भारतीय महिला राष्ट्र संघ की पहली अध्यक्ष रही है। इंदिरा गांधी एशियाई देशों में दूसरी प्रधानमंत्री रही हैं। कितनी ही महिलाएँ गवर्नर, उच्च न्यायालयों और शीर्ष न्यायालय की सदस्य रही हैं। एक महिला देश की राष्ट्रपति भी बनी। आज एक अनुभवी महिला लोकसभा की सभापति हैं। आज देश की विदेश और रक्षा मंत्री महिलाएँ हैं। विडंबना फिर भी यह है कि देश की महिलाएँ असुरक्षा महसूस करती हैं।

एक विकट प्रश्न है गांधी के आर्थिक व्यवस्था विषयक विचारों का, उसका समय-समय पर विवेचन होगा। पर प्रधानमंत्री मोदी ने हाल में ही कहा है कि बेरोजगारी की समस्या का हल चौथी औद्योगिक क्रांति के उपरांत होगा। यह संभव है, किंतु समस्या यह है कि तकनीक अधिकतर कैपिटल इंटेंसिव होती है, अधिक धन की आवश्यकता होती है। गांधी का कहना है कि भारत जैसे बड़े आबादी वाले देश में आवश्यकता है ऐसी टेक्नोलॉजी की, जो लेबर इंटेंसिव हो, अर्थात् जिसके द्वारा अधिक-से-अधिक लोग काम में खप सकें। चौथी औद्योगिक क्रांति यदि बेरोजगारी दूर कर सके तो शुभ है। समस्या यह है कि नई टेक्नोलॉजी के सफल होने में एक गैप होता है, अंतराल होता है। उस समय बेरोजगारी और बढ़ती है। नए-नए कौशल विकसित होने में समय लगता है। अंतराल की कठिनाइयाँ अर्थव्यवस्था में बहुत पेचीदगियाँ पैदा करती हैं। क्या हमने उसका कुछ हल सोचा है?

राजनीति सिद्धांतहीन होती जा रही है, भ्रष्टाचार में कमी होती नजर नहीं आती, तरह-तरह के माफिया उभर रहे हैं, बाहुबलियों और धनवानों का बोलबाला है। दादागिरी पर कोई नियंत्रण नहीं है। दिन-दहाड़े बैंक और दुकानें लूटी जाती हैं। अराजकता बढ़ रही है। छोटे और बड़े अपराधों में वृद्धि हो रही है। कभी-कभी यह महसूस होता है कि देश के रहनेवाले समुदायों में मनमुटाव बढ़ रहे हैं। हिंदू, मुसलमान एवं अन्य अल्पसंख्यक समुदायों के बीच तनाव का वातावरण बढ़ता जाता है। राजनीति अपने स्वार्थ में आहुति डालने का काम करती है। सौहार्द आए कहाँ से? लगता है कि धीरे-धीरे प्रशासन अपनी सार्थकता और विश्वसनीयता खो रहा है। उधर मादक पदार्थों की बिक्री बढ़ती जाती है। तरह-तरह के ड्रग नई पीढ़ी को बरबाद कर रहे हैं। गांधी ने इन सब विषयों पर रोशनी डाली है। वातावरण और पॉल्युशन भी गांधी की दूरदृष्टि से बचे नहीं हैं। बढ़ती आर्थिक विषमताएँ और बढ़ती जन आकांक्षाओं में एक टकराव तथा तनाव बढ़ता जाता है। सादा जीवन और मितव्ययिता केवल कहने की बाते हैं। महिलाएँ और बच्चे कुपोषण के शिकार हैं। लड़कियाँ दिल्ली जैसे शहर में और गाँवों में भी रोटी के बिना मर जाती हैं। प्रशासन कारणों की जाँच का आश्वासन देता है। यही हाल स्वास्थ्य सुविधाओं या असुविधाओं का है। लाश को घरवाले किसी तरह घसीटकर अथवा सिर पर रखकर ले जाते हैं। तसवीरें छपती हैं, पर प्रशासन आँख मूँद लेता है, अथवा क्यों ऐसा होता है, जाँच होगी, ऐसा कहा जाता है। अधिक मुद्दों की चर्चा करना व्यर्थ है। पूरा परिदृश्य कभी-कभी एक निराशा और अवसाद का वातावरण पैदा करता है, इसलिए सवाल उठता है। गांधी को कहाँ ढूँढ़ा जाए। उसे अंतर्मन में ही खोजना होगा। गांधी का लेखन और कथन इसमें सहायक है। गांधी में न जड़ता है, न रूढ़िवादिता।

वे अपनी गलती स्वीकार करने में हिचकते नहीं। यह भी कहते हैं कि उनके विचार समय और परिस्थितियों के साथ बदलते हैं, अत: जो उन्होंने किसी विषय पर जिस बात को कहा, वही मान्य होना चाहिए। उसे ही उनका विचार माना जाए। इसमें कोई विरोधाभास नहीं। वास्तव में गांधी साहित्य के अवलोकन में ही अवसाद या नैराश्य की भावना का काट दिखाई देता है। गांधी केवल एक व्यक्ति नहीं, एक दृष्टि है। उनके सुखी, समरस और समृद्ध नए भारत का अपना स्वप्न है। इसे समझना और आत्मसात् करना आवश्यक है। गांधी साहित्य के मंथन में ही भविष्य के भारत की, गांधी की कल्पना का मृत्युंजय मंत्र निहित है। कहावत है कि माँ गंगा की आराधना गंगाजल से ही होती है। गांधी का सम्मान उनके विचारों को समझने और अनुसरण से होगा। एक फ्रेंच विचारक मिशलेट ने अपनी पुस्तक 'The Bible of Humanity' में लिखा है—'Man must rest, get his breath, refresh himself at the great living wells, which keep the freshness of the eternal.'

गांधी की विचार सरणी ऐसा ही जीवंत स्रोत है जो चिरंतन, शाश्वत प्राणवान, ताजगी और ऊर्जा प्रदान करती है। गांधी साहित्य इसी मंतव्य की पूर्ति, गांधी की प्रासंगिकता और सार्थकता को व्यक्त एवं प्रतिष्ठित करने का सशक्त तथा सुलभ साधन है। पर उसके लिए कितनों के पास समय है अथवा ललक है?

त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी

(त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी)

अमन के रक्षक

● श्रीरामवृक्ष बेनीपुरी

सुप्रसिद्ध साहित्यकार श्रीरामवृक्ष बेनीपुरी का जन्म २३ दिसंबर, १८९९ को बेनीपुर, मुजफ्फरपुर (बिहार) में हुआ। स्वाधीनता सेनानी के रूप में लगभग नौ साल जेल में रहे। कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी के संस्थापकों में से एक। १९५७ में प्रजा सोशलिस्ट पार्टी से विधायक चुने गए। दिसंबर १९५९ में पक्षाघात। ७ सितंबर, १९६८ को निधन। उन्होंने तरुण भारत, किसान मित्र, गोलमाल, बालक, युवक, कैदी, लोक-संग्रह, कर्मवीर, योगी, जनता, तूफान, हिमालय, जनवाणी, चुन्नू-मुन्नू तथा नई धारा पत्रों का संपादन किया।

उन्होंने चिता के फूल (कहानी संग्रह); लाल तारा, माटी की मूरतें, गेहूँ और गुलाब (शब्दचित्र-संग्रह); पतितों के देश में, कैदी की पत्नी (उपन्यास); सतरंगा इंद्रधनुष (ललित निबंध); गांधीनामा (स्मृतिचित्र); नया आदमी (कविताएँ); अंबपाली, नई नारी, सीता की माँ, शकुंतला, संघमित्रा, अमर ज्योति, तथागत, सिंहल विजय, रामराज्य, नेत्रदान, गाँव का देवता, नया समाज और विजेता (नाटक); हवा पर, वंदे वाणी विनायकौ, अत्र-तत्र (निबंध); मुझे याद है, जंजीरें और दीवारें, कुछ मैं कुछ वे (आत्मकथात्मक संस्मरण); पैरों में पंख बाँधकर, उड़ते चलो उड़ते चलो (यात्रा साहित्य); शिवाजी, विद्यापति, लंगट सिंह, गुरु गोविंद सिंह, रोजा लग्जेम्बर्ग, जय प्रकाश, कार्ल मार्क्स (जीवनी); लाल चीन, लाल रूस, रूसी क्रांति (राजनीति); इसके अलावा बाल साहित्य की दर्जनों पुस्तकें तथा विद्यापति पदावली और बिहारी सतसई की टीका आदि विपुल साहित्य रचा। उनकी एक चर्चित बाल-कहानी यहाँ दे रहे हैं।

दुनिया की सभी तरक्की अमन पर निर्भर है। जहाँ उथल-पुथल, लूटखसोट, मारपीट

है, वहाँ क्या सुख, क्या सभ्यता।

हर राज्य की ओर से जनता के बीच अमन रखने की कोशिश की जाती है और अमन के रक्षक के रूप में पुलिस का अच्छे-से अच्छा बंदोबस्त किया जाता है।

अंग्रेजी राज्य बहुत बड़ा है; तो इंग्लैंड की पुलिस भी संसार की सभी पुलिसों से अधिक भलेमानस और फरमाबरदार समझी जाती है। जो यात्री लंदन पहुँचता है, वहाँ की पुलिस की सज्जनता और तत्परता देखकर दंग रह जाता है।

वहाँ पुलिस का जो प्रबंध है, उसका विधाता रौबार्ट पील नामक एक सज्जन समझे जाते हैं। जिस समय सर रौबर्ट ने ८२९ में पुलिस के संगठन की योजना पेश की, जिसका समूचे देश में विरोध हुआ। एक अखबार ने लिखा—इससे जनता की स्वतंत्रता में बाधा पड़ेगी। एक ने कहा—यह अपने किसी पिट्ठू को गद्दी पर बिठाना चाहता है! किंतु आज सभी सर रौबर्ट की दूरदर्शिता की तारीफ करते हैं।

अंग्रेजी पुलिस का काम केवल बदमाशों को पकड़ना या सवारियों पर नियंत्रण रखना ही नहीं है। लंदन की पुलिस ने एक वर्ष में क्या किया, इसी से पता चल जाएगा कि वहाँ की पुलिस क्या-क्या करती है और कितने बड़े परिमाण में—

२६९६५ व्यक्तियों के खो जाने की रिपोर्ट पुलिस में की गई, जिनमें १०३७८ व्यक्तियों को खोजकर उनके संबंधियों से मिलाया गया। ७०८ व्यक्तियों को आत्महत्या करने से बचाया गया। २९१४ जगहों में आग लगने पर पुलिस पहुँची और मदद की, जिनमें १८१ जगहों की आग तो उसने अकेले ही बुझाई। २७२५० घरों को खुला हुआ देखा और उन्हें बंद करवाया। २०५ बिगड़ैल घोड़ों को सड़क पर बेतहाशा भागते हुए पकड़कर काबू किया और ३४८ बदहोश फौजियों को गिरफ्तार कर छावनी में दाखिल किया। ४१११४ भटकते हुए कुत्तों को पकड़ा जिनमें से ८००३ को उनके मालिकों के पास पहुँचाया। ५८३९ फेरीवालों को सर्टिफिकेट दिया गया और १३५ की सनदें जब्त की गईं। इन सब कामों के अलावा १०९७८७ अपराधियों को गिरफ्तार किया।

स्त्रियों और बच्चों की देखरेख के लिए वहाँ स्त्री-पुलिस भी है।

इसके अतिरिक्त 'स्कॉटलैंड यार्ड' के नाम से वहाँ खुफिया पुलिस का भी बहुत जबरदस्त संगठन है। वहाँ की खुफिया पुलिस केवल राजनीतिक बातों का ही पता नहीं लगाती, वरन् चोरी, डकैती, खून, दगाबाजी, गिरहकट आदि का ऐसी चतुराई से पता लगाती है कि वाह-री-वाह! खुफिया पुलिस।

फ्रांस की पुलिस का संगठन इंग्लैंड से बिलकुल जुदा है। वहाँ की पुलिस सैनिक ढंग की है। उसके दो भाग हैं। एक का काम है अपराधियों का पता लगाना, उसके खिलाफ गवाह जुटाना और फिर उन्हें अदालत को सौंपना। दूसरा भाग, सड़कों एवं दूसरी जगहों पर शांति रखना है। भोजन की निगरानी, बाजार-भाव को ठीक रखना और वक्त जरूरत पर जनता की सेवा के लिए मुस्तैद रहना—ये भी उसके काम हैं।

इसके अलावा वहाँ सशस्त्र पुलिस भी है—जिसमें कुछ पैदल और

कुछ घुड़सवार हैं। सशस्त्र पुलिस की पोशाक नीली या खाकी होती है। पाजामे का रंग भी यही होता है और सिर पर एक टोपी होती है, जिसे 'केपी' कहते है। उसे एक-एक पिस्तौल भी दी जाती है। साधारण पुलिस की पोशाक इसी तरह की है, किंतु कुछ गहरे रंग की होती है। फ्रांस की खुफिया पुलिस अजहद चालाक समझी जाती है। भेष बदलने में उसका सानी मिलना मुश्किल है। केवल पोशाक, आवाज और चलने के ढंग में हेर-फेरकर वह बड़े-बड़े काँइयों की आँखों में भी धूल झोंकती है।

स्पेन की पुलिस यूरोप की सबसे अच्छी पुलिस समझी जाती है; गर्चे स्पेन, यूरोप के पिछड़े हुए देशों में गिना जाता है। पुलिस का संगठन फ्रांस के ही समान है। स्पेन में राहजनी कल तक एक साधारण बात समझी जाती है—किंतु इस पुलिस ने उसका खात्मा ही कर डाला है। संसार के सभी देशों की अपेक्षा, वहाँ की पुलिस को अधिक अख्तियार दिए गए हैं। किंतु इन अख्तियारों को वे कभी बेजा इस्तेमाल नहीं करते। इनकी संख्या ३०००० है और ये दो की तादाद में—जोड़ा बनाकर—समूचे देश में घूमा करते हैं। नगरों के लिए वहाँ अलग पुलिस है।

इटली की पुलिस के पाँच दर्जे हैं, जिनमें मुख्य है काराबिनियारी नामक दर्जा। इसके जवान गाढ़े-नीले रंग की चुस्त पोशाक पहनते हैं। हाँ, पजामे के निचले हिस्से में लाल धारी होती है। इस दर्जे में ३०००० जवान हैं, जो शहर और देहात दोनों में बिखरे हुए हैं। इन्हें जरूरत होने पर फौज में भी भेजा जा सकता है।

जर्मनी की नागरिक-पुलिस सैनिक है। इसकी पोशाक गाढ़े नीले रंग की होती है। सिर पर चमड़े का शिरस्त्राण, जिसमें चमकते बटन लगे होते हैं। लंदन की पुलिस के बाद जर्मनी की पुलिस ही सबसे सुगठित और कार्यशील समझी जाती है।

अमेरिका की पुलिस-प्रणाली कुछ अजीब ढंग की है। अमेरिका का संयुक्त राज्य, कितने ही छोटे-छोटे राज्यों के एकत्रीकरण का नाम है। वहाँ का हर राज्य अपनी-अपनी अलग-अलग पुलिस रखता है। हर प्रमुख नगर की भी अपनी पुलिस है। वहाँ के बड़े-बड़े शहरों—जैसे न्यूयॉर्क आदि में लंदन की तरह का पुलिस-संगठन है। किंतु, जहाँ लंदन का पुलिस कमिश्नर बादशाह के द्वारा भरती किया जाता है, वहाँ इन नगरों के पुलिस कमिश्नर को वहाँ का मेयर भरती करता है और वह भी केवल दो वर्षों के लिए। पुलिस के वहाँ कई दर्जे भी हैं। पहले गश्त देने का काम करना होता है, तब पहरा देने का, फिर सार्जेण्ट का और उसके बाद कप्तान का। कप्तान के बाद इन्सपेक्टर और सबसे ऊपर पुलिस का चीफ। तरक्की करते-करते कोई भी गश्ती-पुलिस का जवान एक दिन चीफ हो सकता है। न्यूयॉर्क की पुलिस का वेतन भी लंदन की पुलिस से अधिक है।

इनके अलावा इनके हथियारों में भी फर्क है। लंदन की पुलिस एक छोटा-सा Truncheon और एक सीटी लिए अपनी ड्यूटी बजाती है, किंतु न्यूयॉर्क की पुलिस को एक राज की एक गदा और एक रिवाल्वर आत्मरक्षा के लिए मिलती है। जरूरत पड़ने पर गदा और रिवाल्वर के इस्तेमाल का पूरा अधिकार न्यूयॉर्क की पुलिस को है—इसलिए वहाँ के उचक्के और बदमाश उनसे खूब भय खाते हैं। यद्यपि वहाँ की पुलिस इन हथियारों का बहुत ही कम प्रयोग करती है। वहाँ पुलिस के ऐसे बूढ़े लोग हैं जिन्होंने जिंदगी में कभी भी इन हथियारों का एक बार भी इस्तेमाल नहीं किया।

स्त्री-पुलिस भी वहाँ १९१३ से कायम की गई है—जिसकी खास पोशाक है और जिसे पुरुष-पुलिस के समान ही वेतन मिलता है।

किंतु संसार की सबसे अच्छी पुलिस तो समझी जाती है कनाडा की घुड़सवार-पुलिस। चार भागों में विभक्त होकर यह देश के चार बराबर हिस्सों में अमन-चैन की रक्षा अपनी मुठ्ठी में लिए हुए है। पहले इसकी पोशाक बैंजनी थी। सिर पर उजला टोप—कमर में चमकीले कारतूस की पेटी से लटकती रिवाल्वर! किंतु अब उनकी पोशाक लाल है। सुनहरी धारी का चुस्त पाजामा और खाकी टोप।

वहाँ की पुलिस को सबसे पहले गोली चलाकर कैदी को 'जिंदा या मरा' लाने का अधिकार नहीं है। यदि किसी कैदी को वह मार डाले, तो उसे तीन महीने की सजा होती है और यदि कैदी भाग जाए तो भी उतने ही दिनों की। इसलिए वहाँ की पुलिस कभी-कभी बड़ी विचित्र करामात कर दिखाती है। एक बार जब एक रेलवे लाइन बन रही थी, वहाँ के कुछ आदि-निवासी लाइन पर आकर डेरा डालकर बैठ गए और हटने से इनकार कर दिया। इतने ही में पुलिस को खबर दी गई। दो पुलिस के जवान आए। आकर उन्होंने उनसे हटने को कहा। किंतु कौन सुने? बस, दोनों जवान आगे बढ़े और अपने बूट की ठोकर से एक खीमे के खूँटे को उखाड़कर उसे गिरा दिया। आदि-निवासी हतप्राय हो उनका मुँह देख रहे थे। किंतु ये दोनों निडरता का अवतार बने, एक-के बाद दूसरा खीमा गिराते रहे। आदि-निवासी जानते थे कि इन पर हाथ उठाने का क्या अर्थ है? अत: वे चुपचाप देखते रहे और आखिर में वहाँ से खिसक गए।

भारतीय पुलिस की पोशाक में भी अलग-अलग प्रांतों में भेद है। बिहार में जहाँ 'लाल मुरेठा' का अर्थ है पुलिस—वहाँ बंबई में पुलिस के लिए 'पीली फाड़ी' का प्रयोग किया जाता है। सरहद की पुलिस को राइफल और संगीन से लैस किया गया है।

दक्षिणी अफ्रीका में वहाँ के तीन हजार हब्शी पुलिस में लिए गए हैं। इन लोगों ने भी अपने को योग्य साबित किया है।

जापान की पुलिस यूरोपियन ढंग से संचालित है। किंतु चीन की पुलिस ढीलीढाली समझी जाती है जो कि घूस भी लेती है। बगदाद की ही तरह मोरक्को की न्यायपद्धति वहाँ के काजी द्वारा संचालित होती है, किंतु वहाँ की पुलिस बड़ी सजग और साहसी समझी जाती है।

यूरोप में सबसे कम पुलिसवाले देश हैं—बेलजियम, नॉर्वे और स्वीडन। किंतु संसार में सबसे कम आइसलैंड में है, वहाँ के लोग इतने शांत और कानून माननेवाले हैं कि वहाँ पुलिस है ही नहीं। यह समझकर कि आखिर राजधानी में पुलिस तो रहनी ही चाहिए; दो लंबे-तगड़े जवान पुलिस के नाम पर रखे गए हैं, जो भड़कीली पोशाक पहने जब-तब इधर-उधर निकल जाते हैं।

कहानी

ईशरदास की वसीयत

• ÙÚ¼ •¤æãÜè

ईशरदास मंडी गए थे, शाक-भाजी लाने।

लौटे तो थैले में आलू, प्याज, टमाटर तो थे ही, साथ ही माथे पर एक डरावना सा गूमड़ भी उभर आया था। दोनों घुटने छिले हुए थे। पाजामा फट गया था। ऐनक टूट गई थी। सिर जैसे चक्कर खा रहा था और सारा शरीर घबराहट के मारे काँप रहा था।

दमयंती ने देखा तो घबरा गई। ''यह क्या कर आए!''

''शाक-भाजी ले आया हूँ।''

''मैं पूछ रही हूँ, माथे पर क्या है?''

''आलू नहीं है तो टमाटर होगा।'' ईशरदास बोले।

दमयंती ने माथा पीट लिया, ''शाक-भाजी तो मैं घर बैठी ठेलीवाले से भी ले लेती। माथे पर गूमड़ तो नहीं पड़ता।...कहीं गिर पड़े थे क्या?''

ईशरदास आकर चारपाई पर ढह गए, ''अब गिर पड़ा तो क्या करूँ। उठकर घर तक तो आ ही गया हूँ।...जमीन पर पड़ा गूमड़ इस टूटी ऐनक से दिखाई ही नहीं दिया, नहीं तो उस हरामी को क्यों अपने माथे से चिपकने देता।...'' और सहसा उनका स्वर बदल गया, ''मेरा दिल घबरा रहा है। जाने का समय आ गया क्या!''

''पिताजी, अब आप शाक-भाजी के लिए मंडी मत जाया कीजिए।'' बहू ने बड़े दुलार से कहा, ''अब आपकी वह अवस्था नहीं रही। गिरते-पड़ते रहेंगे तो किसी दिन कोई बड़ा हादसा हो जाएगा।''

''तुम थैला मत पकड़ाया करो, मैं मंडी नहीं जाऊँगा।'' वे रुके, ''मैं कब मंडी जाता हूँ; वह तो तुम्हारा थैला ही है, जो मुझे ठेल-ठालकर ले जाता है।''

''तो अम्माँ से कहिए कि आस-पास से फल-सब्जी खरीदने को वे मेरा आलस कहकर अपनी सखियों में प्रचारित न किया करें और न उसे मेरी फजूलखर्ची बताया करें। जानती हूँ, थोड़े पैसे अधिक खर्च हो जाएँगे, पर माथे पर गूमड़ तो नहीं पड़ेगा न।''

''मैं क्या कहती हूँ।'' दमयंती भड़क उठी, ''यही तो कि जहाँ दो पैसे बचा सको, बचाओ। तुम्हारे ही बच्चों के काम आएँगे। मैं छाती पर धरकर तो नहीं ले जाऊँगी।...मैं यह तो नहीं कहती कि ससुर को थैला देकर मंडी भेजो और उससे सब्जी में जो पैसे बचें, वे डॉक्टर को भेंट कर दो। पायजामा भी फट गया है। ऐनक भी टूट गई है। उनका खर्च अलग।''

''अब आप से कौन सिर मारे।'' बहू अपने कमरे में चली गई, ''बुढ़िया का माथा ही ठिकाने नहीं है।''

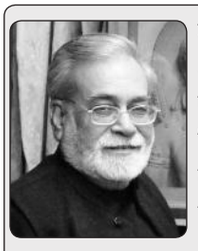

उपन्यास, कहानी, व्यंग्य, नाटक, निबंध, आलोचना, संस्मरण इत्यादि गद्य की सभी प्रमुख एवं गौण विधाओं में नरेंद्र कोहली ने अपनी विदग्धता का परिचय दिया है। उपन्यास श्रृंखला में 'महासमर', 'तोड़ो कारा तोड़ो' तथा रामकथा पर उपन्यास चर्चित। इन्होंने प्रायः सौ से भी अधिक उच्च कोटि के ग्रंथों का सृजन किया है। 'शलाका सम्मान' सहित अनेक सम्मानों से अलंकृत।

जाने क्यों ईशरदास को लगने लगा कि ये सारे लक्षण अब जाल समेटने के हैं।...बाहर निकलेंगे तो कभी पैर में ठोकर लग जाएगी, कभी कोई साइकिल वाला टकरा जाएगा, कभी फुटपाथ आड़े आ जाएगा। कभी आँखों के सामने अँधेरा छा जाएगा। कभी सिर वैसे ही घूम जाएगा और वे लड़खड़ाकर गिर पड़ेंगे।...वे सारा दिन चारपाई पर पड़े, ब्रेन हैमरेज, हार्ट अटैक, सिर फटने, हड्डियाँ टूटने, चोट खाने और पट्टियाँ बँधवाने के ही दृश्य देखते रहे। यदि कूल्हे की हड्डी टूट गई तो यह भी संभव है कि वे पट्टी बँधवाने के लिए डॉक्टर के पास जाने योग्य भी न रहें। कौन ले जाएगा अस्पताल, एंबुलेंस कौन बुलाएगा...जैसे बहू ने कहा है, वैसे ही बेटा भी कहेगा, आप बाहर जाते ही क्यों हैं? चैन से घर में पड़े नहीं रह सकते? हम अपना काम-धंधा देखें या आपकी पट्टियाँ ही करवाते रहें। लोगों के घरों में वृद्ध काम में हाथ बँटाते हैं। और कुछ नहीं तो बच्चों को ही सँभालते हैं...हमारे घर में के वृद्ध हमें डॉक्टरों के पास दौड़ाने और अस्पतालों में टक्करें मारने का प्रबंध करते रहते हैं।

'ऐसे जीवन नहीं चलता ईशरदास।' उनकी आत्मा पुकार रही थी।

अब उनका कोई भविष्य नहीं है। आगे कुछ भी अच्छा होनेवाला नहीं है। व्यक्ति जीवन जीता है तो जीवन का अंतिम अध्याय, में बुढ़ापा भी झेलता है। वह जिया नहीं जाता, झेला ही जाता है।...वे वही झेल रहे हैं। भविष्य में कुछ नहीं धरा। अतीत की स्मृतियाँ ही उनकी पूँजी हैं। बैठे उसे ही याद करते रहें।

वे जैसे किसी गहन स्वप्न में डूब गए।...अतीत अर्थात् सत्या। उसे ही स्मरण करना होगा। जितने दिन उसके साथ बीते, वह ही जीवन था।...और उनके अतीत में क्या धरा है, जैसे किसी बच्चे को कोई मोहक खिलौना देकर छीन लिया गया हो। तब ईशरदास बूढ़े नहीं थे। व्यक्ति बूढ़ा पैदा नहीं होता। जीवन उसे बूढ़ा कर देता है। तब वे सूट पहनते थे, टाई बाँधते थे, तेजी से चुस्त और स्मार्ट लोगों के समान चलते थे। तेज-तर्रार आवाज में बोलते थे।...

कॉलेज की नौकरी करते हुए दो साल हुए थे कि सत्या मिल गई। वह बड़ी तेजी से उनकी ओर बढ़ी। छह महीनों में उन्होंने विवाह कर लिया। तब वे थैला लेकर घिसटते हुए मंडी नहीं जाते थे। उनको और सत्या...दोनों को ही बाहर जाने और बाहर ही खाने का शौक था। बाहर निकलते तो उसी चक्कर में घर का सामान भी खरीद लाते थे।...

सुधीर के जन्म के बाद तो उसे भी प्रेम्यूलेटर में डालकर साथ ले जाते थे। लौटते हुए सुधीर गोद में होता था और प्रेम घर के सामान से लदी होती थी।

तीन साल अच्छे बीते और फिर गुड़िया का जन्म हो गया। गुड़िया के जन्म के बाद ईशरदास को लगा कि सत्या के हारमोन बदलने लगे थे। उसका रस कुछ सूखने लगा था। उसका व्यवहार बदलने लगा था। वह नीरस और शुष्क ही नहीं हो गई, बेहद तुनकमिजाज और झगड़ालू भी हो गई थी। किसी खूसट बुढ़िया के समान...उसके सुंदर मुखड़े पर उनके लिए कोई कोमल रेखा नहीं रह गई थी। उनकी समझ में नहीं आया कि उसमें दोष गुड़िया का था या उनका अपना।

वे सत्या से पूछते रहे; किंतु उसने कभी कोई कारण नहीं बताया।

उनकी खोज जारी रही; किंतु कोई निष्कर्ष नहीं निकला।...और एक दिन वह उनके नाम एक पत्र लिखकर घर छोड़ गई, तब उन्हें पता चला कि उन दोनों की जोड़ी सजती नहीं थी। ईशरदास उसके योग्य नहीं थे। वह परियों जैसी सुंदर थी। और ईशरदास फुटपाथ पर मिलनेवाले साधारण पुरुष थे। हूर और लंगूर वाला किस्सा था।...पर यह सब उसे पहले दिखाई क्यों नहीं दिया, अब वे जान पाए थे कि सत्या अनेक पुरुषों के लिए आकर्षण का केंद्र थी। ईशरदास उसे कभी गुलाब का एक फूल भी भेंट नहीं करते थे और वे पराए पुरुष उसे अच्छी साड़ियाँ, घड़ियाँ और मोबाइल भेंट करते थे। वे उसे गोवा और कश्मीर घुमाना चाहते थे। इंग्लैंड और स्विट्जरलैंड ले जाना चाहते थे और ईशरदास तो अब कनॉट प्लेस भी नहीं जाना चाहते थे। उसके साथ चलना और लंगूर कहलवाना उन्हें पसंद नहीं था।

वे सबकुछ देखते रहे; किंतु इसमें उन्हें कोई भावी संकट दिखाई नहीं दिया। संकट उस दिन दिखाई दिया, जब वह अपने दोनों बच्चों का हाथ पकड़कर एक आई.ए.एस. के साथ चली गई; और उनके हाथ में विवाह-विच्छेद के कागज आ गए।

ईशरदास के मस्तिष्क को जैसे पक्षाघात खा गया। उनकी समझ में नहीं आ रहा था कि वे क्या करें। एक ओर तो वे स्वयं को अत्यंत अपमानित और वंचित पा रहे थे और दूसरी ओर उनका आत्मसम्मान उन्हें सत्या को मनाने से रोक रहा था। जाती है तो जाए। भाड़ में जाए। जब वह आई.ए.एस. उसको वैसा प्यार नहीं देगा, जैसा कि वे दे रहे हैं तो अपने आप रोती हुई लौट आएगी। उस आई.ए.एस. के भी पहली पत्नी से दो बच्चे हैं। सत्या सँभालेगी, चार-चार बच्चों को खेल नहीं है। बसी-बसाई गृहस्थी को छोड़, उठी और चल दी, मूर्खा कहीं की!

उन्होंने समझा था कि यह दो-चार दिनों का नाटक है। लौट आएगी अपने आप। पर वह नहीं लौटी। अब वह एक आई.ए.एस. की पत्नी थी। उसकी बड़ी सी गाड़ी में बच्चों और कुत्ते के साथ घूमती-फिरती थी। कॉलेज भी गाड़ी में ही जाती थी। अपना उपनाम भी बदल लिया था। अब वह श्रीमती मल्होत्रा थी।...और फिर उस आई.ए.एस. से एक बेटा भी पैदा हो गया था। सिद्धार्थ मल्होत्रा। सत्या को अब ईशरदास की तनिक भी आवश्यकता नहीं रह गई थी। ईशरदास को उसकी प्रतीक्षा करना व्यर्थ लगा।...और अब ईशरदास की समझ में यह भी आ रहा था कि स्त्री के बिना जीवन काटना कितना कठिन है।...घर में कोई बात करनेवाला भी चाहिए। अकेले न भोजन बनता है और न खाया जाता है। दिन कट भी जाए तो रात नहीं कटती। स्त्री कैसी भी हो, किंतु पुरुष को उस शरीर की आवश्यकता होती है। ईशरदास के कुछ परिचितों ने घर का काम करने के लिए कोई नौकरानी रखी और वह रसोई से उनके बिस्तर तक की यात्रा तय कर आई। कुछ लोगों ने तो समाज के सामने विवाह भी कर लिया; कुछ रखैल के रूप में रहीं। अब वह बहुत सम्मानजनक हो गया था। उसे 'लिव-इन' कहते थे।

ईशरदास को लगा, नौकरानी को पत्नी अथवा रखैल बनाने से तो अच्छा था कि वे किसी भले घर की साधारण लड़की से विवाह कर लें। उसमें सत्या का सा आकर्षण न खोजें। ज्यादा मीन-मेख में न पड़ें। बाद में जब सुविधा होगी तो वे नौकर या नौकरानी भी रख लेंगे। नौकर और नौकरानी... यदि सुंदर और स्मार्ट पत्नी ही नौकर के साथ भाग जाए तो? यदि सत्या आई.ए.एस. के साथ भाग सकती है तो दूसरी पत्नी नौकर, ड्राइवर या पड़ोसी के साथ भी भाग सकती है। नौकरानी उनके साथ सह-शयन करे या न करे, उन पर लांछन तो लगा ही सकती है। गर्भ किसी और का ले आएगी और उनके सिर मढ़ दे तो उन्हें अपवाद की कालिमा में तो डुबो ही सकती है। नहीं...उन्हें विवाह ही कर लेना चाहिए। पर वे पूर्व-विवाहित थे। उनके दो बच्चे भी थे। यह जानकर उन्हें कौन अपनी बेटी देगा...और इस सूचना को वे छिपाएँगे भी कैसे। कॉलेज और विश्वविद्यालय के इतने लोग सत्या के विषय में जानते हैं। नहीं, वे कोई नया झमेला नहीं चाहते। पर विवाह तो वे करना ही चाहते हैं। कोई प्रौढ़ युवती हो, कोई परित्यक्ता हो, कोई विधवा हो। कोई भी हो किंतु वे नौकरानी रखकर व्यभिचार नहीं करेंगे।

वे तो किसी को नहीं खोज पाए किंतु दमयंती के परिवार ने उन्हें खोज निकाला। उनके सामने विवाह का प्रस्ताव रखा गया और उन्होंने चुपचाप स्वीकार कर लिया। गृहस्थी चल निकली। दमयंती का वय कुछ अधिक हो गया था। बहुत आकर्षक भी वह नहीं थी। शायद इसी कारण

अभी तक उसका विवाह नहीं हो पाया था।

उसकी अपेक्षाएँ भी अधिक नहीं थीं। सीधी-सादी गृहस्थिन थी। रोटी, कपड़ा और मकान के अतिरिक्त शायद ही उसने कोई इच्छा प्रकट की हो। ईशरदास उसके लिए कभी कुछ करना भी चाहते थे तो वह उनको रोकने का प्रयत्न करती थी। कोई गहना लाते तो वह उसे बैंक के लॉकर में रखवा देती थी।···उसने कभी कहा नहीं किंतु उसके मन में कहीं था कि वह उसे अपनी बहू-बेटी के लिए सँभाल ले।···ईशरदास उसके साथ न हों; किंतु वे एक क्षण के लिए भी भूल नहीं पाते थे कि उनके दो बच्चे भी थे। वे कहीं भी रहें, सत्या किसी की भी पत्नी बन जाए, एक नहीं चार विवाह कर ले; किंतु उन बच्चों के पिता ईशरदास ही रहेंगे। इस संबंध को न वह बदल सकती थी और न ही तोड़ सकती थी। प्रकृति का बनाया हुआ यह संबंध कोई कानून कोई न्यायालय नहीं तोड़ सकता था। पति-पत्नी का संबंध मनुष्य का बनाया हुआ था; किंतु संतान और माता-पिता का संबंध तो ईश्वर का बनाया हुआ था। वह नैसर्गिक और अटूट था···दमयंती को ईश्वर ने संतान नहीं दी। उसकी गोद कभी नहीं भरी। वह ईशरदास से चर्चा भी करती तो वे उसे टाल जाते। उसके सामने न कभी अपने बच्चों की चर्चा की और न कभी उन्हें अपनाने के लिए कहा। कहते भी कैसे, वे तो सत्या के पास थे और सत्या कभी उन्हें ईशरदास को सौंपनेवाली नहीं थी। वे चाहते तो कानून का आश्रय लेकर उन्हें प्राप्त कर सकते थे; किंतु उसके लिए कोर्ट-कचहरी करने के लिए ईशरदास तैयार नहीं थे। जाने दमयंती उन्हें अपने आँचल की छाया दे सके, न दे सके। उसने वर्षों से कभी उनसे मिलने की इच्छा भी प्रकट नहीं की थी। वह अपनी सूनी गोद के साथ भी संतुष्ट थी, किंतु अपनी सौत के बच्चों को इस घर में लाना नहीं चाहती थी। ईशरदास यदि उन्हें अपने साथ ले आते तो जाने उनकी वर्तमान गृहस्थी में कौन सा तूफान आ जाता। उन्होंने पहली बार जाना कि वे सत्या से भी डरते थे और दमयंती से भी। उनमें इतना साहस नहीं था कि इन दोनों में से किसी से भी मोर्चा ले सकें।

ईशरदास को सूचना मिली थी कि उस आई.एस.ए. ने सत्या को छोड़ दिया था। उसकी पोस्टिंग किसी और नगर में हो गई थी और उसने शायद नई शादी भी कर ली थी। ईशरदास को लगा कि यह उपयुक्त अवसर था कि वे सत्या को मना लाएँ और बच्चों को उनका घर दें। पर दमयंती···वह सत्या को या बच्चों को स्वीकार करेगी रात? को ईशरदास बिस्तर पर आए तो उन्हें लगा कि दमयंती पूरी कामिनी बनी हुई थी। आज तक उसने काम का आवेग इस प्रकार नहीं दरशाया था। पर आज वह उन पर कुछ इस प्रकार छा गई थी कि उसे झेलना कठिन हो रहा था।

''आज क्या हो गया है तुम्हें।'' उनसे कहे बिना नहीं रहा गया।

''मुझे संतान चाहिए। कब तक सूनी गोद लिये बैठी रहूँगी।''

''प्रयत्न तो कर ही रहे हैं। आगे जो ईश्वर की इच्छा।''

पर दमयंती का उद्वेग बढ़ता ही रहा। वह प्रतिदिन संतान की चर्चा ही नहीं, उसकी माँग करती रही। जैसे ईशरदास संतान के आने के मार्ग की बाधा हों।···वे डॉक्टर के पास भी गए और अस्पताल भी। पर संतान का जन्म नहीं होना था, जो नहीं हुआ।

अंत में दमयंती ने किसी के बच्चे को गोद लेने का प्रस्ताव रखा। ईशरदास इस प्रस्ताव को किसी हालत में स्वीकार नहीं कर सकते थे। वे जानते थे कि उनके अपने दो बच्चे थे, फिर वे किसी और का बच्चा गोद लेने क्यों जाते?

''हैं तो मेरे दो बच्चे।''

''तुम्हारे हैं। मेरे तो नहीं हैं। सच मानो तो वे तुम्हारे भी नहीं हैं। उस चुड़ैल के हैं। तुम्हारे होते तो तुम्हारे पास होते। साहस है तो कानून की सहायता से उन्हें उससे छीन लो।''

''मैं उन्हें ले आऊँगा तो तुम उन्हें स्वीकार कर लोगी?''

''उन्हें स्वीकार करने का तो प्रश्न ही नहीं उठता।'' दमयंती बोली, ''पर उस चुड़ैल के पास तो नहीं रहेंगे न।''

''तो कहाँ रहेंगे अनाथालय में?''

''अनाथालय में रहें, सड़क पर रहें, नाले में रहें; किंतु मेरे घर में नहीं रहेंगे।''

''संतान उत्पन्न नहीं कर सकती, जो हैं, उन्हें स्वीकार नहीं कर सकती, तो फिर संतान गोद लेने का व्यर्थ का शोर क्यों मचा रखा है?''

''देखो, सीधे से मेरी बात मान जाओ। मेरी बहन का एक लड़का गोद ले लो। नहीं तो मैं भी तुम्हारे साथ नहीं रहूँगी।'' ईशरदास का दिल दहल गया, पहलीवाली चली गई थी तो उन्हें तो कष्ट हुआ ही था, बदनामी कितनी हुई थी···जिसकी छोड़ भागी है···किसी को उनसे सहानुभूति नहीं थी। सब ओर परिहास ही परिहास था। वे उस अपमान को दूसरी बार सहन नहीं कर सकते थे। ''किस को गोद लेना चाहती हो?'' वे बोले, ''मुझे विश्वास है कि तुम अब तक कहीं-न-कहीं बात तय कर चुकी होगी।''

''अनाथालय से नहीं लेना चाहती।'' दमयंती बोली, ''मेरा बड़ा भानजा है। साल भर का है। मैं पालूँगी तो बड़ा होकर उसे पता भी नहीं लगेगा कि वह हमारा बच्चा नहीं है।''

''खैर, यह तो भूल ही जाओ। ऐसी बातें छिपी नहीं रहतीं। कोई न कोई उसे बता ही देगा। और कोई नहीं तो तुम्हारी अपनी बहन ही अपने पुत्र को बता देगी।''

''वह क्यों बताएगी?''

''क्योंकि जीवन के किसी भी पड़ाव पर उसे खेद होने लगेगा कि उसने अपना बेटा क्यों किसी और को दे दिया।''

''वह मेरी बहन है। अपनी बात से नहीं टलेगी।''

दमयंती ने कहा, ''आपकी बहन होती तो बात और थी। हमारे परिवार में लोग वचन के पक्के होते हैं।''

ईशरदास ने देखा कि बातचीत अशोभनीय होती जा रही है। दमयंती को लग रहा है कि वे उसके मायके पर आरोप लगा रहे हैं। मायके के नाम पर वह कुछ भी सहन नहीं कर सकेगी और जो कुछ वह उनके और उनके परिवार के लिए कहेगी, उसे वे सहन नहीं कर पाएँगे। 'हाँ, जानता हूँ कि तुम्हारे परिवारवाले सीधे राजा दशरथ की संतान हैं।' वे मन-ही-

मन बोले और अपने कमरे में चले गए।

इसके बाद उन दोनों में इस विषय को लेकर कोई बात नहीं हुई। कानूनी काररवाई अवश्य हुई। वे चाहते थे कि दमयंती उसे गोद ले। किंतु दमयंती सबकुछ उनसे करवाना चाहती थी। उन्होंने आकाश को कानूनी तौर पर गोद ले लिया। वह उनका कानूनी उत्तराधिकारी था। दमयंती ने उसमें स्पष्ट रूप से लिखवाया था कि उनके बाद उनकी सारी चल और अचल संपत्ति का स्वामी वही होगा। फिर जीवन सहज गति से बह निकला। ईशरदास को कुछ भी स्मरण नहीं रहा।

और एक दिन एक युवक उनसे मिलने आया। उसने उनके चरण छुए—

''प्रणाम करता हूँ पिताजी।'' ईशरदास ने उसे ध्यान से देखा, ''कौन हो भाई? मैंने तुम्हें पहचाना नहीं।'' वह हँसा, ''मैं सुधीर, आपका पुत्र।''

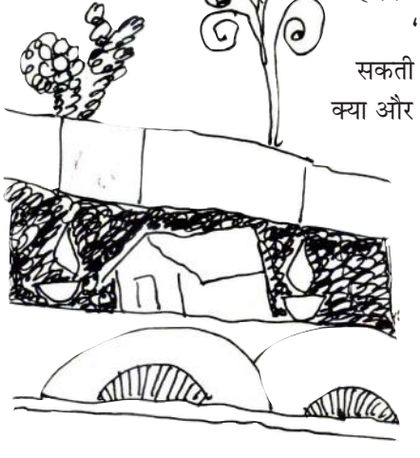

''सुधीर!'' उन्होंने ध्यान से देखा, इतना सुदर्शन और हृष्टपुष्ट पुत्र है उनका। और वे किसी और के पुत्र को अपना दत्तक पुत्र बनाए बैठे हैं। उन्होंने उठकर कपाट बंद किए, ताकि कोई देख न ले; और सुधीर को कंठ से लगा लिया, ''कहाँ थे अब तक तुम?'' ''आपके और माँ के विरोध के बीच में फँसा हुआ था। नहीं तो मैं कबका आपके पास आ गया होता।'' ''सत्या कहाँ है?'' ''अभी कॉलेज में पढ़ा रही हैं। उनके दूसरे पति भी उनको छोड़ गए हैं।'' ''वह छोड़ गया है या सत्या ने उसे छोड़ दिया है?''

''नहीं। उसने ही अपनी पी.ए. से विवाह कर लिया है। उसके पहले विवाह से उत्पन्न बच्चे भी उसके पास ही हैं। बड़े हो गए हैं, समर्थ हैं। हम लोग माँ के भाग में आए हैं। उस बड़ी कोठी को छोड़कर एक एम.आई.जी. फ्लैट में आ गए हैं।'' ''और मैं मेरा अधिकार?'' ईशरदास के मुख से निकला, ''तुम्हारा पिता तो मैं हूँ।'' वे कहते-कहते रुक गए कि उनके पास बहुत बड़ा मकान है। करोड़ों की जायदाद है। उनके बच्चों को एम.आई.जी. फलैट में रहने की आवश्यकता नहीं है। ''उसमें किसी को क्या संदेह हो सकता है।'' सुधीर बोला, ''किंतु आप और माँ जब तक मिल नहीं जाते, तब तक हमारी स्थिति भी स्पष्ट नहीं होती।'' ''तुम जानते हो न कि मैंने भी दूसरा विवाह कर लिया है और मेरी दूसरी पत्नी ने अपने भानजे को गोद ले लिया है। वह तुम्हें स्वीकार करेगी?''

''संभवत: नहीं करेंगी।'' वह बोला, ''मैं आपके पास आया था। सुना था कि आपका स्वास्थ्य ठीक नहीं है। यदि मैं आपके किसी भी काम आ सकूँ तो···।''

ईशरदास का मन पिघल गया। मन हुआ—कहें, वह गुड़िया को लेकर उनके ही पास आ जाए। उनके पास बहुत बड़ा मकान था। वे लोग आराम से रह सकते हैं।···किंतु सत्या उनके गिरने और माथे पर गूमड़ पड़ने का समाचार भी सुधीर को मिला था। वह अपने एक डॉक्टर मित्र को लेकर आया था कि ईशरदास की जाँच हो सके। वह देख रहा था कि दमयंती को यह सब पसंद नहीं आ रहा है; किंतु वह सुधीर को ईशरदास से मिलने से रोक नहीं सकती थी। वह दमयंती का हो-न-हो, ईशरदास का पुत्र था।···आकाश को गोद तो लिया था; किंतु ईशरदास का औरस पुत्र तो सुधीर ही था, वही रहेगा।

सुधीर विदा हुआ तो ईशरदास उसकी पीठ को देखते रहे। कैसा सुंदर और सुदृढ़ युवा था। मन होता था कि उसे बैठाकर अभी अपनी सारी संपत्ति उसके नाम कर दें। उनका वास्तविक उत्तराधिकारी तो वही था।···ईशरदास उसे रोक नहीं सके; किंतु वे अपने आपको भी रोक नहीं सके। सुधीर के जाने के पश्चात् दमयंती को बुलाकर अपने पास बैठाया और बोले, ''सोचता हूँ कि अब समय आ गया है कि मैं अपनी वसीयत तैयार कर दूँ।''

''कर दीजिए। उसमें किसी को क्या आपत्ति हो सकती है। पर क्या बाँटना है आपको, आपके पास है ही क्या और किस को देना है।''

''मकान है मेरे पास। तीन मंजिलें हैं। सोचता हूँ कि ऊपर की एक मंजिल सुधीर के नाम कर दूँ।'' ''होश में तो हैं आप।''

''वह मेरा बेटा नहीं है क्या?''

''वह आपका नहीं, आपको छोड़ भागी स्त्री का बेटा है।'' वह बोली, ''मैं आपकी पत्नी हूँ। मकान आपके जीवन में भी मेरा है और आपके बाद भी। आप उसकी एक ईंट भी किसी को नहीं दे सकते। वसीयत लिखेंगे तो उसे भी आपकी चिता में डाल दूँगी।'' ईशरदास उसका चेहरा देखकर ही डर गए।

अगली बार सुधीर आया तो ईशरदास ने उसे बैठा लिया।

''कैसे हैं आप?''

''उसकी चिंता छोड़।'' वे बोले, ''जैसा भी हूँ। अब बहुत दिन नहीं चलना है। सोचा था कि इस मकान में से तुम्हारा हिस्सा तुम्हें दे दूँ। पर दमयंती वह करने नहीं देगी।''

''कोई बात नहीं पिताजी। मुझे वह नहीं चाहिए।''

''तुम्हें कुछ नहीं चाहिए; किंतु मुझे कुछ चाहिए।''

''क्या?''

''जो माँगूँगा, मना मत करना।''

''नहीं करूँगा।''

''तो यह ले जा। पचास लाख हैं। एक फ्लोर का मूल्य चार करोड़ है। न मैं तुम्हें चार करोड़ दे सकता हूँ और न ही फ्लोर। मेरे हाथ बँधे हुए हैं।'' वे रुके, ''ये पचास लाख ले जा। अवसर मिला तो और भी दूँगा। किसी से इसकी चर्चा भी मत करना। इसके बदले में मुझे एक वचन दे।''

''क्या पिताजी ?''

''कि मुझे मुखाग्नि तू देगा···''

''कैसी बातें कर रहे हैं पिताजी अभी से।''

''अब ऐसी बातों का समय आ गया है पुत्र।'' वे बोले, ''वचन दे।''

''वचन देता हूँ।''

''जा।'' उन्होंने उसके सिर पर हाथ रख दिया।

□

शव को श्मशान ले जाने से पहले सुधीर और गुड़िया भी घर पहुँच गए थे। उन्हें प्रणाम तो करने दिया गया किंतु उसके पश्चात् बड़ी चतुराई से पीछे धकेल दिया गया।

सुधीर ने साहस किया, ''मैं उनका बड़ा पुत्र हूँ। कुछ कर्तव्य मेरे भी हैं।''

''तुम सत्या के पुत्र हो। ईशरदासजी के नहीं।'' आकाश तनकर अपने भाइयों के साथ उसके सामने खड़ा हो गया।

उसने सिर मुँड़वा लिया था। धोती और बनियान में वह श्मशान जाने की वर्दी में खड़ा था। उसके साथ, जैसे उसे सहारा देने के लिए दमयंती खड़ी थी। आकाश के सगे माता-पिता और भाई-बहन उसके साथ थे। पूरा कुटुंब एकत्र था···सुधीर का पक्ष लेनेवाला कोई नहीं था।

''पिताजी की इच्छा थी कि उन्हें मुखाग्नि मैं दूँ।''

''तुम्हारे पास उनकी वसीयत है क्या ?''

''वसीयत तो है, किंतु लिखित रूप में नहीं है।'' वह बोला, ''एक व्यक्ति जो अब जीवित नहीं है, बिना वसीयत के भी उसकी इच्छा पूरी करने में कोई बुराई नहीं है।''

''वसीयत होती भी तो उसे मैं चिता में डाल देती।'' दमयंती ने कहा।

''पर मैं मुखाग्नि दूँ तो आपको क्या आपत्ति है ?''

''बहुत चतुर मत बन।'' दमयंती ने कहा, ''यह हमारे समाज की अलिखित वसीयत है कि मुखाग्नि देनेवाला पुत्र ही संपत्ति का उत्तराधिकारी होता है।''

''मैं लिखित रूप में देता हूँ कि मुझे संपत्ति में से कुछ नहीं चाहिए, किंतु मुझे मुखाग्नि का अधिकार दिया जाए।''

''तू अपनी टाँगों पर चलकर घर जाना चाहता है, तो चला जा; नहीं तो यहीं टाँगें तोड़ दूँगा। श्मशान भी नहीं जा पाएगा।''

सुधीर समझ गया कि पिताजी पहले से ही यह सब भाँप चुके थे। तभी तो अपनी वसीयत अपने वक्ष में छिपाए हुए ही चले गए। मकान पर कब्जा जिसका था, उसी का रहेगा। वसीयत किसी के भी नाम हो।

सा अ

१७५ वैशाली, पीतमपुरा
दिल्ली-११००३४

एकमात्र दिवस

लघुकथा

• ·¤ô×Ü ßæÏßæÙè ÒÂÚU‡ææÓ

हिला दिवस पर कुछ परिचित साहित्यकारों ने मुझे बधाई देने के लिए फोन किए। मैंने अनमने मन से फोन उठाया, ''बधाई!'' किस बात की बधाई ?'' मैंने अनजान बनकर पूछा।

''अरे! आज तो आपका दिन है।'' मेरी ओर से औपचारिक या अनौपचारिक उत्तर न पाकर कुछ पल सन्नाटा रहा।

''मैडम, हमने सोचा था कि आज के दिन आप बहुत खुश होंगी, पर आप तो··· ?''

''तीन सौ चौंसठ दिन बधाई देकर किसे खुश करना चाहते हैं ?'' कहते-कहते मैंने फोन रख दिया।

आज का दिन जरूरत से ज्यादा ही बोझिल हो गया। दूसरे के होंठों पर आई हँसी भी मानो मेरा मजाक उड़ा रही थी।

एक बार खयाल आया कि फिर किसी ने फोन किया तो··· ? क्यों न रिसीवर उतारकर ही रख दिया जाए। फिर सोचा कि क्यों न अपनी दीदी से बात कर लूँ! ''दीदी, आप इतनी बड़ी डॉक्टर हैं, आज तो आपके पास बधाई देने के लिए बहुत सारे फोन आए होंगे ?''

''हाँ।''

''मैंने आपको बधाई देने के लिए नहीं, बल्कि एक प्रश्न पूछने के लिए फोन किया है। क्या कोई पुरुष यह विश्वास दिला सकता कि सिर्फ आज···सिर्फ एक दिन कहीं कोई दुष्कर्म नहीं होगा ?''

''कोमल, तुम यह संवेदनशील प्रश्न अपनी डायरी में नोट कर लो।'' डॉक्टर दीदी के जवाब में ठंडापन था।

इधर हमारी बातचीत चल रही थी और उधर सिर्फ साठ किलोमीटर दूर दुष्कर्म की घटना घट रही थी।

अगले दिन समाचार-पत्रों की सुर्खियों में पहले पन्ने पर खबर थी कि 'महिला दिवस पर इंदौर के मॉल में नौ साल की बच्ची के साथ दुष्कर्म।'

महिला दिवस पर इस खबर को क्या समझा जाए—बधाई या महिला दिवस का तोहफा ?

सा अ

'शिवनंदन', ५९५, वैशाली नगर
(सेठीनगर), उज्जैन-४५६०१० (म.प्र.)
दूरभाष : ०७३४-२५२५२७७

हुकुम का गुलाम

• çàæßÙæÚæØ‡æ ÁæãÚè çß×Ü

सेवानिवृत्त विधि सचिव, मध्यप्रदेश शासन; न्यायिक सदस्य, अखिल भारतीय कॉपी राइट बोर्ड। भूतपूर्व पीठासीन अधिकारी, 'केंद्रीय शासन इंडस्ट्रियल ट्रिब्यूनल'; 'प्रेसीडेंट मध्य प्रदेश इंडस्ट्रियल कोर्ट'; संप्रति अधिवक्ता।

राधे मेरी बाँसुरी

जब से तुम मथुरा गए मेरे प्राण
पथ पर प्रतीक्षारत आँख की पलकें
पथरा गईं पर तुम नहीं लौटे
शापित तो नहीं किया था
अहिल्या की तरह फिर यह देह
शिला बनकर रह गई है क्यों?
तुम्हारे चरणों की प्रतीक्षा में
एक सूनापन छा गया है ब्रज में
पंछी मौन हैं,
मयूर नाचा ही नहीं तब से
और में बिल्कुल अकेली हो गई हूँ
तुम नहीं लौटे प्यारे, तुम नहीं लौटे।

व्यर्थ ही तुमने अक्रूर को भेजा
वह सब समझने की
न क्षमता है, न अभिरुचि
मुझे मेरे कान्हा लौटा दो!

अब तक याद है एक बार
कदंब के नीचे चाँदनी में
बैठे हुए थे हम,
मेरे बाल सहलाते हुए
तुम ने कहा था—
'राधे, तुम मेरी बाँसुरी हो
बजाता हूँ जब तुम्हें तो
डूब जाता है ब्रजमंडल
तुम्हारे प्यार में।'

मेरे अपने होते हुए भी तुम
क्यों इतने पराए हो गए हो?
कब तक तुम्हारे होंठ की
प्यासी रहेगी यह बाँसुरी?

अपनी बाँसुरी को साथ
तुम क्यों नहीं ले गए मोहन?
बजा देते समय पर तो
महाभारत होता ही नहीं,
न तुमको अपने भक्त पर
यों दौड़ना पड़ता रथ का
पहिया चक्र-सा उठाए हाथ में।

मैं हूँ मोहन, क्योंकि तुम हो
मैं तुम्हारी सृष्टि,
तुम्हारी इच्छा, तुम्हारा प्यार हूँ,
तुम्हारी परछाईं छाया तुम्हारी।

तुम्हारे बिना है एक गहरा अँधेरा
एक सागर नीलवर्णी
सब डूबा हुआ उसमें
जब इच्छा करोगे
मेरे चाँद-सूरज प्रकट हो जाएँगे,
वृंदावन हरा हो जाएगा फिर से
लौट आओ मेरे देवता
अपनी पगली प्रेमिका के पास।

धूप और ताप झेलता रहा है
मेरा विरह बरसों से,
झमाझम बरस जाओ मेरे साँवरे
मैं तुम्हारे साथ बहना चाहती हूँ
नीले सिंधु की गहराइयों में।

स्वतंत्रता दिवस

मिट्टी को अपनी शहादत से
चंदन बनाकर जो गए
उन सरफरोशों की मजारों
पर लगा है आज फिर मेला।

तूफान से कश्ती निकालकर
जो सौंपी गई थी हम को
उस धरोहर की कसम खाने को
लगा है आज फिर मेला।

आजादी जब उतरी थी आसाम में
जय हिंद का उद्घोष करती
हजारों सैनिकों की बलि चढ़ा
उस कुँवारे बलिदानी विजय की
याद में लगा है आज फिर मेला।

बहुत पानी बह गया इन
सत्तर जुझारू बरसों में,
नई चुनौतियों को मात देने
लगा है आज फिर मेला।

तिल के ताड़वाले अँधेरों से
हम दीवाने नहीं डरते
डर को मात देने को
लगा है आज फिर मेला।

शहीद मरते नहीं बिस्मिल

एक बग्गी
पीछे कैबिन में बैठा हुआ अंग्रेज
आगे ऊँची सीट पर बैठा रईस
पुलिस की ड्रेस
एक हाथ में घोड़े की रास
दूसरे हाथ में चाबुक
हुकुम का गुलाम
आगे कसा हुआ घोड़ा
चाबुक की मार खाता दौड़ता घोड़ा
गुलाम हिंदुस्तान का नक्शा।

कोई शिकायत नहीं
घोड़े ने कर लिया था समझौता
अस्तबल में रहने के लिए
खाने के लिए रातिब
यह नागरिक डरा-सहमा
गुलामों का गुलाम।

क्या इस घोड़े को
आजाद करवाने के लिए
सरफरोशी की तमन्ना की थी?
क्या इसके लिए
सर पर कफन बाँधा गया?
वह तो अपने नरक में खुश था।

क्या उनके लिए जो लड़ रहे थे
आजादी के लिए अपने तरीके से
और तुम्हारे रास्ते से डरते
तुमसे घृणा करते थे,
जिन्होंने तुम्हारे त्याग को
बलिदान को कभी समझा नहीं?
नहीं-नहीं तुम लड़े थे पूरे देश की
आजादी के लिए
देश की माटी के लिए।

१८५७ के बाद जो दमनचक्र चला था
गाँव के गाँव फूँके गए
खेत-खलिहान जलाकर
भुखमरी और दहशत फैलाई गई
जवानी लटका दी गई पेड़ों से।
इस भयानक तांडव के बाद
जो तुम्हारे जैसे सरफरोशों
की टोलियाँ निकलीं
देश में नवोदय होने लगा।

दुनिया के हर देश ने
आजादी के लिए उत्सर्ग
को पूजा है, सराहा है
मजार पर श्रद्धांजली दी है
पर हाय आजाद भारत देश के शासन
न तुमको शहीद का दर्जा मिला
न तुम्हारी चिताओं पर
लगाए गए मेले
न दी गई परिवार को पेंशन।

स्वतंत्रता-संग्राम बहुतों ने लड़ा
अपने-अपने तरीकों से
पर श्रेय सत्तारूढ़ दल ने
केवल अपनों को दिया।

तुम्हारा रास्ता सही था या गलत
तुम्हारी शहादत ने आजादी के
नव जागरण को हवा तो दी थी।

हवा में आज भी गूँजते हैं
सरफरोशी के तराने,
शहीद मरते नहीं बिस्मिल
दिलों पर राज करते हैं।

सा
अ

२४/डी के देवस्थली फेज-२
दाना पानी रेस्टोरेंट के पास
बाबडिया कला, भोपाल (म.प्र.)

बाल-कविता

जब भी बोलें, मीठा बोलें

● प्रेम किशोर 'पटाखा'

हास्य-व्यंग्य के प्रख्यात कवि-लेखक। बाल-साहित्य में भी दर्जनों पुस्तकें प्रकाशित। इन दिनों भी लेखन में सक्रिय। टी.वी. के अनेक चैनलों पर हास्य-व्यंग्य की फुलझड़ियाँ गुदगुदाती हैं।

आओ बच्चो, गाओ बच्चो

शब्द हमारे हीरे-मोती मधुर बोल बिखनारा जी,
शब्दों की खिलती फुलवारी फूलों-सा मुसकाना जी,
सूरज की किरणें सिखलातीं भोर हुई जग जाना जी
चिड़ियों का संगीत सिखाता मीठी धुन में गाना जी,
सीख हवा के झोंके देते भीनी गंध लुटाना जी
खिले फूल डाली पर कहते सारा जग महकाना जी,
उड़ते नीलगगन में पंछी गाते मधुर तराना जी
पंखों में भर नई उमंगें अंबर तक उड़ जाना जी।

हम हीरो

वन, टू, थ्री, फोर
नहीं क्लास में करना शोर,
फाइव, सिक्स, सेवन, ऐट
नहीं कभी हम होंगे लेट,
नाइन, टेन, वन जीरो
कहलाएँगे हम हीरो।

चल मेरे घोड़े

चल मेरे घोड़े टिंबक टू
साथ में रखना हिम्मत तू,
कभी न करना खटपट तू
दौड़ लगाना सरपट तू।

आज के बच्चे

आज के बच्चे कल जवान
कहलाएँगे हिंदुस्तान,
मेरी धरती मेरी शान
मेरा भारत बने महान।
बच्चे हैं नैनों के तारे
उगते सूरज से उजियारे,
बच्चे हर मन आकर्षण
बच्चे भारत का हैं दर्शन।
बच्चे अलग-अलग भाषाएँ
बच्चे हर मन की आशाएँ,
बच्चे वीणा की सरगम हैं,
बच्चे नहीं किसी से कम हैं
सच्चे भारत की पहचान,
मेरा भारत बने महान।

मीठी बोली

ईश्वर ने दी मीठी बोली,
मीठी बोली रस की गोली।
जब भी बोलें मीठा बोलें,
मीठी बातों में रस घोलें।
झुककर बोलें, हँसकर बोलें,
जो भी बोलें, पहले तौलें।
झूठी बातें कभी न बोलें,
मन में भेदभाव न घोलें॥

आम छू-टाम छू

आम छू-टाम छू
तलाला बादाम छू
जो करेगा काम तू
पाएगा इनाम तू।

बच्चे सजे हुए गुलदस्ते

बच्चे सजे हुए गुलदस्ते,
बंद किताबों वाले बस्ते
खुलते ही मन को हरषाते,
नाचे मोर पंख फैलाते,
जैसे पंछी धुन में गाते,
जैसे खिले फूल मुसकाते,
जैसे हर आँगन महकाते,
जैसे घर-घर खुशी लुटाते,
बच्चे ईश्वर का वरदान,
मेरा भारत बने महान।

तिनक-तिनक-तिन

सुन सितार की तिनक-तिनक तिन
इकतारे ने की तिन-तिन
सारंगी का कान खींचकर,
तबले बोले तक-धिन-धिन,
हारमोनियम गाए सरगम
ढोलक बजती ढम्मक ढम,
सभी एक सुर में यह गाते
रहें प्यार से मिलकर हम।

नाची कठपुतली

तुन-तुन-तुन बजता इकतारा
झूम-झूम नाची कठपुतली,
एक-एक कर, झुक-झुक-झुक कर
ठुमक-ठुमक नाची कठपुतली
ताक धिनकधिन, तक तक धिन धिन
छमक-छमक नाची कठपुतली।
रून झुन, रून झुन, छम-छम छम-छम
लचक-लचक नाची कठपुतली।

गिनती का गीत

तक धिन-धिन भई तक धिन-धिन
चल उठ झटपट गिनती गिन,
एक दो तीन चार पाँच छह
पास में अपने हिम्मत है,
सात के आगे आठ नौ दस
मीठी बातों में है रस,
दस-दस मिलकर होते बीस
झुके बड़ों के आगे शीश,
बीस-बीस-दस हुए पचास
जागे जीवन में विश्वास,

हुए पचास पच्चीस पिचहत्तर
हर मुश्किल से लेना टक्कर,
जोड़ पिचहत्तर में पच्चीस
देते सदा बड़े आशीष,
एक के आगे शून्य हैं दो
कदम हमेशा आगे हो,
सूरज की झोली में किरणें
किरणों की झोली में दिन,
तक धिन धिन भई तक धिन धिन,
चल उठ झटपट गिनती गिन।

४३, लक्ष्मीपुरी, सराय हकीम
अलीगढ़-२०२००१ (उ.प्र.)
दूरभाष : ९८९७०६७२७६

कहानी

दादाजी की कहानी

● मोहनदास नैमिशराय

चेतन सिंह जब-जब तीसरी मंजिल के अपने फ्लैट के पिछले कमरे की खिड़की से ढलते हुए सूरज को देखते, तब-तब उन्हें अपने भीतर के सूरज के ढलने का एहसास होता था। आज भी जैसे ही संध्या हुई और अँधेरे ने उजाले को अपनी गिरफ्त में लेना शुरू किया, वे खिड़की के पास खड़े हो गए और पूरब दिशा में डूबते सूरज को टकटकी लगाकर देखने लगे। लाल और पीले रंग में कूची डुबोकर जैसे किसी चित्रकार ने विशाल कैनवास पर रंग बिखेर दिए हों—सूरज को डूबना और रंगों का स्वभाव बदलना, जमीन से लेकर आकाश हर दिशा का परिवेश, उस परिवेश में जो कुछ भी होता, सभी कुछ बदलने लगता। पक्षियों के कलरव तथा उससे उभरता संगीत। ढलते, जैसे सबकुछ आत्मसात् करने लगती। उनके विचार का धागा प्रकृति से जुड़कर बुनावट करने लगता। तन्मय होकर दृश्य और श्रव्य के उस मंजर में खो जाते। अचानक उनकी पौत्री अंजु आ गई तो उनका ध्यान बँटा। आते ही वह पूछने लगी, ''दादाजी, आप रोज शाम को छिपते हुए सूरज को देखते हैं?''

''हाँ, बेटे!''

सुनकर बच्चे ने तपाक से दूसरा सवाल कर दिया, ''सूरज तो छिप जाता है। अँधेरा भी हो जाता है, फिर भी आप उस तरफ देखते रहते हैं?'' उन्होंने फिर जवाब दिया, ''हाँ, बेटे।''

''पर अँधेरे में क्या देखते हैं, दादाजी?''

''बेटे, अँधेरे में भी बहुत कुछ देखने को होता है।''

''पर दादाजी, आपको अँधेरे में देखना अच्छा लगता है?''

''अच्छा लगता है, बेटे।''

''तुम देखोगी?''

''हाँ, दादाजी।''

चार बरस की पौत्री। उसका कद अभी उतना नहीं था कि खिड़की से ढलते हुए सूरज को स्वयं देख सके। दादाजी ने गोद में उठाया और सामने ढलते हुए सूरज की तरफ हाथ से संकेत करते हुए कहा, ''देखो, बेटे, उस तरफ देखो!''

सूरज लगभग छिप चुका था, पर पूरब दिशा में लाली अभी शेष थी। जैसे रंगों से भरी कोई नदी सामने उभर आई हो और धीरे-धीरे बहने लगी हो। कुछ पल बच्ची उस तरफ देखती रही। फिर वह पूछ बैठी, ''सूरज छिपता क्यों है, दादाजी?'' जवाब में दादाजी बोले, ''जीवन का यही नियम है, बेटे। जो उगता है, वह अस्त भी होता है।''

''यह नियम किसने बनाया, दादाजी?'' बच्चे का सवाल निश्चित ही गंभीर था। सुनकर उन्हें अच्छा भी लगा। उनके मुँह से निकला, ''प्रकृति ने।'' बच्चे ने दोहराया, ''प्रकृति ने?''

''हाँ, बेटे।''

''पर प्रकृति ने क्यों बनाया यह नियम?'' हँसकर वे बोले,

सुपरिचित लेखक। अब तक 'सफदर एक बयान', 'आग और आंदोलन', 'स्वतंत्रता संग्राम के दलित क्रांतिकारी' (कविता-संग्रह); 'अपने-अपने पिंजरे' (आत्मकथा), 'आवाजें' (कहानी-संग्रह), 'जख्म हमारे', 'मुक्ति पर्व' (उपन्यास), 'हैलो कॉमरेड' (नाटक), 'भारतीय दलित आंदोलन का इतिहास' (चार भागों में)।

''पूछकर बताऊँगा बेटे।''

तभी चाय लेकर बहू आ गई। चाय का प्याला मेज पर रखते हुए उसने कहा, ''क्या बातें हो रही हैं दादा-पोती में?''

जवाब दिया अंजु ने, ''माँ, दादाजी के साथ छिपे हुए सूरज को देख रही थी।'' माँ का स्वर उभरा, ''कल उगते हुए सूरज को भी देखना बेटे दादाजी के साथ।'' कुछ पल परिवेश में चुप्पी रही। पुनः स्वर उभरा, ''देखोगी न बेटे उगते हुए सूरज को?''

''अच्छा चल अब, दादाजी को चाय पीने दे।''

दादाजी चाय पीते हुए अतीत में खो गए। दो वर्ष पहले ही वे सेवा-निवृत्त हुए थे। लगभग तीस बरस उन्होंने अध्यापकी की थी। वे अपने कार्य से पूरी तरह संतुष्ट थे। और उन्होंने मन लगाकर पढ़ाया भी। शिक्षा देने के कार्य को वे सर्वोत्तम मानते थे। कभी कोई झगड़ा-वगड़ा मोल नहीं लिया जीवन में। जैसी भी परिस्थितियाँ रहीं, उन्हीं में कार्य करते रहे। पाँच बरस होने को आए, तब यह फ्लैट खरीदा। खरीदा क्या, जीवन भर की कमाई इसमें लगा दी; तब तक बेटा नौकरी पर नहीं लगा था। नौकरी लगी तो उसका विवाह हुआ। बेटे के विवाह के अवसर पर पत्नी नहीं थी। बहुत पहले वह चल बसी थी। वे जैसे तन्हा हो गए थे, पर इस तन्हाई ने भी उनके लिए नई राह निकाली। थोड़ा-बहुत तो वे पहले से ही पढ़ते-लिखते थे, पर पत्नी नहीं रही तो पढ़ने-लिखने में अधिक समय देने लगे। सेवा-निवृत्त तो वे हो ही चुके थे। उनके पास समय-ही-समय था; और समय का सदुपयोग करना वे अच्छी तरह से जानते थे। जीवन के उसी मोड़ से उन्होंने नियमित रूप से लिखने की शुरुआत की।

उधर सूरज उगा नहीं और चेतन सिंह छत पर गए नहीं। जैसे वे डूबते सूरज को हर रोज देखते थे, उसी तरह उगते हुए सूरज को देखना भी उनके लिए जरूरी था। सीढ़ियाँ चढ़कर वे छत पर आ गए थे। उनके सामने था सूरज। दुनिया को उजाला देनेवाला सच कितना अद्‌भुत दृश्य था। पक्षी आकाश में उड़ान भरने लगे थे। जैसे-जैसे उजाला फैलने लगा, वैसे-वैसे परिवेश गतिमान होने लगा था। तभी उन्हें अंजु की आवाज सुनाई दी।

''दादाजी!'' उन्होंने देखा। माँ की उँगली पकड़े हुए उनकी पौत्री खड़ी थी। उसे देखकर उनके मुँह से अनायास निकला, ''बेटे तुम!''

''हाँ दादाजी!''

उसकी मम्मी छत पर छोड़कर चली गई तो अंजु बोली, ''दादाजी, मुझे भी उगता हुआ सूरज दिखाओ!''

''देखो न बेटे, सामने ही तो सूरज है।'' कुछ पल बच्ची टकटकी लगाकर उगते हुए सूरज को देखती रही। तभी दादाजी के मुँह से निकला, ''कैसा लगा बेटे उगता हुआ सूरज?''

''बहुत अच्छा, दादाजी!''

''अब तुम भी मेरे साथ रोज उगते हुए सूरज को देखना।''

''ठीक है, दादाजी।''

समय आगे बढ़ता है तो बहुत सारी बातें पीछे छूट जाती हैं, लेकिन अतीत से जुड़ी यादें हमेशा साथ रहती हैं। संजय कॉलोनी में जब उन्होंने दो कमरों का फ्लैट लिया था, तब यहाँ बसावट बहुत कम थी। चारों तरफ जंगल था और ऊबड़-खाबड़ जमीन थी। बरसात के दिनों में तो आने-जाने में मुश्किल हो जाती थी। उस समय शहर के बाहर कॉलोनी थी। बाद के दिनों में तो तेजी के साथ एक और नया शहर बसने लगा था। शुरू में लगभग एक सौ घर थे। फिर लोग आते गए और फ्लैट बनते गए।

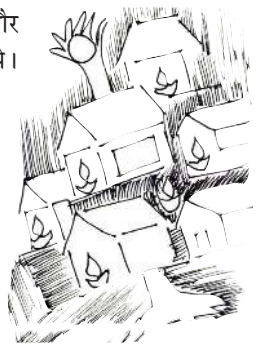

पहले दूधवाले की दुकान खुली, फिर जर्नल मर्चेंट्स की। इसके बाद धोबी ने अपना ठीहा लगा लिया। बाद के दिनों में तो सब्जीवालों से लेकर लुहारों तक के फड़ बनते गए। कॉलोनी में जहाँ पहले सुनसान रहा करता था, वहाँ का परिवेश गुलजार होने लगा। देखते-देखते मुफ्त के चौकीदार भी आने लगे, यानी कुत्तों की बिरादरी ने भी अपनी-अपनी जगह तलाश करनी शुरू कर दी। कुत्तों के बाद बिल्लियाँ आईं, बिल्लियों के बाद बकरियाँ और बकरियों के बाद न जाने क्या-क्या! संजय कॉलोनी की जमीन कुछ वर्ष पूर्व तक बड़ी लगती थी। अब जैसे-जैसे नए लोग आते गए, वैसे-वैसे वही जमीन छोटी पड़ने लगी। नए और पुराने पड़ोसियों में मेल-मिलाप होने लगा। वे एक-दूसरे के बारे में जानने लगे। शुरुआत में बात करते हुए शिष्टाचार आ जाता था, पर घनिष्ठता बढ़ी तो शिष्टाचार गायब हो गया। कभी-कभी हँसी-मजाक भी हो जाती थी। चलो, इस बहाने बस्ती की वीरानी तो दूर हुई। कुछ वर्ष पहले तक उनके बेटे-बहू ताना मारने में पीछे नहीं रहते थे कि पिताजी, कहाँ घर लिया है उजाड़ में। तब दूर-दूर मकान थे। दो-तीन बार चोरियों भी हुईं, इस कारण सभी ने मिलकर चौकीदार भी रख लिया था। चौकीदार का नाम रामसेवक था, जो बलिया के किसी गाँव का रहनेवाला था। एक-दो दिन उसे देखकर कुत्ते भौंके, पर बाद में वे पहचानने लगे।

शुरुआती दौर में चेतन सिंह हलकी-फुलकी कथा-कहानियाँ लिखते थे। उदाहरण के लिए, राज बली की कहानी, दादी का चश्मा, डॉक्टर बाबू, भूमि पुत्र, घर का भेदिया आदि-आदि। कभी-कभी पत्र-पत्रिकाओं में छप जाता थे ये सब, फिर वे आलेख लिखने लगे, जो संदेशप्रद और राह दिखलाने वाले होते थे, जैसे अँधेरे से अजाले, सिद्धांत की बात, समाज और चितंन आदि। आरंभ में बेटे-बहू को अच्छा लगा। दो-तीन लोगों ने बधाई भी दी। पर बाद में जब कभी ये सब छपने के बाद एक सौ रुपए या एक सौ बीस रुपए का चेक आता तो उन्हें अजीब-सा लगता। एक बार बेटे ने कहा भी, ''क्या पिताजी! आप दो-तीन दिन लगाकर यह कथा, कहानी, आलेख लिखते हैं और बदले में केवल सौ रुपए?'' पर चेतन सिंह को कतई बुरा नहीं लगता। जिस दिन अखबार में कुछ छपता, उनका सीना फूल जाता और वे अड़ोसी-पड़ोसी को बताते भी। रहा सवाल बेटे के उलाहने का तो यह सब तो वे जानते थे कि जैसे-जैसे समय बीत रहा है, वैसे-वैसे समाज में बदलाव भी होने लगे हैं—आदमियत की कीमत कम और पैसे की अधिक होने लगी है। बेटे ने एक बार कह भी दिया, ''पिताजी, आप भी बस रात-दिन कागज काले करते रहते हो; अरोड़ा अंकल को देखो न, शाम को केवल तीन घंटे अंडे व आमलेट बेचते हैं और चार सौ रुपए तो कमा ही लेते हैं।''

उन्होंने जवाब देने में देर न की, ''बेटे, मुझे तो सरकार पेंशन देती है।''

''पिताजी, पेंशन तो उन्हें भी मिलती है।''

''तो तू चाहता है कि मैं अरोड़ा अंकल की तरह सड़क पर अंडे बेचने लगूँ, जिससे राह चलते लोग आएँ और पानी के बहाने न जाने क्या-क्या पीने लगें?''

''आप भी पिताजी बस···।''

''बस क्या?''

''पिताजी, मैं तो केवल यही कहना चाहता था कि आपके पास समय भी है तो दो पैसे अधिक मिलें तो कोई और काम···!''

''बेटे, मैंने शुरू से ही समय का सदुपयोग किया है, दुरुपयोग नहीं।''

''आप भी पिताजी बस···!''

बेटे ने वही वाक्य फिर दोहराया। इसके बाद और कुछ कहने के लिए क्या था? वे जानते थे कि बेटा उनसे क्या चाहता है! बेटे का खर्च बढ़ने लगा था। घर में ब्लैक ऐंड व्हाइट टी.वी. था। बेटे ने उसे रंगीन टी.वी. सेट में बदल लिया था। पहले वह साइकिल पर ऑफिस जाता था, फिर स्कूटर ले लिया। फ्रिज भी किश्तों पर ले लिया था, आखिर कब तक पड़ोसियों से ठंडा पानी माँगता? पर वे हमेशा घड़े का पानी ही पीते थे।

नजदीक में ही अनोखे लाल ने मकान बनवाया था, उनके बाद रामखिलाड़ी ने। दोनों सुबह पार्क में मिलते तो दुआ-सलाम होने के बाद दीन-दुनिया की बातें करते। उनकी बातों के विषय मुख्य रूप से बिजली, पानी, राशन आदि ही होते। कभी-कभी महँगाई पर भी चर्चा होती। समाज में जो खलनायक है, उन पर बातचीत होती। चोर-लुटेरों की अखबारों में छपी कहानियाँ रस ले-लेकर सुनाते और दुर्घटनाओं के बारे में कहते-सुनते। यह सब सुनते-सुनते चेतन सिंह को बहुत बुरा लगता। वे अपने से ही सवाल कर बैठते कि क्या समाज में अच्छे लोग नहीं हैं? कभी कोई उनके बारे में नहीं बतलाता, आखिर क्या हो गया है लोगों को?

बस्ती में आबादी का दबाव तेजी से होने लगा था और ऐसे में प्रोपर्टी डीलर के जगह-जगह ऑफिस खुलने लगे थे। जमीन बेची और

खरीदी जाने लगी थी। किराएदार आने लगे थे। बस्ती में अवैध रूप से दुकानें बनाई जाने लगी थीं। लोगों में होड़-सी लगी थी। आए दिन दंगा-फसाद, लड़ाई-झगड़े, तू-तू मैं-मैं होते। चेतन सिंह दिन में जो देखते-समझते रात में घंटों-घंटों उसी के बारे में सोचते रहते। कभी-कभी उन्हें नींद भी नहीं आती थी तो उठकर बैठ जाते और फिर चहलकदमी करने लगते। कभी-कभी अपने आपसे ही बातें करने लगते। स्वयं के ही सवाल और स्वयं के ही जवाब।

आज रविवार का दिन था। अंजु के स्कूल का अवकाश था और बेटा भी घर पर था। चेतन सिंह छत पर उगते हुए सूर्य को निहार रहे थे। परिवेश में चिड़ियों की चहचहाहट सुबह के समय ही होती थी, जब वे सूर्य को उगते हुए देखने के साथ पक्षियों का चहकना सुन सकते थे। फिर जैसे-जैसे दिन का उजाला फैलता, बस्ती में अजीब तरह का शोर शुरू हो जाता था। कभी-कभी तो बरदाश्त के बाहर भी होता था। तभी अंजु की आवाज सुनाई दी। उन्होंने पीछे मुड़कर देखा। वह भागते हुए उन तक आई। फिर ठहरकर बोली, ''दादाजी, आप रात में किससे बातें करते रहते हो?'' अपनी पौत्री का सवाल सुनकर उन्हें समझ नहीं आया कि क्या जवाब दें। थोड़े मुसकराने का प्रयास किया, लेकिन मुसकरा सके। अंजु का सवाल फिर उभरा तो वे बोले ''अपने आप से, बेटी।'' अंजु ने दोहराया, ''अपने आप से?'' उन्होंने भी कहा, ''हाँ, अपने आप से।''

पुन: अंजु पूछ बैठी, ''पर अपने आप से बात क्यों करते हैं, दादाजी?''

तभी उनकी बहू चाय ले आई। चाय देकर वह अंजु को अपने साथ ले गई। जैसे दादाजी को पौत्री के सवाल से छुटकारा मिला था, पर अंजु का सवाल तो उनके आस-पास अभी भी गूँज रहा था।

एक-दो बार घर में अपरिचित लोग आए, बेटे से उनकी बातचीत हुई और वे चले गए। उन्होंने उनके बारे में पूछा नहीं, यह सोचकर कि बेटे के मित्र होंगे! पर जब दो-तीन लोग फिर से आए तो वे बेटे से पूछ ही बैठे। सुनकर उनका चौंकना लाजमी था। उन्होंने कुछ कहा तो बेटे ने सीधे-सीधे जवाब ही दे दिया।

''पिताजी, आज तो कागजों में ही खोए रहते हो।''

उन्होंने भी प्रतिवाद किया, ''बेटे, मैं कागजों में खोया नहीं रहता, बल्कि इस उम्र में भी कुछ सृजन करता हूँ।'' बेटे ने वही सवाल फिर कर दिया, ''सृजन तो करते हैं पिताजी, पर बदले में मिलता क्या है आखिर?''

''बदले में कुछ मिले, इस आशा से मैं नहीं लिखता।''

''पर हमें तो आशा है।''

''तुम तो नौकरी करते हो, बेटे।''

''अकेले नौकरी से क्या होता है; आखिर कितना देती है सरकार?''

''बेटे, जितनी चादर हो, उतना ही पैर पसारने चाहिए।''

''इस कहावत को आपके अलावा कौन मानता है, पिताजी?'' इसके बाद एक पिता अपने बेटे को भला क्या कहते? 'जितनी चादर हो, उतने ही पैर पसारने चाहिए' इस कहावत को कौन सुनना चाहता है? अब तो लोगों में पैसे की भूख बढ़ती चली जा रही है; और भूख भी ऐसी, जिसका कोई अंत नहीं है।

शाम होते-होते बेटे ने अपना फैसला सुना दिया, ''पिताजी, घर की छत का हमें क्या करना है, अत: उसे बेचने के लिए किसी से बात हो गई है।'' उन्होंने स्वयं अपने पैसे से खरीदकर बेटे को दिया, बेटे ने ऐसा सिला दिया कि उनकी छत का मोलभाव करने से पहले उनसे पूछा तक नहीं। उनके मुँह से इतना ही निकला, ''पर बेटे···!''

तभी बेटे का स्वर उभरा, ''पिताजी, जो पैसा मिलेगा, उसकी एफ. डी. करवा दूँगा अंजु के नाम। इसके विवाह में काम आ जाएगा यह सब। आगे-आगे तो महँगाई बढ़ रही है।'' अब क्या जवाब देते दादाजी अपने बेटे को। आगे एक भी शब्द उनके मुँह से नहीं निकल सका। उनकी चुप्पी ने जैसे बेटे के फैसले पर मुहर लगा दी थी।

जिस दिन उनके घर की छत बेची गई। उस दिन उन्हें कुछ अच्छा नहीं लगा। वे घर से निकलकर घर के पीछे पार्क में जा बैठे। घंटों वहाँ बैठे रहे। सिर्फ रामसेवक चौकीदार ने उनसे नमस्ते की। पार्क में गंदगी बढ़ गई थी। यह सब देखकर उन्हें अजीब-सा लगा। इसी पार्क में वे पहले बैठा करते थे, तभी उनकी नजर पार्क के पीछे की तरफ चली गई, जहाँ उनके पिछले कमरे की खिड़की थी। वहाँ कबाड़ीवाले ने अपना गोदाम बना लिया था। उसी खिड़की से कभी वे डूबते सूरज को देखा करते थे। अगले दिन उन्होंने पार्क में अवैध रूप से बने गोदाम की चर्चा बेटे से की। बेटे ने सुनकर जवाब दिया, ''पिताजी, कहाँ क्या हो रहा है, इससे आप क्यों परेशान होते हैं? फिर जहाँ तक खिड़कीवाली बात है, उस तरफ से तो मच्छर ही आते थे न घर में!'' यह सब सुनकर वे आगे कुछ भी न बोल सके। हाँ, जिस दिन से उनके घर की छत पर नए मकान मालिक ने मकान बनवाना शुरू किया, उसी दिन से उनकी तबीयत बिगड़ती चली गई। वे सभी कुछ देखते, सहते, पर चुप रहते। कभी-कभी पत्नी की याद आती तो और भी उदास हो जाते। मौसम बदलता तो वे इंतजाम कर लेते थे, लेकिन जब सारी दुनिया ही बदलने लगे तो वे क्या करते? विकट और विषम परिस्थितियों से जूझता एक अदना आदमी, जिसके पास घर था, परिवार था, परिवार में बच्चे भी थे; पर फिर भी अकेला, जीवन की धारा जैसे बदल गई थी। इन दो दिनों में उन्होंने बिस्तर पकड़ लिया। पहले जुकाम हुआ, फिर बुखार। डॉक्टर घर आकर दवाई दे गया। स्कूल से आकर उनकी पौत्री उनका हालचाल जरूर पूछ लेती। वह उनके सिरहाने बैठती और उनसे बातें करती तो उन्हें अच्छा लगता। तीसरे दिन भी हालत नहीं सुधरी तो डॉक्टर फिर आया और जरूरी हिदायत के साथ दवाई दे गया। मन तो बेचैन पहले ही था, अब शरीर ने भी जैसे मन का साथ देना बंद कर दिया था। बेटा सुबह ऑफिस जाते हुए शिष्टाचार निभा देता बस। कौन सी दवाई कब लेनी है, कभी-कभी गड़बड़ हो जाती। अब वे न उगते हुए सूरज को देख सकते थे और न अस्त होते हुए सूरज को। बेटे की भूख के कारण छत हाथ से निकल गई और पीछे कबाड़ी के कारण खिड़की बंद हो गई। घर के सामने दो मंजिले, तीन मंजिले मकान बनने लगे थे। जैसा आगे, वैसा ही पीछे। सिर्फ हवा थी और कुछ उजाला। उन्हें न कोई बेच सकता था और न खरीद सकता था। चेतन सिंह की हालत बिगड़े एक सप्ताह हो गया था। सुधार बहुत कम था एवं कमजोरी भी बहुत आ गई थी। चेहरे पर पीलापन साफ झलकने लगा था। तभी दोहपर को अंजू स्कूल से लौटी

तो उनके कमरे में शोर मचाते हुए प्रवेश किया। ''दादाजी की कहानी, दादाजी की कहानी।'' उनका बेटा भी आज ऑफिस से जल्दी आ गया था। अंजू के हाथ में पुस्तक थी। बेटे और बहू ने देखा कि कहानी के नीचे चेतन सिंह लिखा था। वह कहानी पाठ्यक्रम में लगी थी। जो काम दवा न कर पाई, वह कहानी से हो गया था। उनके चेहरे पर सूरज की चमक थी।

बी.जी.-५ए/३० बी, पश्चिम विहार, नई दिल्ली
दूरभाष : ८८६००७४९२२

कविता

तब तक ऐसे ही

• शशींद्र अग्निहोत्री

सुपरिचित लेखक। बिट्स पिलानी से एम.एस-सी. तथा कुछ समय तक वहीं पर अध्यापन किया। समसामयिक मुद्दों तथा समस्याओं पर विशद अध्ययन। कविता एवं लेख विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित।

रात हो चुकी है
प्रथम प्रहर है
दिन तो किसी तरह से
बीत गया है
खुद को भूलकर जो कुछ
कर्म था उसमें लगा रहा
पर अब क्या करूँ?
सोने का क्या अर्थ है
शायद फिर सुबह का
इंतजार है, अपने आपको
खोना है, किस सुबह को पाना है।
वही सुख-दुःख के ताने-बाने
वही इनसान के इनसान का
शोषण का समाचार।
रूढ़ियों और माला जपने का
संस्कार न मानो तो
अपने मन का करता है
पता नहीं क्या पाना चाहता है?
यह मन। किससे मतभेद
इनसान उठता है
प्रकृति को भोगने के लिए
फूल तोड़ने के लिए
नारी को मारने के लिए
पेड़ों को काटने के लिए
धरती को खोदने के लिए
अपनी सुख-सुविधा बटोरने के लिए
चाहे पर्यावरण
इतना जहरीला हो जाए
कि वह स्वयं और
उसके भविष्य की पीढ़ियाँ
अपने अस्तित्व के लिए
बार-बार अस्वस्थ हों, फिर भी
वह समझता है कि इस
ब्रह्मांड का वही केंद्रबिंदु है।
वह जानकर भी
समझना नहीं चाहता कि
फूल देखने के लिए हैं
सुंदरता भोगने के लिए
नहीं है महसूस करने के
लिए नहीं है केवल अस्तित्व
के लिए है जैसे स्नेह/लय और
तरंग की अनुभूति है।
वह हवा जो इनको आत्मसात्
करती है, प्राणों का प्रतीक है
और इनसान को जीवित रहना है।
दिनभर लाभ के लिए
विकास के लिए
वह सबकुछ करने के लिए
जिससे बच्चे डरें
जानवर भागें जान के लिए
नारी सोचे अपने को बचाने
के लिए, इनसान की कर्कश
प्रवृतियों से।
मैं क्या करूँ?
मैं दिन को किसी तरह
से बिता डालता हूँ, लेकिन रात नहीं
बीतती है सोने में, क्योंकि
ये सब प्रश्न मुझे घेरते हैं।
मेरे होने की सार्थकता पर
प्रश्न-चिह्न भी लगाते हैं
क्योंकि जो कोमल हैं,
सुंदर हैं, छोटे हैं, सौम्य हैं,
वे सब डरकर
किसी तरह से सोये हैं।
पता नहीं कल सुबह उनके
साथ क्या होगा?
क्या वे अपने आपको
इनसान से बचा पाएँगे?
या उसी प्रक्रिया में
नष्ट हो जाएँगे
और मैं इन्हें आँखों से
इन्हीं कानों से
इसी दिमाग से
इस दृश्य को देखने को
मजबूर होता रहूँगा
कुछ पाने के लिए
क्योंकि 'नेक बचन' यह कहेंगे
तुमको इस सबसे क्या अर्थ है?
तुम जिज्ञासु नहीं हो सकते
तुम किसी को बचा नहीं सकते
क्योंकि यह सब होना नहीं है
पर होता आया है
रात क्या बीतेगी?
हाँ, पर क्या दिन के अँधेरे
खत्म होंगे।
रोशनी होते हुए भी
जिन अँधेरों में मैं हूँ
उसमें मैं क्या करूँ?
सुबह जो
कल होगी वह तो होती है
पर मैं ही अपना अस्तित्व
खो दूँ। एक ताकत बन जाऊँ
और फूल में/नारी में/पेड़ों में/
जानवरों में समा जाऊँ कि
मेरे होने के डर से इनसान
सहम जाएँ
और अपने को निर्दयी होने
से बचाए
तभी शायद मेरे लिए रात नहीं होगी
दिन नहीं होंगे
सुबह नहीं होगी
शाम नहीं होगी
और कुछ भी व्यक्तिगत नहीं होगा
स्वयं भी कही नहीं होगा
और फिर ये प्रश्न भी नहीं होंगे
पर क्या यह संभव हो सकेगा?
पता नहीं
तब तक ऐसे ही
रात में समय के बीतने का
इंतजार करना होगा
और फिर एक सुबह, अगली सुबह
कुछ-कुछ आज की सुबह जैसी!

सी-१६, एल पार्क, महानगर विस्तार
लखनऊ-२२६००६
दूरभाष : ९९६८२६३९३९

दीपों का त्योहार दीवाली

● आनंद शर्मा

लोकचिंतक एवं समाज-सेवी। 'यौनकर्मी : कामिनी या कुलटा' पुस्तक के अलावा कई स्मारिका एवं सर्वे रिपोर्ट्स प्रकाशित। सम्मेलन एवं सेमिनारों में निरंतर सहभागिता; धार्मिक एवं सामाजिक कार्यों में विशेष रुचि। देशाटन करते हुए निरंतर प्रवास चलता रहता है।

शरद ऋतु अपने आप में सर्वाधिक सुखद होती है। शरद ऋतु का सौंदर्य श्री का सौंदर्य है। लक्ष्मी का सौंदर्य है, सीता और राधारानी का सौंदर्य है। शरद का सौंदर्य ही शारदा का सौंदर्य है। श्री का यह सौंदर्य न तिजोरियों में बंद होता है और न उल्लू की सवारी करता है, यह तो प्रकाश की एक धारा निरंतर जीव-जगत् के बाहर-भीतर फैलाता रहता है। शरद ऋतु का पावन मास है—कार्तिक। पूरा कार्तिक ही पर्व-त्योहारों का महीना है। कार्तिक-स्नान का अपने आप में बड़ा महत्त्व है। नवरात्र और दशहरा यानी विजयादशमी के बाद दीपावली पर्व आता है। दीपावली अकेला नहीं, पर्वों का समूह है, इसलिए लोग इसे पंच-महोत्सव, यानी पाँच दिन तक चलनेवाला महोत्सव भी कहते हैं। दीपावली अँधेरे पर उजाले की विजय का पर्व है; तमस में ज्योति के पदार्पण का पर्व है; बुराई पर अच्छाई की विजय का पर्व है; दुर्गुणों पर सत्गुणों की विजय का पर्व है। दीपावली के एक महीना पहले से घरों, दुकानों, कार्य-स्थलों की साफ-सफाई, लिपाई-पुताई और रंग-रोगन करना शुरू हो जाता है। कहा गया है कि जहाँ स्वच्छता है, वहाँ लक्ष्मी का वास है।

'लक्ष्मी तंत्र' ग्रंथ में उल्लेख आया है कि देवताओं के राजा इंद्र ने पूछा कि 'देवी लक्ष्मी, आपकी कृपा कैसे प्राप्त की जा सकती है?' तो माता लक्ष्मी ने बताया कि 'देवेंद्र, जो मेरी प्राप्ति की इच्छा रखते हुए स्वच्छ तन, स्वच्छ मन तथा स्वच्छ वातावरण से युक्त परिवेश में मेरी पूजा-आराधना करता है, मैं उस सेवक पर ही प्रसन्न होती हूँ। नि:संदेह जो गृहस्थ सात्त्विक मन से, अपनेपन के साथ पूजा-अर्चना करता है, वह अपने जीवन की दरिद्रता को मिटा सकता है।' 'ब्रह्म पुराण' में भी बताया गया है कि कार्तिक अमावस्या की अँधेरी रात्रि में लक्ष्मीजी स्वयं भूलोक में आती हैं और चहुँ ओर विचरण करती हैं। जो घर या स्थान अधिक स्वच्छ, शुद्ध, सात्त्विक एवं प्रकाशयुक्त होता है, वहाँ वे अपनी कृपा बरसाती हैं। गंदे तथा अंधकार वाले घर में वे झाँकती भी नहीं हैं, अत: क्या शहर, क्या गाँव, हिंदू घरों में खूब साफ-सफाई कर दीपक की रोशनी से चहुँओर जगमग कर दिया जाता है। सभी को अपने घर में लक्ष्मीजी को बुलाने की तीव्र आकांक्षा रहती है। लक्ष्मीजी मात्र धन की स्वामिनी ही नहीं, वे ऐश्वर्य, सुख-शांति एवं समृद्धि देनेवाली भी हैं। सभी हिंदू परिवार उनके इंतजार में पलक-पाँवड़े बिछाए रहते हैं।

इस अवसर पर साफ-सफाई से एक दूसरा फायदा यह भी होता है कि बरसात के बाद कीड़े-मकोड़े काफी संख्या में बढ़ जाते हैं; घरों में टूट-फूट, शीलन आदि से वातावरण अस्वास्थ्यकर हो जाता है। दीपावली के बहाने अच्छी साफ-सफाई कर घरों को प्रकाशित किया जाता है, जिससे वातावरण स्वास्थ्यप्रद हो जाता है। एक ओर तो दीपक अंतर्मन को आलोकित करते हैं, दूसरी ओर दीपकों के प्रकाश में कीट-पतंगे सब नष्ट हो जाते हैं, इसीलिए दीपावली में दीपमालिका सजाई जाती है।

यह त्योहार कार्तिक कृष्ण पक्ष की त्रयोदशी से शुरू हो जाता है, इसे 'धनतेरस' कहते हैं; इसी दिन को भगवान् धन्वंतरि के प्रादुर्भाव के रूप में मनाया जाता है। आयुर्वेद शास्त्र के प्रणेता भगवान् धन्वंतरि का उद्भव समुद्र-मंथन से इसी दिन हुआ था। धनतेरस को यमुना में स्नान तथा यम के नाम पर दीपदान किया जाता है। तेल का दीपक जलाकर मुख्य द्वार पर रखा जाता है, इससे परिवार को अकाल मृत्यु का भय नहीं सताता है, ऐसी मान्यता है। इस दिन धातु के बरतन, आभूषण आदि खरीदना भी शुभ माना जाता है। क्या गरीब क्या अमीर, सब हिंदू इस दिन कुछ-न-कुछ अवश्य खरीदते हैं।

अगले दिन नरक चतुर्दशी होती है, इसे छोटी दीवाली भी कहते हैं। इस दिन सायं को हिंदू परिवारों में कहीं पर चौदह तो कहीं पर एक दीया जलाया जाता है और रामसेवक हनुमान को तेल तथा सिंदूर चढ़ाना शुभ माना जाता है। यह उनको अत्यंत प्रिय है। द्वापर में इसी दिन भगवान् कृष्ण ने नरकासुर राक्षस का वध किया था, ऐसा भी माना जाता है। कालांतर में इस दिन महावीर जयंती भी मनाई जाने लगी और यह जैन संप्रदाय का भी पर्व बन गया।

आश्विन शुक्ल पक्ष की दसवीं को रावण पर विजय प्राप्त करने के ठीक बीसवें दिन भगवान् राम के अयोध्या लौटने पर और उनके राज्याभिषेक के पावन अवसर पर अमावस्या को घर-घर में दीप जलाए गए। दीवाली के रूप में प्रतिवर्ष हमारे राम की वापसी होती है और हम दीपोत्सव मनाते हैं। दीपावली को ही आर्य समाज के प्रवर्तक स्वामी दयानंद सरस्वती को मोक्ष प्राप्त हुआ था। यह घर में नवान्न आने का भी पर्व है। अत: सायं को नवान्न के रूप में गुड़ से निर्मित विभिन्न खाद्य वस्तुएँ, खाँड़ के खिलौने, बताशे, मिष्टान्न के साथ धान से बनी खील, लाई, चूड़ा आदि से गणेश और लक्ष्मी की पूजा बड़े भक्तिभाव से की

जाती है। घर-द्वार, कुआँ-बावड़ी, मंदिर-देवालय यहाँ तक कि कूड़ाघर में दीपक जलाकर प्रकाश किया जाता है, इससे एक ओर लक्ष्मीजी प्रसन्न होती हैं, तो दूसरी ओर कीड़े-मकोड़े आदि नष्ट हो जाते हैं। हिंदू अपने नाते-रिश्तेदार, मित्र एवं अड़ोस-पड़ोस में मिठाइयों तथा उपहारों का आदान-प्रदान करते हैं। इससे आपसी प्रेम-सौहार्द की वृद्धि होती है। बच्चों के लिए यह विशेष खुशी का पर्व है, जो हफ्ते से पहले ही पटाखे चलाना शुरू कर देते हैं।

दीपावली वैसे तो सभी हिंदू परिवार बड़े उल्लास के साथ मनाते हैं, पर प्रमुख रूप से इसे वैश्यों का त्योहार कहा जाता है। इस दिन व्यापार की पुरानी बही बदलकर नई शुरू की जाती है। वे बही की पूजा करते हैं। इस अवसर पर श्री-श्री इतने हजार मिति, सुदी, बदी लिखकर गणेशजी के नाम से खाता खुलवाया जाता है। गणेश के नाम लिखे रुपयों में कोई काट-छाँट या छेड़-छाड़ नहीं की जाती। इसके बाद शुभ-लाभ एवं रिद्धि-सिद्धि लिखे जाते थे। बाईं ओर शुभ के नीचे जो अर्जित किया, वह लिखा जाता था तथा लाभ के नीचे जो कमाया, वह लिखा जाता था। बही पर गणेषाय नमः, श्रीलक्ष्मी नमः तथा अन्य देवता-उपदेवताओं के नाम लिखे जाते थे।

इस दिन सायं को लक्ष्मीजी और गणेशजी की साथ-साथ पूजा के कारण जो भी रहे हों, परंतु यह बात सर्वविदित है कि आज भी लक्ष्मीजी का पूजन सुख-समृद्धि एवं ऐश्वर्य की प्राप्ति के लिए तथा गणेशजी की पूजा उस समृद्धि एवं ऐश्वर्य को सात्त्विक एवं लोक-कल्याणकारी बनाए रखने के लिए ही की जाती है। धन-संपत्ति और समृद्धि अहंकार बढ़ानेवाली नहीं, परोपकारार्थ और जन-कल्याण के लिए होनी चाहिए। दीपावली पूजा का मंतव्य यही है। हिंदू समाज में ऐसी मान्यता है कि भगवान् राम के सिंहासनारूढ़ होने पर अयोध्यावासियों ने घर-घर दीप जलाकर पूरी अयोध्या नगरी को रोशन-प्रकाशित किया तथा स्वादिष्ट व्यंजन बनाकर खुशियाँ मनाईं; अतः उसी खुशी में दीपावली की परंपरा आज तक चली आ रही है। दीपावली की रात्रि के बाद, यानी ब्रह्ममुहूर्त में दलिद्दर भगाने की प्रथा आज भी है। घर के कोने-कोने में जाकर घर की बड़ी-बूढ़ी सूप पटकती या बजाती हैं और कुछ लोकगीत गुनगुनाते हुए घर से दरिद्रता को भगाती हैं। दीवाली बुराई पर अच्छाई की जीत का प्रतीक है, इसे हमें कभी नहीं भूलना चाहिए और इस सीख को जीवन में उतारना चाहिए। यदि हर व्यक्ति दीवाली के दिन यह व्रत ले कि उसके जीवन में सच्चाई और ईमानदारी का ही वास होगा तो हमारा देश दुनिया में सबसे आगे बढ़ सकता है।

ठीक अगले दिन, यानी कार्तिक शुक्ल प्रतिपदा को गोवर्धन पूजा या अन्नकूट पर्व मनाया जाता है। भगवान् कृष्ण ने इसी दिन दंभी इंद्र की पूजा बंद करवाकर गोवर्धन और गाय की पूजा शुरू कराई थी। इसी दिन इंद्र के कोप से ब्रजवासियों को बचाने के लिए भगवान् कृष्ण ने गोवर्धन पर्वत को उँगली पर धारण कर इंद्र का मान-मर्दन किया था। ब्रजवासी इस पर्व को बड़े हर्ष-उल्लास के साथ मनाते हैं। घर-घर में गोबर से गोवर्धन बनाया जाता है। सायं में खीर-पूरी और अनेक पकवान बनाकर पूरे परिवार के साथ गोवर्धन यानी गिरिराज भगवान् की पूजा कर परिक्रमा की जाती है। उत्तर भारत में मथुरा पुरी के पास स्थित गिरिराज पर्वत (गोवर्धन) की परिक्रमा वर्ष भर चलती रहती है। इसके अलावा व्यवसायी तथा हस्त-कर्मकार और नाना पेशा करनेवाले इस दिन विश्वकर्मा की पूजा भी करते हैं और अपना कारोबार इस दिन बंद रखते हैं।

इसके अगले दिन द्वितीया को भाई-बहन के आपसी प्रेम-सौहार्द का पर्व 'भैया दूज' मनाया जाता है। कहा जाता है कि सबसे पहले महालक्ष्मीजी ने राजा बलि को राखी बाँधकर उसे भाई बनाकर भगवान् विष्णु को वहाँ से मुक्त कराया था। एक वरदान के कारण विष्णुजी राजा बलि के पहरेदार बन गए थे। अतः इस दिन बहनें भाई को नारियल (गोला), मिठाई के साथ तिलक करती हैं और उनकी दीर्घ आयु की कामना करती हैं। भाई भी कपड़ा, उपहार तथा नकद राशि देकर बहन का सम्मान करता है और बहन की सदा मदद करने का वचन देता है। इस दिन बहनें अपने भाई के घर जाती हैं या भाई ही बहन के घर आ जाते हैं, तब बहन भाई का रोली-अक्षत से तिलक कर नारियल, मिष्टान्न आदि भेंट करती है। जो भाई दूर या परदेस में होते हैं तो बहनें उनके नाम से नारियल को तिलक कर रख लेती हैं और सुविधानुसार बाद में अपनी दौज भेंट करती हैं। भैया दूज के दिन बाजारों तथा बस, रेल आदि में खूब भीड़ रहती है।

वर्तमान में दीपावली के बहाने अपने धन-वैभव की नुमाइश होने लगी है। पर्यावरण को बरबाद करनेवाली दमघोंटू आतिशबाजी का चलन कब-कैसे शुरू हो गया, कहा नहीं जा सकता। हाँ, अपनी संपन्नता की धाक जमाने का यह भी एक जरिया बन गया है। दीपावली तो वातावरण को स्वास्थ्यकर बनाने का पर्व है। लालची दुकानदार तथा मिलावटखोरों ने दीवाली की मिठाई को भी जहरीला बना दिया है। दूध से बननेवाली मिठाइयों में सबसे ज्यादा मिलावट की जा रही है। इस मौके पर मिठाइयाँ खाना भी बीमारियों को आमंत्रण देना है। कुछ लोग इस दिन जुआ खेलकर इस त्योहार की गरिमा को ठेस पहुँचाते हैं, यह पर्व तो व्यसनों तथा बुराइयों को दूर भगाने का पर्व है। दीपावली पर्व पर हम केवल दीपक जलाते हुए ही न रह जाएँ, बल्कि अपने-अपने आंतरिक जीवन तथा बाह्य जीवन में जो अज्ञान है, अभाव है, अशक्ति है, असोच है, उसे भी पूरी ताकत लगाकर दूर करें या कर सकें तो दीपोत्सव मनाना सार्थक हो सकेगा।

आई-१२४, ७० फुटा रोड
प्रेमनगर, किराड़ी, दिल्ली-११००८६
दूरभाष : ९९९००५०९२०

बाल-कहानी

मेरी दीवाली तो आज ही है

● प्रकाश मनु

उसका नाम था लावनी। छोटी, बहुत छोटी थी लावनी। होगी कोई सात-आठ बरस की। पर कभी-कभी उसे लगता, भगवान् ने उससे सारी खुशियाँ छीन ली हैं। और यह सोचते ही उसका चेहरा उदास हो जाता। पर फिर अगले ही पल उसे अम्माँ के लाड़-प्यार की याद आती तो वह धीरे से कहती, ''अरे, मैं भी कैसी बुद्धू हूँ। अम्माँ हैं न! मुझे इतना लाड़ करनेवाली अम्माँ। एक पल भी वे मेरे बिना नहीं रह पातीं। तो फिर भला मुझे किस चीज की कमी है?''

फिर वह झटपट अम्माँ के पास जाकर बातें करने लगती। कहती, ''अम्माँ, अबकी दीवाली आएगी तो तुम दीये जलाना। बहुत सारे दीये। ठीक है न, अम्माँ? मैं देख नहीं पाती तो क्या, मुझे खुशी तो होगी। बहुत-बहुत खुशी।''

''हाँ, लावनी, जलाऊँगी, जरूर जलाऊँगी। बहुत सारे दीये, तेरे लिए! ताकि तेरे चेहरे पर मुसकान आए।'' कहकर लाड़ से लावनी की माँ उसका मुख चूम लेतीं और अपने काम में लग जातीं।

पर लावनी को चैन कहाँ! उसके भीतर जो कुछ चल रहा है, वह अम्माँ से न कहे तो किससे कहे?

''आपने मेरा नाम लावनी क्यों रखा?'' अम्माँ का आँचल खींचते हुए वह पूछती, ''ऐसा नाम तो अम्माँ, मैंने किसी का नहीं सुना।''

''लावनी तो उसे कहते हैं, जो सुंदर हो। भला तेरे जैसा सुंदर कोई और है? एकदम दीये की लौ की तरह। सुंदर-सुंदर, जगमग करती। तो भला लावनी नाम किसी और का कैसे होता?'' अम्माँ हँसकर कहतीं, ''मेरी लावनी तो तू ही है, सारी दुनिया में अकेली, और चाँदनी जैसे सुंदर!'' कहते-कहते अम्माँ उसे अपने आँचल में समेट लेतीं।

लावनी का दिल भीतर-भीतर उमगने लगता। कहती, ''सचमुच अम्माँ, मैं ऐसी ही हूँ? बहुत सुंदर! पर सहेलियाँ तो··· ?'' और वाक्य पूरा करने से पहले ही उसकी आँखों से टप-टप आँसुओं की बारिश शुरू हो जाती।

गायत्री अम्माँ जानती थी उसका दुःख। उसे प्यार से गोद में बैठाकर सिर पर प्यार से हाथ फेरती हुई कहतीं, ''पगली रोती है? तेरे पास भला क्या नहीं है। बस आँखें ही तो नहीं हैं न! पर इससे क्या होता है। तेरे पास मन की आँखें जो हैं। कैसी उज्ज्वल आँखें, मोती जैसी। दीये जैसी। उनमें सारी दुनिया के लिए प्यार है। इतनी सुंदर आँखें भगवान् ने तुझे दी हैं तो फिर रोती क्यों है?''

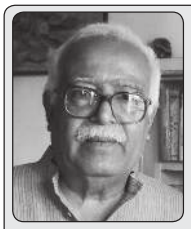

वरिष्ठ कवि-कथाकार। 'यह जो दिल्ली है', 'कथा सर्कस' और 'पापा के जाने के बाद' उपन्यास चर्चित हुए। 'एक और प्रार्थना', 'छूटता हुआ घर' कविता-संग्रह तथा 'अंकल को विश नहीं करोगे', 'अरुंधती उदास है' समेत ग्यारह कहानी-संग्रह। शिखर साहित्यकारों से मुलाकात, संस्मरणों और आलोचना की कई पुस्तकें। साहित्य अकादमी के पहले बाल-साहित्य पुरस्कार, उ.प्र. हिंदी संस्थान के 'बाल-साहित्य भारती' पुरस्कार तथा हिंदी अकादमी के 'साहित्यकार सम्मान' से सम्मानित।

फिर उसे प्यार से भरकर छाती से लगा लेतीं। कहतीं, ''और फिर कितना सुंदर तू गाती है, 'श्रीरामचंद्र, कृपालु भज मन···!' भला कोई गा सकता है और? उस दिन मुरली काका कितनी तारीफ कर रहे थे कि लावनी, तू गाती है तो लगता है, भगवान् रामचंद्रजी सीता मैया और लक्ष्मणजी के साथ सामने आ खड़े हुए हैं, हाथ में धनुष-बाण लिये। एकदम साकार दिखाई देने लगते हैं।''

अम्माँ की बातों से लावनी को कुछ तसल्ली मिलती तो वह कहती, ''अम्माँ, आपने उस दिन आधी कहानी ही सुनाई थी न, कि कैसे सीताजी के खो जाने पर वन में भटकते हुए राम और लक्ष्मणजी को हनुमानजी मिल गए और वे सुग्रीव के पास पहुँचे। आज आगे की कथा मैं जरूर सुनूँगी। और हाँ अम्माँ, समुद्र पर बाँध कैसे बनाया उन्होंने? समुद्र तो बहुत बड़ा होता है न! और फिर रावण को भी मारा···''

''सुनाऊँगी, बेटी, जरूर सुनाऊँगी रामचंद्रजी और सीता मैया की कहानी। पर पहले रसोई का थोड़ा काम निबटा लूँ, फिर आती हूँ। दीवाली आ रही है, तो घर में एकाध मीठा पकवान तो बनना चाहिए न। तेरे लिए खोए के लड्डू बना लेती हूँ। तब तक तू एकाध मीरा का पद गा न। मैं वहीं रसोई में बैठी-बैठी सुनती रहूँगी।''

और माँ के जाते ही लावनी गुन-सुन करके धीरे-धीरे गाने लगती, ''मैंने राम रतन धन पायो री···!''

रसोई में मीठे पकवान बनाती गायत्री अम्माँ का दिल कभी खुशी से उमगता तो कभी अचानक डूबने लगता, 'हे राम, कितनी लंबी जिंदगी है। भला कैसे काटेगी लावनी?'' लावनी की सहेलियाँ किस तरह बात-बात

में उसका मजाक उड़ाती हैं, यह तो खुद उन्होंने भी देखा-सुना है। बेचारी नन्हीं-सी लावनी कैसे यह सब सह पाती होगी?' सोचकर उनकी आँखें गीली हो गईं। पर उन्होंने चुपके से पोंछ लिया और ध्यान से सुनने लगीं बेटी का सुरीला गीत, 'मैंने राम रतन धन पायो री···!'

'ओह, गला कितना मीठा है लावनी का। अपने पड़ोस के मुरली काका यों ही कोई प्रशंसा थोड़े ही करते हैं। अभी कल ही कह रहे थे कि लावनी का गाना दो मिनट भी सुन लो तो लगता है, सचमुच प्रभुजी से दिल का सुर मिल गया।' सोचते हुए अम्माँ बेटी पर जैसे रीझ-सी गईं।

अम्माँ जानती थीं कि उसके भीतर रात-दिन कौन-सा दर्द, कौन-सी ज्वाला जलती है। कुछ बरस पहले चेचक के कारण लावनी की दोनों आँखें चली गई थीं और उसकी जिंदगी में अँधेरा, एकदम अँधेरा हो गया था। कुछ लोग कहते हैं, अगर सही इलाज होता और समय पर होता, तो उसकी आँखें बच सकती थीं। पर भला कहाँ से इतने पैसे लातीं गायत्री अम्माँ?

आँखें चली जाने से लावनी पर दुःख का पहाड़ टूट पड़ा। पर इससे भी ज्यादा दुःख उसे इस बात का था कि उसकी पढ़ाई अधबीच ही खत्म हो गई थी। बेटी का दिल बहलाने के लिए अम्माँ उसे नई से नई कहानियाँ सुनातीं, गीत और भजन याद करातीं। उसे बातों-बातों में जमाने भर के बारे में बतातीं। सुनकर लावनी उत्साह से भर जाती। सोचती, 'मैं भी बड़ी होकर कुछ बनूँगी।'

□

फिर एक दिन लावनी को मुरली काका ने आकर बताया कि बेलापुर में संगीत की दुनिया के महान् गुरु देवलालीकरजी आ रहे हैं। वे पास ही सितारपुर गाँव में अपना आश्रम बनाकर रहते हैं। बच्चों को संगीत की शिक्षा देते हैं। शहर के गाँधी आश्रम में वे ठहरेंगे। सुनकर उसे लगा कि उसके भीतर कोई है, जो पुकार-पुकारकर कह रहा है, ''लावनी, अब तेरे दुख कटेंगे···जल्दी!''

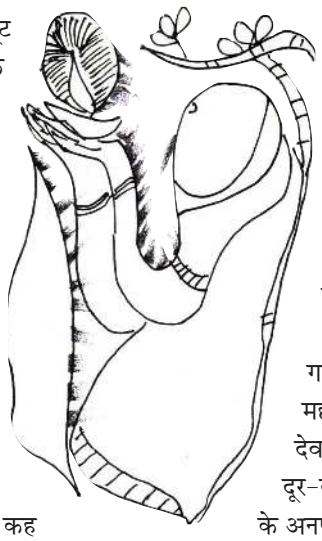

देवलालीकरजी कोई मामूली आदमी नहीं थे। उन्हें बेलापुर और आसपास के लोग दूसरा गाँधी कहकर पुकारते थे। दूर-दूर तक उनका नाम था। उनका संगीत धरती का संगीत था, जो लोगों के दिलों में कुछ करने की प्रेरणा जगा देता।

उसी रात माँ ने लावनी को देवलालीकरजी की पूरी जीवन-कथा सुनाई। उन्होंने बताया कि ''बेटा, स्वाधीनता संग्राम में भाग लेने के कारण देवलालीकरजी ने बहुत कष्ट झेले हैं। अच्छी-खासी आराम की सरकारी नौकरी थी, ऊँचे अफसर थे। पर गाँधीजी के आह्वान पर उसे लात मारकर गाँव-गाँव घूमते रहे। अब बच्चों को संगीत सिखाने का स्कूल खोला है उन्होंने, पर कोई फीस नहीं लेते!''

लावनी ने सुना तो जैसे उसकी आत्मा के भीतर कोई प्रकाश-सा हुआ। बोली, ''अम्माँ, मैं उनसे संगीत सीखूँगी।''

और अगले दिन लावनी मुरली काका के साथ देवलालीकरजी के पास जा पहुँची। थोड़ा डरते-डरते गई और पास जाकर खड़ी हो गई। उसके मुँह से कुछ बोल निकले ही नहीं।

देवलालीकरजी ने बड़े कौतुक से लावनी को देखा, फिर बोले, ''तू गाती है न! मेरा मन कहता है, तू जरूर अच्छा गाती होगी। सुना, अपनी पसंद का कोई गीत सुना दे।''

लावनी का सबसे प्रिय गीत था, 'श्रीरामचंद्र कृपालु भज मन···!' उसने उसी को सुनाना शुरू किया। सुनते हुए देवलालीकरजी की आँखें मुँद गईं, मुँदती चली गईं। कुछ देर बाद उनकी समाधि टूटी, तो वे लावनी के सिर पर हाथ फेरते हुए बोले, ''देख, मैंने कहा था न, कहा था न···!''

उसी दिन से लावनी की पढ़ाई शुरू हुई। देवलालीकरजी के स्कूल में मिलनेवाली संगीत शिक्षा ने उसके स्वर को निखारा। धीरे-धीरे वह इतना अच्छा गाने लगी कि दूर-दूर तक मशहूर हो गई। लोग कहते, ''एक अंधी गायिका है। बड़ा ही अनोखा गाती है। जब वह गाती है, तो पत्थर भी पिघलने लगते हैं!''

रात को अकसर उसके गानों की आवाज आती। लोग एक-दूसरे से कहते, ''देखो-देखो, लावनी गा रही है। सुनते हो उसके गानों की आवाज?''

एक दिन देवलालीकरजी ने उसे पास बैठाकर आशीर्वाद देते हुए कहा, ''बस लावनी, तेरी शिक्षा पूरी हुई। अब तू किसी भी बड़ी से बड़ी सभा में निडर होकर गा सकती है। तू जहाँ भी गाएगी, वहीं संगीत का झरना बह उठेगा।''

और कुछ दिनों बाद ही ऐसा अवसर भी आ गया। सारे देश में आजादी का अलख जगाते घूम रहे महात्मा गांधी बेलापुर में भी आए। बापू के सम्मान में देवलालीकरजी ने एक बड़े सम्मेलन का आयोजन किया। दूर-दूर लोग वहाँ आए। हजारों लोगों की भीड़। उनमें गाँव के अनपढ़ देहाती थे तो शहर के पढ़े-लिखे वकील, अध्यापक और दूसरे लोग भी। बूढ़े, बच्चे, स्त्रियाँ सभी। हर कोई बापू की एक झलक देख लेना चाहता था। मंच पर बापू के साथ-साथ देवलालीकरजी भी मौजूद थे। लोग सुनने के लिए बेताब थे, भला गांधीजी क्या कहते हैं।

देवलालीकरजी ने जब बोलने के लिए गांधीजी का नाम पुकारा, तो उन्होंने हँसते हुए कहा, ''मैं भाषण तब दूँगा, जब आप···'वैष्णव जन तो तेणे कहिए रे, जे पीर पराई जाणे रे' वाला गीत मुझे सुनाएँगे।''

देवलालीकरजी विनम्रता से बोले, ''वैष्णव जनवाला गीत तो आप सुनेंगे बापू, पर वह मैं नहीं, मेरी शिष्या लावनी सुनाएगी। और यकीन मानिए, वह मुझसे ज्यादा अच्छा गाती है।''

सुनकर बापू ही नहीं, हर कोई हैरान।

सभा में हजारों लोगों की भीड़ थी। बड़े-बड़े उस्ताद संगीतकार भी वहाँ गाने का हौसला न कर पाते। लावनी ने डरते-डरते गाना शुरू किया। पर गाना शुरू करते ही उसे लगा, उसके अंदर कोई अनोखी शक्ति आ

गई है। और देखते-ही-देखते उसके सुरों का जादू हजारों लोगों को रसमग्न करने लगा। पूरी सभा जैसे आनंद-विभोर थी। सचमुच वहाँ संगीत का झरना बह उठा था।

जितनी देर लावनी गाती रही, ऐसा सन्नाटा था, जैसे किसी ने मंत्र की शक्ति से सबको बाँध दिया हो। किसी के हिलने और साँस लेने की भी आवाज नहीं आ रही थी। लावनी के सुरों में सबको अपने दिल का संगीत सुनाई दे रहा था। जब लावनी पूरा गीत गाकर रुकी, तो गुरुजी ने इशारा किया और अब लावनी गा रही थी, 'श्रीरामचंद्र कृपालु भज मन···!' और उसके बाद फौरन बाद, 'वंदे मातरम्···!'

पूरी सभा जैसे लावनी के गीत के सुरों पर बह रही थी। और मंच के बीच में बैठे बापू की तो जैसे समाधि ही लग गई हो। बीच-बीच में धीरे से आनंदमग्न होकर सिर हिलाने लगते। लग रहा था, बापू आज बोलने नहीं, बस सुनने ही आए हैं।

□

वंदेमातरम् के बाद देवलालीकरजी ने फिर बापू से कुछ बोलने का आग्रह किया। बापू उठे। बोले, ''मैं तो कुछ और ही सोचकर आया था। पर इस नन्हीं बच्ची के गायन ने वह सब भुला ही दिया। लग रहा था, सामने मानो सरस्वती ही बैठी हुई गा रही है। वैष्णव जन में सबके लिए प्यार और हमदर्दी की भावना है तो 'रामचंद्र कृपालु भज मन' सुनकर मन उन राम की शरण में चला जाता है, जो हर किसी को हिम्मत और हौसला देते हैं। और जब 'वंदेमातरम्' गा रही थी यह बच्ची तो मुझे लग रहा था, हमारी मातृभूमि भी तो जगजननी सीता ही है, जो आज कष्टों में है। सीता का उद्धार हुए बिना भला हमारे दिलों को चैन कहाँ पड़ेगा?''

बापू एक क्षण के लिए रुके। सामने उपस्थित लोगों पर एक नजर डाली। फिर प्यार से लावनी की ओर देखते हुए बोले, ''कितना कमाल है कि भक्ति, वैराग्य और देशप्रेम ये तीनों सुर इस छोटी-सी बच्ची लावनी के संगीत में ढलकर एक हो गए। बच्ची छोटी-सी है, पर इसके सुर बड़े हैं। अगाध समुद्र की तरह। लगा, चारों ओर झिलमिल-झिलमिल रोशनी हो रही है, और हजारों दीये एक साथ जल उठे हैं।···कितना सुंदर है इस बच्ची का गायन। मेरा आशीर्वाद है कि लावनी बड़ी होकर बड़ी संगीतकार बने। देश के लिए गाए और हजारों-लाखों दिलों को प्रकाशित करे।''

और लावनी···! बापू जब बोल रहे थे, तो उसे लगा कि उसके दिल में सचमुच राम-सीता आकर बस गए हैं और उनके चारों ओर अनगिनत दीये झिलमल-झिलमिल करते हुए प्रकाश बिखेर रहे हैं।

तभी उसे गुरु देवलालीकरजी की आवाज सुनाई दी, ''उठो बेटी, देखो बापू तुम्हें आशीर्वाद दे रहे हैं।'' लावनी एकाएक उठ खड़ी हुई। बापू पास खड़े उसी से कह रहे थे, ''आँखें नहीं हैं, तो दुःखी मत होना बेटी। दो आँखें नहीं हैं तो क्या हुआ? तुम्हारे भीतर झिलमिल-झिलमिल करते इतने सारे दीये तुम्हारी हजारों आँखें ही तो हैं, जो तुम्हें रास्ता दिखाएँगी और कभी भटकने नहीं देंगी।''

कुछ देर बाद लावनी माँ के साथ वापस लौट रही थी, तो उसके भीतर खुशी समा नहीं रही थी। बोली, ''माँ···माँ, आज बापू का आशीर्वाद मिल गया। अब तो लगता है, मैं जरूर अच्छी गायिका बन जाऊँगी। बड़ी होकर मैं बहुत गाऊँगी माँ, बहुत!''

''हाँ बेटी गाना, जरूर गाना।' बेटी को खुश देखकर गायत्री अम्माँ की खुशी का भी कोई ओर-छोर नहीं था। मन में उमगते उत्साह के साथ बोलीं, ''दीवाली तीन दिन बाद है बेटी। पर मेरी दीवाली तो आज ही है, जब तुझे इतना खुश देखा है। घर जाकर मैं तो आज ही दीये जलाऊँगी।''

लावनी खुश होकर बोली, ''जलाना माँ, और मैं भी उन्हें देख लूँगी। सच्ची-मुच्ची। सचमुच मेरे अंदर की आँखें खुल गई हैं।''

लावनी जब यह कह रही थी, अम्माँ ने मन-ही-मन उसकी बलैयाँ लेते हुए कहा, ''ऐसी बेटी तो भगवान् सबको दे, जिसकी बातों से मन में दीये जलते हैं।''

साअ

५४५ सेक्टर-२९, फरीदाबाद-१२१००८ (हरियाणा)
दूरभाष : ०९८१०६०२३२७

इस अंक के चित्रकार

लालबहादुर श्रीवास्तव

चित्रकार, कहानीकार एवं कवि। कहानी, कविता, लघुकथा, साक्षात्कार, व्यंग्य, यात्रा-वृत्तांत, बाल कविताएँ, कहानी पत्र-पत्रिकाओं एवं समाचारों में निरंतर प्रकाशित। 'नया सवेरा, धूप छांव बाल संग्रह मुखौटे लघु कथा-संग्रह प्रकाशित। जनगणना २०११ में विशिष्ट सेवाओं एवं देश के प्रथम जनगणना गीत लेखन के लिए राष्ट्रपति रजत पदक से सम्मानित। वर्ष २०१६ में सरस्वती विहार शैक्षिक संस्थान इंदौर द्वारा साहित्य सेवा सम्मान २०१६ से पुरस्कृत एवं कई संस्थानों द्वारा रचनाओं पर सम्मानित।

साअ

संपर्क : श्री चैतन्य योग, गली नं. २७, फ्लैट नं. ८१७
चौथी मंजिल, डी.डी.ए. फ्लैट्स
मदनगीर, नई दिल्ली-११००६२
दूरभाष : ९८७१९७३८८८

हद से हद तक

● माया मिश्र

नजर बार-बार जाकर एक ही जगह अटक जा रही थी। उसमें मुझे रमा की झलक दिखाई दे रही थी। एक-दो बार उससे नजर भी मिली, लेकिन दुविधा खत्म नहीं हुई। इस दुविधा को कई बार झटका भी कि कहाँ रमा का वसंत में खिले फूल जैसा चेहरा और कहाँ यह पतझड़ की ठूँठ।

रमा मेरी बचपन की सखी है। एक-दूसरे से दिल से जुड़ी, सुख-दु:ख की साथी। बचपन से जवानी तक का सफर हमने साथ ही तय किया था। दो शरीर एक जान थीं हम दोनों। एक-दूसरे के सामने अपना दिल खोल देती थीं।

उसके पिता अकसर बीमार रहते थे। घर में गरीबी थी। कमाई का कोई और साधन नहीं था। माँ घरों में काम करके पति का इलाज और रमा की पढ़ाई का खर्चा सँभाले थीं। मुझसे उनकी तकलीफ देखी नहीं जाती। घर से छिपाकर उनकी मदद करती रहती थी। मेरे घरवाले नहीं चाहते थे कि मैं उससे दोस्ती रखूँ। मेरे पिताजी ऊँचे पद पर थे। उनका सामाजिक स्तर काफी ऊँचा था। घरों में काम करनेवालों से कोई संबंध रखूँ, यह उन्हें मान्य नहीं था। उनके रोकने-टोकने पर भी हमारी दोस्ती में कोई दरार नहीं पड़ी। मैं सबकी नजर बचाकर खाने-पीने की कुछ चीजें लेकर उसके घर पहुँच जाती। वह खुश हो जाती। वह मेरे घर आने की हिम्मत कभी न जुटा पाई। हमारी दोस्ती इसी तरह आगे बढ़ती गहरी होती गई। बारहवीं तक एक साथ ही पढ़ाई की। उसके बाद उसकी शादी हो गई और वह दिल्ली चली गई। बिछड़ते समय हम दोनों सखियाँ जी भर गले मिलती और रोती रहीं। हर बेटी की तरह मायके आने का सुख उसे नहीं मिला। कई साल तक वह मायके नहीं आई। इसी दौरान मेरी भी शादी हो गई। मैंने उसे शादी में बहुत याद किया, पर वह नहीं आ सकी। इस तरह हमारे बीच दस वर्षों का अंतराल आ गया।

रमा की सुंदरता अवर्णनीय थी। गोरा रंग, लंबे काले बाल, लंबा छरहरा बदन, गोल चेहरा और उसपर चमकती बड़ी-बड़ी काली आँखें, लोगों को अपनी तरफ बरबस खींच लेती थीं। स्कूल जाते समय लोग उसे मुड़-मुड़कर देखते तो मैं झेंप जाती। सोचती, 'मैं इतनी सुंदर क्यों नहीं हूँ?' कभी-कभी उसकी सुंदरता से जलन भी होती। बहुत प्रयास भी करती कि मैं भी सुंदर दिखूँ।

रमा अपने माँ-पिता की लाड़ली व इकलौती संतान थी। वे पलकों पर बिठाकर रखते थे। उसकी छोटी-से-छोटी खुशी का ध्यान रखते थे। रमा ने एक बार उसे बताया भी था कि वह माँ-पिता की शादी के बारह वर्षों बाद पैदा हुई थी। उन्होंने तो संतान की उम्मीद ही छोड़ दी थी। घर में सास, जेठानी, देवरानी सब बहुत प्रताड़ित करते थे। दादी ने तो पिताजी की दूसरी शादी करने का फैसला भी कर लिया था, लेकिन पिताजी के सामने दादी की एक न चली। वे माँ को लेकर शहर आ गए, इलाज करवाया और बारह वर्षों बाद वह दिन भी आया, जब माँ की कोख में मैं फूल की तरह खिली। माँ-पिता के जीवन में खुशी के रूप में जब मैं आई तो मानो पतझड़ में वसंत छा गया। उनका परिवार पूरा हो गया था। उसके पिता दुबारा गाँव लौटकर नहीं आए। शहर में ही दरबानी की नौकरी करने लगे।

सुपरिचित रचनाकार। हिंदी अकादमी दिल्ली द्वारा शिक्षक सम्मान, मधुबन संबोधन पुरस्कार से कहानी पुरस्कृत, संप्रति रघुवीर सिंह मॉर्डन सी.से. स्कूल, दिल्ली में वरिष्ठ अध्यापिका।

आज जो महिला सामने दिख रही थी, उसमें रमा की छवि उभर रही थी, लेकिन दिल उसे रमा मानने को तैयार नहीं था। काफी देर तक इसी उधेड़-बुन में लगी रही, अंत में निश्चय किया कि पूछने में क्या हर्ज है।

''रमा!'' मैंने पीछे से आवाज दी।

वह चौंककर पलटी। पहचानने वाली निगाहों से मुझे जाँचती रही, फिर एकाएक उछल पड़ी, ''गीता तू!''

मेरी दुविधा समाप्त हो चुकी थी। खुशी सँभाल नहीं पाई और उससे लिपट गई। अद्‌भुत मिलन था। आँखों की वर्षा रुक नहीं रही थी। दोनों सखियाँ इस मिलन में परम आनंद का अनुभव कर रही थीं। दोनों ने एक-दूसरे के आँसू पोंछे। थोड़ी शांत हुईं तो एक-दूसरे का हाथ पकड़ा और वहीं एक रेस्टोरेंट में बैठ गईं।

बीती बातें जो शुरू हुईं तो थमने का नाम ही नहीं ले रही थीं। लेकिन सारी बातों के बीच भी बार-बार उलझ जाती कि फूल आखिर मुरझा क्यों गया? बातों-बातों में मैंने पूछ ही लिया, ''आखिर तू इतनी बदल कैसे गई? शरीर, चेहरा सूख गया है, बीमार थी क्या?'' चेहरे पर फैली खुशी क्षणभर में उड़ गई और वहाँ विषाद छा गया। आँखों से सावन-भादों की झड़ी लग गई। मुझे पछतावा होने लगा कि क्यों मैंने उसके जख्मों को कुरेदा! उसे चुप कराने का प्रयास करती रही। जब वह चुप हुई तो मैंने उससे कहा, ''रमा, अपनी सखी से अपनी व्यथा नहीं बताओगी?'' वह रोते हुए बोली, ''तुमसे नहीं कहूँगी तो किससे

कहूँगी ? और मेरा है ही कौन ?'' फिर आगे बोली, ''माँ साल भर पहले ही चल बसी थीं। पिताजी भी अब नहीं रहे। उन्हीं की अंतिम क्रिया में आई थी। अब अगर गई तो शायद ही फिर कभी आना होगा। और हमारा मिलना तो शायद··· !''

उसने अपने बारे में जो बताया, उसकी पीड़ा मौत से कम न थी। जैसे-जैसे वह अपनी वेदना प्रकट कर रही थी, वैसे-वैसे मेरा दिल छलनी हुआ जा रहा था। शादी के बाद तो उसका जीवन ही बदल गया। पति शराबी था और बेरोजगार भी। जबकि शादी के समय बताया गया था कि नौकरी करता है। माँ उसे कुछ रुपए खर्च के लिए रोज दे देती थी। शुरू में तो उससे भी पैसे माँगकर खर्च करता था, लेकिन धीरे-धीरे वे भी खत्म हो गए। उसके बार-बार कोंचने पर कोई नौकरी पकड़ता भी तो कुछ महीने बाद छोड़ देता। उसे बॉस की हुकूमत पसंद नहीं आती। संयुक्त परिवार था, अतः घरेलू खर्चे की चिंता नहीं थी। साथ रहते-रहते इसकी गलत आदतों की परत-दर-परत खुल रही थी। अभाव होने के बावजूद शराब में कोई कमी नहीं थी; साथ ही सोने पर सुहागा गाँजे, चरस का शौकीन था। शादी के शुरुआती दौर से ही उसे अपमानित किया जाता रहा। पति की हर गलती का आरोप उसपर मढ़ दिया जाता। घरवालों को अपनी भड़ास निकालने के लिए एक आसान, सहज प्राप्य सामान बन गई थी। उम्र कम थी, इसलिए विद्रोह की क्षमता भी जागी नहीं थी। इसे अपनी नियति मानकर चुपचाप सहन कर रही थी। अपनी कमजोरी छिपाने के लिए पति भी अब उसे डाँटने-डपटने लगा था। कभी-कभी हाथ भी उठा देता था। समय भी उसके प्रति क्रूर ही रहा। जल्दी ही दो बच्चों की माँ भी बन गई। परिवार की प्रताड़ना के साथ-साथ पति की प्रताड़ना में भी विस्तार हो रहा था। अब उसके साथ-साथ बच्चों पर भी हाथ उठने लगे थे।

उसकी व्यथा मुझे मृत्यु तुल्य लग रही थी। उसका दर्द मेरे अंतस्थल को छलनी किए जा रहा था। रमा चुप हो गई। गला भर गया था, आवाज रुँध गई थी। रोने लगी। मैंने उसे रोने दिया, क्योंकि मन का गुबार निकल जाए तो अच्छा है। थोड़ी देर रोने के बाद शांत हो गई।

मैंने चाय-बिस्कुट मँगवा लिये थे। चाय पीकर वह थोड़ी सामान्य हुई। फिर उसने बताना शुरू किया, ''एक दिन तो हद ही हो गई। दिन भर खटने के बाद जब रात को खाली हुई तो अचानक मुन्ना चिल्लाने लगा। देखा तो तेज बुखार था। अब क्या करूँ ? पास में पैसे भी नहीं थे। किससे माँगू ? रात के दस बज रहे थे। पति घर पर नहीं था। ग्यारह बजे घर आया तो नशे में धुत्त। अब इससे क्या कहूँ ? घर में सब सो चुके थे। 'मुन्ना को चुप कराओ', दहाड़कर बोला। मैं चुप कराने की लगातार कोशिश कर रही थी, पर मुन्ना चुप नहीं हो रहा था। वहशी दरिंदे की तरह उसने जोर से लात मारी। लात सीधे मुँह पर लगी। होंठ कट गए और खून की धारा बह निकली। असहनीय दर्द से बिलबिला उठी। मुन्ना, जो गोद में था, छिटककर दूर जा गिरा और जोर-जोर से चिल्लाने लगा। बेटी सहमी सी एक किनारे खड़ी थी। चिल्ला नहीं रही थी, पर लगातार आँसू बह रहे थे।

इस चीख-पुकार की आवाज सुनकर घर का कोई सदस्य नहीं आया। इस तरह की आवाज के सभी अभ्यस्थ हो चुके थे। यह रोज का किस्सा था। हर रात कमरे में शोर-गुल उठता, फिर शांत हो जाता। उसने अपने आप को सँभाला, मुन्ना को उठाया और बच्ची के सिर पर हाथ फेरा। पति को देखा, जो सारे फसाद की जड़ था। वह भी नशे में धुत्त जमीन पर लुढ़ककर सो गया था।

पति के ऐसे व्यवहार के बाद भी उसे इस अवस्था में देखकर वह तड़प उठती थी। किसी तरह उठाकर उसे बिस्तर पर लिटाया। थोड़ी देर में मुन्ना और बच्ची भी सो गए, सिर्फ उसी की आँखों में नींद नहीं थी। उदास आँखों से पति को देख रही थी। मन में बहुत कुछ घुमड़ रहा था। आँखों से आँसू सूख चुके थे। अब उसे रुलाई नहीं आती थी। कहाँ गए वे सपने, जो शादी के समय एक लड़की देखती है—पति का सुख, परिवार का सुख, खुशहाल जिंदगी ? यहाँ तो कुछ भी नहीं था। कहकर उसने गहरी साँस ली। उसका एक-एक वाक्य मेरे मानस-पटल पर हथौड़े की तरह चोट कर रहा था।

रमा को कभी भी मैंने खुद से अलग नहीं समझा था। उसे पीड़ा होती तो उस पीड़ा को उससे भी ज्यादा मैं महसूस करती। आज भी मेरे साथ यही हो रहा था। उसका दर्द मेरे अंतर्मन को छूता जा रहा था।

हमें वहाँ बैठे हुए काफी समय गुजर चुका था। शाम गहराने लगी थी। रात की स्याही की तरह उसकी वेदना भी बढ़ती जा रही थी। उसने फिर कहना शुरू किया, ''नियति की क्रूरता अभी भी चरम सीमा पर थी। नशे की हालत में ही पति दुर्घटनाग्रस्त हो गया। लाख कोशिशों के बावजूद उसे बचाया नहीं जा सका। उसकी मौत के बाद वह बिल्कुल अकेली हो गई। दो जून की रोटी मिलती रहे, सिर पर छत बनी रहे, बच्चों की पढ़ाई चलती रहे, इसके लिए जी-जान से घरवालों की सेवा में जुटी रहती है। फिर भी वे अपमानित करने का कोई मौका नहीं छोड़ते।

आज उसकी आँखों की धारा के साथ उसकी सारी पीड़ा भी बह रही थी। जिसके साथ मेरी आँखें भी दे रही थीं। कैसे जीया होगा इसने ? जहाँ कदम-कदम पर काँटे हों, वहाँ अपने आपको कैसे बचाया होगा ? सबकुछ तो अच्छा था उसमें, पर उसकी अच्छाई को समझने वाली आँखें नहीं थीं।

''घरवालों का अपमान, अपनी लाचारी, बच्चों का सहमा चेहरा आदि अब सहन नहीं हो रहा है !'' वह सिसक उठी। मैं दर्द से कराह उठी, ''इतने वर्षों से इतनी पीड़ा कैसे सहन की तुमने ?''

रमा बोली, ''क्या करती ? कहाँ सहारा ढूँढ़ती ? माँ का घर भी सक्षम नहीं था कि यहाँ आ जाती।''

मैंने कहा, ''कोई काम क्यों नहीं करती ?''

''क्या करूँ? पढ़ाई तो बारहवीं के बाद ही छूट गई थी। कई बार कोशिश भी की कि प्राइवेट ही कर लूँ, पर घरवाले राजी नहीं हुए।''

मैंने समझाया, ''कोई बात नहीं। अपना कोई काम शुरू कर दे। अपने पैरों पर खड़ी हो जाओगी तो कोई बोल नहीं पाएगा।'' उसने कहा, ''क्या काम करूँ? मुझे तो कुछ आता भी नहीं।'' मुझे ध्यान आया कि रमा सिलाई, कढ़ाई, बुनाई में दक्ष थी।

उसे याद दिलाया, ''तुम सिलाई-कढ़ाई तो अच्छा कर लेती हो। क्यों न यहीं से शुरुआत की जाए।''

उसके चेहरे पर प्रश्नचिह्न उभर आया।

''देखो, अगर अपने आप को साबित करना है तो ठोस कदम उठाने ही पड़ेंगे। घरवाले विरोध करेंगे, क्योंकि उनके हाथ से काम करनेवाली जो निकल जाएगी।''

रमा ने सिर झुका लिया।

''तुम्हें अपने बच्चों का भविष्य भी तो देखना है। अभी तुम चल-फिर रही हो, काम कर रही हो तो दो वक्त की रोटी तुम्हें और तुम्हारे बच्चों को मिल जाती है। एक समय ऐसा भी तो आएगा, जब घरवाले अपने-अपने रास्ते निकल जाएँगे, तब तुम क्या करोगी? शरीर में हमेशा एक जैसी ताकत नहीं रहती। वैसे भी अपने आपको जिस तरह थका रही हो, तुम्हारी सेहत देखकर ऐसा नहीं लगता कि ज्यादा दिन स्वस्थ रह पाओगी! तब तुम्हारा और तुम्हारे बच्चों का क्या होगा?'' उसकी आँखों में उभरी चमक देखकर लगा कि वह मेरी बात समझने लगी है। चेहरे पर आत्मविश्वास झलकने लगा, साथ ही आँखों में कुछ उलझन भी साफ नजर आई।

मैं समझ गई और बोली, ''मुझसे जितना हो सकेगा, तुम्हारे लिए जरूर करूँगी!''

उसने चुप्पी तोड़ी, ''लेकिन सिलाई मशीन, जगह और सबसे बड़ी बात कि शायद घरवाले मंजूरी न दें।''

मुझे गुस्सा आ गया, ''अब तक तुम्हारे घरवालों ने तुम्हारे लिए, तुम्हारे बच्चों के लिए किया क्या है? तुम्हें खुद निर्णय लेना होगा और आगे बढ़ना होगा!''

वह तैयार हो गई, पर मेरी मदद लेने में हिचकिचा रही थी। ''मेरा तुम पर इतना भी अधिकार नहीं कि तुम्हारे लिए कुछ कर सकूँ?'' मेरा रुआँसा चेहरा देखकर मुझसे लिपट गई। मुझे स्वीकृति मिल चुकी थी।

हम दोनों देर तक सारी योजना तैयार करती रहीं और घर जाते समय मैंने महसूस किया कि उसके चलने का अंदाज बदल गया है।

□

सिलाई का सारा सामान इकट्ठा हो गया। तय हुआ कि शुरू में वह अपने कमरे से ही काम शुरू करेगी। बाद में देखा जाएगा। इस दौरान उसने अपने घरवालों के विरोध का डटकर सामना किया, परंतु अपने निर्णय पर डटी रही। उसने और मैंने अपने-अपने जाननेवालों से काम देने के लिए भी कहा। कुछ इंतजार के बाद एक-दो काम मिले। खूब मन लगाकर उसने काम शुरू किया।

मेरा मुंबई लौटने का कार्यक्रम बन चुका था, अत: उसे समझा-बुझाकर चली गई। मन में बहुत सुकून था कि उसकी सखी अब बेसहारा नहीं रहेगी। फोन पर हमारी बातचीत होती रहती थी। बातों से पता चला कि वह बहुत खुश है। उसने बताया कि उसका काम लोगों को बहुत पसंद आया। उसके हाथ में बहुत सफाई है। एक-दूसरे से संपर्क के कारण उसे ज्यादा काम मिलने लगा है। आमदनी भी अच्छी हो रही है। अपनी मदद के लिए उसने एक लड़की को भी काम पर लगा लिया है। यह सब सुनकर मन खुश हो जाता था। जो कल दूसरों पर आश्रित थी, वह आज इस योग्य बन चुकी है कि दूसरों की भी जीविका चला सके। मैं आत्मगौरव से भर उठती थी कि मेरे प्रयास से किसी को अपनी मंजिल मिल गई।

दो वर्षों के बाद फिर दिल्ली आना हुआ। स्टेशन पर रमा भी बच्चों के साथ आई थी। आज वह मुझे फिर पुरानीवाली फूल जैसी खिली रमा नजर आई। चेहरा खुशी और आत्मविश्वास से सराबोर था। हम दोनों खुशी से लिपट गईं। आँसू रुकते ही नहीं थे। आज जो आँसू बह रहे थे, वे खुशी के थे। इतनी खुशी शायद ही जीवन में मैंने महसूस की थी। वह मुझे अपने घर ले जाना चाहती थी, पर मैंने अगले दिन आने का वादा किया। अगले दिन वह मुझे लेने आ गई। जहाँ मैं पहुँची, वह उसका घर नहीं था। मुझे आश्चर्य हो रहा था कि यह मुझे कहाँ ले जा रही है। मेरा उलझा हुआ चेहरा देखकर उसकी मुसकान गहरी हो गई। वह मुझे एक बहुत बड़े शोरूम में लेकर गई, जहाँ कई लोग सिलाई, कढ़ाई और बुनाई का काम कर रहे थे।

''यह मुझे कहाँ ले आई? घर चलो न!''

''गीता, यही है मेरा घर।''

मैं असमंजस में उसे देखने लगी। उसने बताया, ''जब काम बढ़ने लगा अरैर बाहरवालों का आना-जाना लगा रहता, तब घर के सदस्य एतराज करते। एक-दो से तो लड़ाई भी कर चुके थे। इस तरह तो मेरा काम-धंधा चौपट हो जाता। घर में कलह होने लगी थी, तब मैंने एक छोटी सी दुकान किराए पर ले ली। ईश्वर मेरे साथ था। मेरी मेहनत व लगन से बरकत होने लगी और एक साल में ही मैंने यह शोरूम ले लिया। शोरूम के ऊपर ही रहने का इंतजाम भी कर लिया। अब बच्चों के साथ यहीं रहती हूँ। घर छोड़ दिया। घरवाले अब मुझसे जुड़ना चाहते हैं, लेकिन दु:ख के समय मैंने सबको परख लिया था, इसलिए जितना जरूरी है, उतना ही संबंध रखती हूँ। सच है कि सच्चा खून का ही नहीं होता, जो समय पर साथ निभाए वही सच्चा होता है।''

रमा की उपलब्धि देखकर मन झूम उठा, जैसे यह उसकी उपलब्धि नहीं, मेरी उपलब्धि है। ऐसा लगा कि उसके साथ-साथ मेरा जीवन भी सार्थक हो गया।

साअ
आर-३८ वाणी विहार,
उत्तम नगर, नई दिल्ली-११००५९
दूरभाष : ९५६०५४५०७०

आलेख

भाई के लिए बहन का दिया हुआ कवच–भैया दूज

● विद्या विंदु सिंह

भैया दूज भाई–बहन के निश्छल गहरे प्रेम का पर्व है। हमारे पूर्वजों ने पर्व–त्योहारों की यह शृंखला जो बनाई थी, उसमें दूरदर्शिता है। साल में चैत्र और कार्तिक दोनों महीनों में भैया दूज का पर्व आता है। साथ ही सावन–भादौं का महीना भी बहन–बेटियों का महीना माना जाता रहा है। सावन में नाग पंचमी, रक्षाबंधन और भादौं में कजली तीज एवं हरतालिका तीज पर भी बेटियों को मायके बुलाना आवश्यक माना जाता रहा है। इसी प्रकार माघ महीने में मकर संक्रांति के खिचड़ी पर्व पर भी बहन–बेटियों को खिचड़ी के साथ उपहार भेजने की प्रथा रही है।

ये प्रथाएँ अब धीरे–धीरे लुप्त होती जा रही हैं। किंतु अभी भी गाँवों में इनका महत्त्व समझने वाला मन बचा है। इन व्रत–त्योहारों के गीत और कथाएँ बहन–बेटियों के प्रति भाई के दायित्व का स्मरण कराते हैं। बहनें इन अवसरों पर मायके जाने के लिए उत्सुक रहती हैं और यदि भाई न बुलाए या लिवा जाने के लिए न आए तो वे अपनी व्यथा गाकर या रोकर व्यक्त करती हैं। भाई की प्रतीक्षा में उनकी आँखें बिछी रहती हैं।

आज पिता की संपत्ति में भाई–बहन दोनों के समान अधिकार की चर्चा होती है, कानून भी बन गया है। किंतु ये व्रत–पर्व–त्योहार स्नेह और भरोसे के परस्पर कुशल कामना के लिए होते थे। उनकी दृष्टि में संपत्ति का नहीं, स्नेह का अधिकार महत्त्व रखता है।

भारत के अधिकांश क्षेत्रों में शरद ऋतु में भैया दूज का प्रचलन अधिक है। शरद ऋतु में जल और आकाश के साथ मन भी निर्मल तथा स्वच्छा होने लगता है, पृथ्वी का पंक सूखने लगता है, जलकुंभी से ढके तालाब और खंदकें साफ दिखाई देने लगती हैं। घास–फूस के कचड़े और कीचड़ से ढकी राहें खुलने लगती हैं। भोर होते ही जोतो–बोओ पुकारने वाली चिड़ियों के स्वर उनके कंठ से फूटने लगते हैं। धूप तीखी और रातें कुछ शीतल होने लगती हैं, चंद्रमा सुहाने लगता है। इस ऋतु में ताप और शीतलता, तप और सिद्धि, उजला और काला का अद्‌भुत समन्वय रहता है। इस ऋतु के आगमन की सूचना खंजन पक्षी से मिलता है, आधा उजला आधा कजरारा रंग, क्षण भर भी स्थिर न रहनेवाला चंचल पक्षी, जाने कहाँ से आता है और घर–आँगन–द्वार पर फुदकता रहता है।

ऋतु का संदेश लेकर आनेवाले पक्षी का स्वागत 'चिरैया गौर' के व्रत से किया जाता है।

भैया दूज से एक दिन पहले चिरैया गौर का व्रत–पर्व मनाया जाता है। जो संभवत: प्रकृति से तादात्म्य भाव स्थापित करने के लिए होता है। चिड़िया बेटी की प्रतीक है, गौरी बेटी का स्वरूप है, इसलिए चिरैया गौर के पर्व में भी कन्या के महत्त्व को उजागर किया गया है। चिरैया गौर–कार्तिक शुक्ल प्रतिपदा को मनाई जाती है।

सुपरिचित लेखिका। कहानी, उपन्यास लोक-साहित्य, नाटक, निबंध, बाल-साहित्य आदि विषयों पर शताधिक कृतियाँ तथा अनेक संपादित कृतियाँ प्रकाशित। आकाशवाणी एवं दूरदर्शन के विभिन्न केंद्रों से निरंतर प्रसारण। अनेक संस्थाओं द्वारा सम्मान एवं पुरस्कार।

पिड़िया व्रत भी इसी दिन से प्रारंभ होकर पंद्रह दिन तक चलता है। मंदिरों में मूर्तियों का अपूर्व श्रंगार करके अन्न, फल, सब्जियों तथा पकवानों और मिठाइयों का भोग लगाकर उन्हीं से मंदिर विविध भाँति सजाया जाता है। मिठाइयों का मंदिर बनता है, चावल और विभिन्न पकवानों के पहाड़, पेड़ तथा घर बनते हैं। पूजन के बाद प्रसाद रूप में यह सामग्री बाँट दी जाती है। काशी में बाबा विश्वनाथ और माता अन्नपूर्णा का अन्नकूट महोत्सव भी इसी तिथि को मनाया जाता है।

जहाँ दीवाली का पूजन होता है, वहीं चौक पूरकर एक 'नदवा' (मिट्‌टी का पात्र) में चावल जगाए जाते हैं। इसके ऊपर बड़ा सा दीपक रखकर तेल भर देते हैं। इसे रातभर जलना चाहिए। कह दिया जाता है, 'सब घर सोवै, नदवा जागै।' यहीं पर पितरों के लिए तेरह दीपक जलाए जाते हैं। पूजा होने के बाद ठाकुरजी, तुलसीजी, तिजोरी, मोटर गाड़ी, हर कमरे व कूड़ेदान तक पर दीपक जलाए जाते हैं। चार बजे तड़के ही नदवा खोलकर चावल पीस लिये जाते हैं। इसमें घी, शक्कर मिलाकर दूध में सानकर चिड़िया, पुस्तक, खड़ाऊँ आदि बनाई जाती हैं।

सब सुहागिनें नहा–धोकर श्रंगार करके दीवार पर उरेही हुई दीवाली के पास बैठकर चिड़िया की भी पूजा करती हैं। फिर इसके अंडों को बाएँ पैर के अँगूठे के नीचे हलके से दबाकर पूँछ की ओर से यह चिड़िया मौन होकर खाती हैं। इसके अंडों को छत पर डालकर, हाथ धोकर, गौर का सुहाग लेकर तब बोलती हैं। संभवत: यह रीति पशु–पक्षियों की बलि प्रथा के विरोध में लोक विश्वास की रक्षा करते हुए चिड़ियों के प्रतीक बनाकर उनकी बलि करने के परिवर्तित रूप में प्रारंभ की गई।

यम द्वितीया, भैया दूज दीवाली के तीसरे दिन कार्तिक शुक्ल द्वितीया को होती है। लड़कियाँ भाई को टीका लगाकर एक क्रीड़ा करती हैं। जिसमें प्रमुख पात्र होते हैं खिरणिच (पक्षी विशेष) बहन और चकवा पक्षी भाई।

व्रती लड़कियाँ मिट्‌टी की सात बहनें बनाती हैं और एक चकवा भाई। साथ ही दुर्गा, चंद्रमा, सूर्य आदि के चित्र भी भाई–बहन के स्नेह के साक्षी और रक्षक के रूप में बनते हैं। मिट्‌टी में लकड़ी खोंसकर वृंदावन बनता है, इसी मिट्‌टी में जरई (जौ की पौध) बोई जाती है।

भैया दूज की कई कहानियाँ हैं, जो स्थानीय भेद के साथ थोड़ा परिवर्तित रूप में कही जाती हैं। कुछ कहानियों का उदाहरण देना आवश्यक है जो इस पर्व के मर्म को समझाती हैं।

भैया दूज को यम द्वितीया भी कहा जाता है। इसमें यम और उनकी बहन यमुना की कहानी कही जाती है। भाई-बहन के अटूट प्रेम और उत्सर्ग की कथाएँ होती हैं। जो भाई अपनी बहन के घर इस दिन भोजन करे, उसे अकाल मृत्यु का भय नहीं होता।

यमराज की बहन यमुना की कथा भैया दूज और जमुना छठ दोनों पर्वों में कही जाती है। चैत्र मास की शुक्ल षष्ठी को यमुनाजी का जन्मदिन मनाया जाता है। पुराण में कथा है कि सूर्य भगवान् की दो संतानें थीं—एक पुत्र यमराज और एक पुत्री यमुना। यमुना में स्नान करके पूजन करने से जमुना माँ प्रसन्न होती हैं। जो भाई-बहन हाथ पकड़कर यमुना स्नान करके साथ-साथ पूजन करते हैं, वे हर जन्म में भाई-बहन होते हैं। और उनका अमंगल नहीं होता। यमुना को उनके भाई यमराज ने वरदान दिया है कि जो आज के दिन यमुना की पूजा करेगा, उसे मेरा भय नहीं रहेगा।

यम द्वितीया की कथा है—यमराज एक बार बड़े आग्रह के बाद अपनी बहन यमुना से मिलने उसके घर आए। भाई के आने की खुशी में यमुनाजी ने विविध पकवान बनाकर इस अवसर पर पूजन किया। यमराज ने अति प्रसन्न होकर बहन से वरदान माँगने को कहा। यमुना ने यही वर माँगा कि आज के दिन जो भाई-बहन यमुना में साथ-साथ स्नान करें या यमुना में यमराज की पूजा कर दीपदान करें, उन्हें यमलोक का दर्शन न करना पड़े। यमराज ने कहा, ''एवमस्तु।'' यही नहीं, यह आशीर्वाद भी दिया कि इस दिन जो बहन अपने भाई को भोजन कराएगी, टीका करेगी, उसे वैधव्य का कष्ट नहीं होगा। उस दिन कार्तिक शुक्ल द्वितीया थी, तब से यह पर्व प्रारंभ हुआ।

बहनें भाइयों को टीका करके उनकी कुशल कामना करती हैं, और भाई उन्हें उपहार देते हैं। भैया दूज बहन का दिया हुआ रक्षा कवच है भाई के लिए।

गोवर्धन पूजा के दिन बहनें भाई को शाप देती है। भैया दूज में चौक पर विविध चित्रकारी की जाती है। वहाँ बैठकर बहनें भटकटैया के काँटे से अपनी जिह्वा को गोदकर भाई के लिए गोवर्धन पूजा के दिन जो शाप दिया, उसका प्रायश्चित्त करती हैं। जिस-जिस भाई को शाप दिया, उसकी आयु बढ़े ऐसा आशीर्वाद देती हैं।

भाई दूज के दिन सिर के ऊपर से पाँच बार घुमाकर गुम की डाली (पौध विशेष) फूल-पत्ते सहित उपले पर रखते हैं, जो भाई की सारी अलाय-बलाय (आधि-व्याधि) उतारने के लिए होता है। उपला गोवर्धन के ऊपर रखकर मूसल से कूटती हैं, उसी पर सुपारी भी रखकर कूटती हैं। उसी सुपारी के टुकड़े भाई को बासी मुँह खिलाती हैं। पूजा के कथा, गीत भी हैं। यम द्वितीया के चित्रों में यम-यमी, सगुन चिरैया, गंगा-यमुना, गाय-बैल, दीपक, सतिया, कुम्हार का आँवा, कमल आदि बनते हैं। बहनें रुई में ऐपन, रोली लगाकर माला बनाकर भाई की आयु जोड़ती है। इस पर्व पर एक दिन पहले 'गोधन' कूटते समय बहनें अपने सभी भाइयों को, भतीजों को शाप देती हैं 'फलाँ भइया को खाऊँ'। जिनके घर में लड़कियाँ नहीं होतीं, वे पड़ोस की लड़कियों से कह देती हैं कि बेटी! मेरे बेटे और नाती को भी खा लेना। यह प्रथा इस लोक विश्वास के कारण है कि बहनों की बद्दुआ भी आशीर्वाद बनकर लगती है। कई लोककथाएँ हैं, जिसमें बहन ने भाई की जीवन रक्षा की। अभिप्राय है कि भाई को पुनर्जीवन मिले। पुनर्जीवन के लिए पुराना जीवन खोना पड़ता है। इसीलिए शाप और आशीष का यह दुहरा भाव कथाओं में व्यक्त है।

जो कथा कही जाती है वह इस प्रकार है—एक बहन थी, वह पशु-पक्षियों की भाषा समझती थी। भाई का विवाह होनेवाला था। वह फूल तोड़ने गई तो दो चिड़ियाँ आपस में बात कर रही थीं, 'इसका भाई विवाह के दिन ही मर जाएगा।' यह बेचारी दुखी होगी। दूसरी ने कहा, क्या उसके बचने का कोई उपाय नहीं है? पहली चिड़िया बोली, उपाय तो है, पर बड़ा कठिन। यदि उसे उसकी बहन लगातार शाप दे, गाली दे तो उसकी मृत्यु टल सकती है। लेकिन यह भेद अगर वह किसी को बता देगी तो कोई लाभ नहीं होगा।

उसी क्षण से बहन ने भाई को शाप देना शुरू किया, मेरा भाई मर जाए, मैं उसको खा लूँ, मैं उसका मरा मुख देखूँ। लोगों ने उसे डाँटा, मारा कि ऐसा अशुभ मत बोल, भाई की शादी होनेवाली है। जब वह नहीं मानी तो सब लोगों ने समझ लिया कि यह पागल हो गई है। वह लगातार भाई के पीछे साये की तरह चलती रही और अपना शाप-गाली दुहराती रही।

बारात में भी वह जिद करके गई, मंडप में भी भाई के पीछे खड़ी रही, शाप बुदबुदाती रही। जैसे ही भाई सिंदूर दान के लिए हाथ बढ़ाया उसके सिर पर शूल गिरा, जिसे बहन ने अपने आँचल में रोक लिया। और वहाँ से बाहर चली आई। अब सबको मालूम हुआ कि जरूर यह कोई रहस्य था, जिसे वह जानती थी और भाई का रक्षा-कवच बनी रही।

भइया दूज की कथा-हल्दी का टीका

एक थी बहन। उसके सात भाई थे। सबसे छोटा भाई बहन से बहुत स्नेह करता था। भैया दूज के दिन जब तक बहन से टीका न करा ले, खाता नहीं था। एक दिन उसकी पत्नी बोली कि यदि तुम्हारी बहन की शादी कहीं दूर हो गई, तो तुम क्या करोगे? वह बोला कि मैं बहन की शादी दूर करूँगा ही नहीं।

उसने माँ से कहकर बहन की शादी निकट के गाँव में करा दी। भाग्य की बात, बहनोई बड़े खराब स्वभाव का था। वह अपनी ससुराल वालों को देखना भी न चाहे। उसने अपनी दुल्हन से साफ-साफ कह दिया कि मेरे घर में तुम्हारे मायकेवाले नहीं आ सकते। मुझे अपना घर बिगाड़ना नहीं है। उस बेचारी ने रो-धोकर संतोष किया और मायके यह संदेशा भेज दिया कि यहाँ कोई न आए।

अब आया भैया दूज का त्योहार। भाई का जी नहीं माना। वह नहा-धोकर टीका कराने बहन की ससुराल पहुँचा। उसके बहनोई ने देखते ही पकड़कर सात तालों के भीतर बंद कर दिया और स्वयं काम पर चला गया। वह छोटा भाई वेश बदलना जानता था। वह छोटा पिल्ला (कुत्ता का बच्चा) बनकर नाली के रास्ते बहन के पास पहुँच गया। वहाँ रो-रोकर हल्दी पीस रही थी और सोच रही थी कि हल्दी तो पीस रही हूँ, पर भैया को टीका कैसे कर पाऊँगी। इतने में कुत्ते का पिल्ला, कूँ-कूँ करता हुआ उसके पास पहुँच गया। बहन दु:खी तो थी ही, उसे क्रोध आ गया। उसने हल्दी सने हाथ से पिल्ले के सिर में मार दिया। पिल्ले ने मार खाते ही सोने की मुहर (स्वर्ण का सिक्का) अपने मुँह से उगल दिया और मोरी (नाली) के रास्ते फिर वापस चला गया।

सोने की मुहर देखकर बहन सोच में पड़ गई। बहनोई लौटकर आया तो ताले खोलकर भीतर गया। वहाँ क्या देखता है कि भाई के माथे पर पाँच टीका हुआ है। उसे निकालकर बाहर लाया और दालान में बैठाकर भीतर अपनी पत्नी के पास पहुँचकर उससे पूछने लगा कि तुमने अपने भाई को पाँच टीका कैसे लगाया?

वह बोली, ''मैंने तो अपने भाई की शक्ल ही नहीं देखी, एक टीका की कौन कहे, पाँच कैसे लगाती? हाँ, एक आश्चर्य की बात हुई है कि नाली के रास्ते एक कुत्ते का पिल्ला आया था, मैं हल्दी पीस रही थी, गुस्से में आकर मैंने हल्दी के हाथ से उसे मार दिया तो वह एक सोने की मुहर उगलकर फिर नाली के रास्ते वापस लौट गया।''

मुहर देखकर और सारी बात देख-सुनकर बहनोई को अपनी भूल का भान हुआ तो उसने माफी माँगते हुए कहा कि मुझे बड़ा अफसोस है कि ''मैं भाई-बहन के सच्चे प्रेम के बीच रुकावट बना। सच्चा प्यार कभी नहीं टूटता।'' कहकर अपने साले को भीतर ले गया। जैसे उनके दिन फिरे, वैसे ही सबके फिरें।

बुझनी बूझने वाली बहन की कथा

एक स्त्री साँप से प्रेम करती थी। साँप उसके पति को काटने के लिए रोज प्रयास करता था। एक दिन उसके जूते में छुपकर बैठ गया। पति ने जूता पहनने से पहले उसे झाड़ा तो साँप भागने लगा। पति ने उसे मार डाला। स्त्री ने यह देखा तो दु:खी हुई और मरे साँप के कई टुकड़े करके एक अपने जूड़े में रखा, एक चारपाई के पाये के नीचे रखा, एक मचिया के नीचे रखा और एक जलते हुए दीपक में रख दिया।

उसने अपने पति से पहेली पूछी, कि यदि यह पहेली नहीं बूझ पाओगे तो आपको मरना पड़ेगा।

पहेली थी—एक खटिया धरा, एक मचिया धरा, एक जूरा धरा, एक दियना धरा, बूझो क्या?

पति नहीं बूझ पाया तो बोली अब मरने को तैयार हो जाओ। पति ने कहा, मरने से पहले मैं अपनी बहन से मिलना चाहता हूँ। जैसे ही घर से निकला, दरवाजा गिरने लगा। उसने वादा किया कि लौटकर आऊँगा तो तुम्हारे लिए खंभा लाऊँगा। आगे शेर मिला, उससे वादा किया कि मुझे छोड़ दो, आते समय तुम्हारे लिए शिकार लाऊँगा। उफनती नदी डुबोने लगी तो प्रार्थना की कि आपके लिए पियरी लाकर चढ़ाऊँगा।

बहन के यहाँ पहुँचकर पहेली और रास्ते के अपने वादे बताकर बोला कि बहन, आखिरी बार मिलने आया हूँ। बहन ने भाई को भोजन कराकर सुला दिया और बोली कि मैं सुबह तुम्हारे साथ चलूँगी। वह चिंता से रातभर सो नहीं सकी। बहुत भोर में शौच के लिए खेत में गई तो वहाँ दीप लक्ष्मियाँ बातें कर रही थीं। एक लक्ष्मी बोली कि आज तो मैं रातभर दुर्गंध से परेशान रही। दूसरी ने कारण पूछा, तो उसने बताया कि एक स्त्री ने अपने पति से पहेली पूछी है, वह पहेली नहीं बता पाया। आज वह बहन से मिलने आया है, कल वापस जाने पर उसे मरना पड़ेगा।

सब पूछने लगीं, पहेली क्या है? तो उन्होंने पहेली का रहस्य बताते हुए कहा कि उसी साँप का एक टुकड़ा उसने दीपक में रख दिया था।

बहन ने पहेली समझ ली। भाई को लेकर वापस लौटी। नदी को पियरी चढ़ाई, शेर को बकरी सौंपी, फाटक को खंभा लगाया। भौजाई के पास पहुँचकर भाई से बोली—चारपाई, मचिया के नीचे से साँप के टुकड़े निकालो, पत्नी के जूड़े से और दीपक से टुकड़े निकालो। यही तुम्हारी पहेली का उत्तर है। भाई ने पहेली बूझकर अपनी जान बचाई। इस प्रकार बहन ने अपने भाई के प्राण बचाए।

भैया दूज में टूटे बीर की यह कथा भी कही जाती है।

टूटे बीर की कथा

एक गाँव में एक ग्वालिन रहती थी। उसकी सास उसे बड़ी यातनाएँ देती थी। ग्वालिन अपनी सखियों के साथ रोज दूध-दही बेचने के लिए बाजार जाती थी। ग्वालिन सीधी थी। अत: उससे दूध-दही कोई खरीदता ही नहीं था। घर आने पर सास उसे बहुत मारती थी कि तू कुछ बेच ही नहीं पाती है। ग्वालिन प्रतिदिन जिस रास्ते से होकर दूध-दही बेचने जाती थी उसी रास्ते में एक टूटे बीर (जिनके हाथ-पैर टूटे थे) पड़े रहते थे। वे बार-बार पुकारते, ''कोई मेरे ऊपर दूध ही डाल दो। जिससे मेरी जलन मिट जाए।'' परंतु कोई भी ग्वालिन अपनी मटकी का दूध-दही उनके ऊपर भला क्यों डाले। वे यों ही रास्ते में पड़े रहते और ग्वालिन आती-जाती रहतीं।

इस ग्वालिन ने सोचा कि मुझसे तो कोई दूध-दही खरीदता नहीं। घर में वैसे भी मार पड़ती है, ऐसे भी पड़ेगी। चलो आज इनके ऊपर ही दूध डाल देती हूँ। बस उसने मटकी का सारा दूध और दही टूटे बीर के ऊपर डाल दिया। टूटे बीर प्रसन्न हो गए।

उस दिन शाम को जब ग्वालिन वापस अपने घर लौटी तो उसकी मटकी में सोने की अशर्फियाँ भरी हुई थीं। सास ने देखा तो बहू के चरित्र पर आक्षेप करने लगी। इस पर बहू ने कहा, ''मुझे कुछ नहीं मालूम।

रास्ते में टूटे बीर पड़े हैं, चलो उनसे पूछ लो।''

सास टूटे बीर के पास गई। उन्होंने बताया कि तुम्हारी बहू बड़ी ही दयालु है, उसी ने दूध-दही से मेरी जलन शांत की है। बदले में मैंने ही उसे यह दान दिया है। तुम्हारी बहू लक्ष्मी है, जाओ उसे ठीक से रखो।

टूटे बीर के प्रताप से उनकी ग्वालिन बहन अपने घर में सुखपूर्वक रहने लगी।

भाई को वीर भी कहा जाता है। क्योंकि भाई बहन की रक्षा तभी कर पाएगा, जब वह वीर होगा। रक्षाबंधन भाई द्वारा बहन को दिया हुआ रक्षा का वचन है तो भैया दूज बहन द्वारा आशीर्वाद का भाई के लिए रक्षा-कवच।

व्रत-पर्व-त्योहारों की ये परंपराएँ हमारी संस्कृति के ऐसे पुष्प हैं, जो हर ऋतु में खिलते हैं, सुगंध बिखेरते हैं और हमें संबंधों की मिठास के साथ उनकी आवश्यकता तथा महत्त्व का संदेश दे जाते हैं। ये संबंध समाज के प्रति संबंधों के निर्वाह का स्वर गुँजाते रहेंगे। बहनें आश्वस्त रहेंगी, वीर भाई उनकी रक्षा में सक्षम रहने का संकल्प लेते रहेंगे।

'श्रीवत्स' ४५, गोखले विहार मार्ग
लखनऊ-२२०६००१
दूरभाष : ९३३५९०४९२९

जमाना नहीं रहा

लघुकथा

● कोमल वाधवानी 'प्रेरणा'

जैसे ही उसके कंधे पर किसी ने हाथ रखा, उसने घबराकर हाथ झटक दिया, मुड़कर देखा तो प्रभा थी।

''मैंने तो बड़े प्यार से हाथ रखा था, पर तुम तो ऐसे चौंकी, जैसे करंट लग गया हो?'' सुमन की तेज चलती साँसों को भाँपते हुए प्रभा ने कहा।

''यानी तुमने मुझे··· ?''

सुमन मुसकरा उठी। उसके सहज होते ही प्रभा उसका हाथ खींचकर भीड़ भरे बाजार से बाहर निकली।

''चल थोड़ी देर बैठकर बातें करते हैं।''

''कहाँ?''

''वो पास में ही मटके की कुल्फी वाला है न। कुल्फी भी खाएँगे और बतियाएँगे भी। कितने टाइम बाद मिलना हो पाया है न!''

''हाँ, सचमुच।''

बातों का सिलसिला शुरू करते प्रभा ने कहा, ''मैंने तो सोचा था कि तुम कोलकाता गई होगी रितेश के पास, हर साल तुम्हारी दीवाली तो वहीं होती है!''

''जाती थी कभी···जाती थी।'' दोहराते हुए सुमन ने जवाब दिया।

''थी···मतलब?'' आश्चर्य से प्रभा ने पूछा।

''तीन साल पहले रितेश का दीवाली पर फोन आया। उसने संकोच से कहा, माँ, इस बार आप रहने दें। कल्पना कह रही है कि दीवाली पर इस बार उसकी मम्मी यहाँ आएँगी।''

''पर बेटा, मेरा तो रिजर्वेशन भी हो चुका है?''

''लेकिन माँ··।''

''पर क्या, रितु? समधनजी से मिले काफी समय हो गया है। बस, तीज-त्योहार पर फोन से बातें हो जाती हैं। अब वे आ रही हैं तो इस बहाने उनसे मिलना भी हो जाएगा। तुम्हीं सोचो, कितना आनंद आएगा! दोनों समधनें मिलकर रंगोली बनाएँगी, खूब सारे पकवान भी। इस बार की दीवाली कितनी मजेदार होगी! बस तू मुझे लेने स्टेशन पर आ जाना।''

''रितेश मुझे लेने आया तो, पर बेमन से। पूरे रास्ते खामोश रहा। घर पहुँचकर कल्पना का उतरा चेहरा देखा। स्वागत में कहीं जोश नहीं था। एक-दो दिन में ही मुझे सब समझ में आ गया। बच्चे ऐसा व्यवहार करेंगे, यह मेरी कल्पना से भी परे था। और कितने दिन जलील होती, इसलिए एक दिन रूमाल में एक हजार रुपए रखकर चुपचाप निकल आई। मुझे न तो वहाँ की भाषा आती थी और न ही अंग्रेजी।''

''ओह! फिर?''

''बड़ी मुश्किल से स्टेशन पहुँची। वहाँ रात तक एक बेंच पर बैठी रही और मोबाइल के बजने का इंतजार करती रही, पर वह नहीं बजा तो नहीं बजा। एक बिहारी टी.टी. की मदद से ट्रेन का टिकट लिया और यहाँ पहुँची।'' कहते-कहते सुमन की रुलाई फूट पड़ी।

''भूखी-प्यासी? पानी-वानी लिया कि नहीं?''

''मेरी प्यास बुझाने के लिए मेरी आँखें थीं न। उसके बाद से फिर वहाँ कभी नहीं गई।''

''ओह सुमी! सुनकर ही मेरा दिल बैठा जा रहा है। अब फिर दीवाली···। चल इस बार दीवाली पर मैं तेरे यहाँ आऊँगी।''

''भले ही आ। वेलकम, पर तू मेरी चिंता मत कर। रूबी और जूही दोनों बेटियाँ बारी-बारी से अमेरिका से यहाँ आती हैं मेरे साथ दीवाली मनाने।''

प्रभा की आँखों में आँसू देखकर सुमन ने कहा, ''तू भी जान ले, समझ ले और मान ले कि बेटों का जमाना नहीं रहा।''

कहकर सुमन ने कुल्फी का दोना और स्टिक तोड़-मरोड़कर डस्टबिन में फेंक दिए और शायद माँ-बेटे का रिश्ता भी।

'शिवनंदन', ५९५, वैशाली नगर
(सेठीनगर), उज्जैन-४५६०१० (म.प्र.)
दूरभाष : ०७३४-२५२५२७७

कौआ

● रश्मि गौड़

सुपरिचित लेखिका। बंबई में शिक्षा-दीक्षा एवं लालन-पालन हुआ। विज्ञान की स्नातक और मुंबई जैसे बहुभाषी महानगर में रहने के बावजूद अपनी भावनाओं को सहज ही सरल हिंदी में उतार पाती हैं। कई कहानियाँ पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित। दिल्ली के पाठ्यक्रम में बाल कहानियाँ 'रैपिड रीडर' में पढ़ाई जाती हैं। दो कहानी-संग्रह 'आधी दुनिया' तथा 'उस पार' प्रकाशित।

जब सोनी की शादी होनेवाली थी, वह फूली न समा रही थी कि उसकी शादी मुंबई जैसे शहर में हो रही थी। सब सहेलियाँ भी बड़ा रश्क कर रही थीं। निति बोली कि अब तो हमारी सहेली मुंबइया हो जाएगी तो हमें भूल जाएगी! उसे क्या भूल पाती, सोनी को तो दिन-रात अपने छोटे से शहर की याद भुलाए नहीं भूलती। मेरठ के खुले-खुले घर, आस-पड़ोस की चहल-पहल, वहाँ की मिठाई, चाट, क्या नहीं था वहाँ? यहाँ आकर इतना छोटा मकान मिला कि उस पर तो घड़ों पानी पड़ गया, उसे डर लगा रहता कि उसकी कोई सहेली या रिश्तेदार पधार गए तो सारी शान धरी रह जाएगी। अत: सोनी जब किराए के इस दूसरे घर में आई तो उसका दिल खुश हो गया। कहाँ वह दड़बे जैसा कमरा, खिड़की से परदा हट जाए तो पड़ोसी आँखों देखा हाल सुना सकते थे। रविवार को कहीं-न-कहीं घूमने जाने का कार्यक्रम रहता था।

एक साल के बाद रोहित ने यह खुशखबरी सुनाई कि वाजिब किराए पर एक बेडरूम व किचेन का फ्लैट मिल रहा है, चलकर देख ले। सोनी खुश तो हुई, पर दबी जबान से पूछा कि बालकनी है कि नहीं? रोहित उसकी तकलीफ जानता था, हँसकर बोला, ''तुम फाइनल करोगी, तभी लूँगा, आखिर घर की रानी तुम्हीं तो हो।'' सोनी ने फ्लैट देखा, छोटा होने के बावजूद उसका खुलापन उसे भा गया, उसने फौरन 'हाँ' कर दी। निश्चित दिन दोनों ने शिफ्ट किया। सोनी ने छोटी सी गणपति की पूजा की और सामान सेट करना शुरू कर दिया।

रसोई की खिड़की के सामने नीम का पेड़ था, जो नई-नई पत्तियों से लदा था। सोनी को अच्छा एहसास हुआ, लंबी साँस खींची, मानो अपने फेफड़े आज ही साफ कर लेगी। दूध उबाला, फिर चाय का पानी चढ़ाया। पेड़ पर चिड़ियाँ चहचहा रही थीं, उसे बड़ा आनंद आया। चाय छानकर दो कप में डाली और काँच की बरनी से रस निकालकर ज्यों ही चली कि एक कौआ बोलने लगा। सोनी मुड़ी और आधा टुकड़ा खिड़की पर रख दिया। ताज्जुब कि कौए ने वह टुकड़ा अपनी चोंच से नीचे गिरा दिया और फिर काँव-काँव करने लगा। सोनी ने अब पूरा रस निकालकर खिड़की पर रखा तो जनाब फौरन उसे चोंच में लेकर उड़ गए और एक डाल पर बैठकर स्वाद ले-लेकर खाने लगा।

सोनी हँसती हुई कमरे में चाय लेकर पहुँची तो विनय पूछने लगा, ''क्या हुआ मैडम, बड़ी खुश लग रही हो?'' सोनी ने किस्सा सुनाया तो वह भी हँसा और जाकर कौवे को देखा। कौए ने विनय को देखकर गरदन मटकाई, मानो कह रहा हो कि आगे से ध्यान रखना। मैं एंवई नहीं हूँ।

सोनी और विनय को इस फ्लैट में एक नया दोस्त मिल गया। वे उसे 'कागराज' पुकारते थे। ज्यों ही खाने का समय होता, वह खिड़की पर आ बैठता। रोटी पकाते-पकाते सोनी उससे बतियाती, वह इतने इत्मिनान से बैठता, गरदन हिलाता, गरदन मटकाता कि मानो सारी बातें समझ रहा हो। उसके लिए सोनी रोज एक छोटी सी गोल रोटी बनाती और धी चुपड़कर देती। शुरू-शुरू में सोनी ने आधी रोटी दी तो मानो गुस्से में आकर उसने नीचे गिरा दी। विनय ने यह सब सुना तो बहुत हँसा और बोला, ''पिछले जन्म में कोई जिद्दी बालक रहा होगा। पूरी ही चीज चाहिए इसे।''

एक दिन विनय बहुत खुशी-खुशी घर आया और बोला, ''मिठाई खिलाओ!'' सोनी ने पूछा, ''क्यों, क्या बात है, प्रमोशन हुआ है क्या?''

''प्रमोशन ही समझो, कंपनी ने अपने कर्मचारियों के लिए वर्षों पहले फ्लैट बनने शुरू किए थे। चार साल बाद अब वे बनकर तैयार हुए हैं। दो-तीन महीने में हमें तीन कमरेवाला मकान मिल जाएगा।'' विनय उमग-उमगकर बताने लगा।

सोनी खुश हुई, परंतु फिर एकदम से उदास हो गई और बोली, ''यहाँ से जाना पड़ेगा?''

''क्यों, तुम खुश नहीं हो? मुंबई में इतने बड़े फ्लैट्स कहाँ मिलते हैं?'' विनय ने चकित होकर पूछा।

''हमारे कागराज का क्या होगा?'' सोनी की आँखें गीली हो गईं।

''अरे पगली! यह अपना मकान थोड़े ही है। यहाँ से तो जाना ही पड़ता हमें!'' विनय ने समझाया।

अगले दिन फिर कागराज खिड़की पर आकर काँव-काँव करने लगे। सोनी ने सोचा था कि अब इससे ज्यादा प्रेम नहीं बढ़ाएगी, पर कागा हटा ही नहीं, तो सोनी रसोई में आई और रस्क पर मक्खन लगाकर उसे दिया। उसकी उदासी कागा से छुपी न रही। उसने रस्क को न देखकर उसकी ओर टेर लगाई, मानो पूछ रहा हो, 'क्या बात है?'

सोनी बोली, ''कागराज, अब ज्यादा प्रेम न बढ़ाओ, हम यह फ्लैट छोड़ रहे हैं दो-एक महीने में।''

ऐसा लगा कि सुनकर कागा भी उदास हो गया। रस्क की ओर

देखा भी नहीं और चुपचाप बैठा रहा। सोनी का दिल टूटने लगा, वह उसे और खुद को भी सांत्वना देते हुए बोली, ''देखो कागराज, कोई तरकीब निकालते हैं, तुमसे अब नाता जोड़ लिया है तो तोड़ेंगे नहीं। चलो, अपना रस्क खा लो और पानी पी लो। दिन में तुम्हारी रोटी बनेगी।''

कागा ने भी मानो कुछ सोचा और रस्क ले जाकर पेड़ पर बैठकर खाने लगा। कंपनी के फ्लैट्स ज्यादा दूरी पर नहीं थे, होंगे करीब एक किलोमीटर पर, परंतु अपने हैं, जाना तो पड़ेगा ही। किसी को बताएँ भी क्या कि एक कौए के कारण नहीं जाना चाहते। सोनी फ्लैट्स देखने गई तो वहाँ की छटा देखती रह गई। पूरी तरह से नई कॉलोनी, बड़े-बड़े पॉम के पेड़, कतारों में गाड़ियों की पार्किंग और बच्चों के खेलने-दौड़ने के पार्क बने थे। फ्लैट भी बड़ा व काफी खुला था। दो बेडरूम, एक ड्राइंग रूम, दो बाथरूम और सारे कमरों में बालकनी। और हाँ, यहाँ पर भी रसोई के सामने ऊँचा पेड़ था—मौलश्री का।

वापस लौट सोनी ने कागा की वही छोटी सी रोटी बनाई, मक्खन चुपड़ा और खिड़की पर रख दी। कागराज आए, 'काँव-काँव' कर कुछ बताने की कोशिश करने लगे। सोनी कुछ नहीं समझी, वह सिर हिलाती रही और अपनी दो रोटी बनाकर रख दी।

मन तो उदास था ही, 'प्रीत करे दु:ख होय', मानो यह चरितार्थ हो रहा था। वह आकर अंदर लेट गई। 'इस फ्लैट में ११ महीन कैसे बीत गए, पता ही नहीं चला।' सोचते-सोचते उसे नींद आ गई। उसने सपने में देखा कि वे नए मकान में चले गए हैं और इनका प्यारा मित्र कागराज कुछ भी नहीं खा रहा, बहुत दुबला हो गया है। वह चौंककर उठी, हाथ-मुँह धोया और चिंतित सी बैठी रही। आज भोजन के बाद मीठा भी नहीं खाया। जल्दी ही जाना था, इसलिए अलमारी खोलकर कपड़ों का जायजा लिया। थोड़ी दूर ही जाना है तो छोटे से ट्रक में काम चल जाएगा। पैकिंग भी न करनी पड़ेगी। 'अगर कागराज को किसी कार्टन में ले जाएँ तो कितना मजा आ जाए।' इस विचार के आते ही सोनी का दिल बल्लियों उछलने लगा।

अगले दिन उसने कागराज के लिए अंदर रोटी रखी, परंतु वह अंदर न आया और खिड़की पर बैठकर ही रोटी के लिए काँव-काँव करता रहा। सोनी निराश हो गई। घर के अंदर तक नहीं आ रहा तो कार्टन में कैसे आएगा।

आखिर जाने का दिन नजदीक आ गया। एक-दो बार सोनी की कोशिश रही कि वह कौए को पुचकारकर, समझाकर, कार्टन में प्रवेश करा दे, परंतु उसकी हर बात समझने वाला कागराज कार्टन में बैठने से परहेज कर रहा था। पता नहीं, उसके दिमाग में क्या था। खाना-पीना ढंग से खा रहा था, हाँ, चिंतित अवश्य लगता था।

खैर, जिस दिन घर छोड़ रहे थे, उस दिन सोनी ने कागराज को भरे नयनों से अलविदा कहा और उसकी रोटी रख तेजी से बाहर निकलकर कार में बैठ गई। आगे-आगे विनय कार में और पीछे छोटा ट्रक था।

कॉलोनी पहुँचने पर ज्यों ही सोनी उतरी तो अचानक उसे लगा कि उसके कान बज रहे हैं—काँव···काँव···काँव···काँव···।

नजर उठाकर देखा तो उसके प्यारे कागराज ट्रक पर सामान के ऊपर बड़े विजयी भाव से बैठे हैं, मानो सोनी को समझा रहे हों कि मुझे कार्टन में लाने की जरूरत नहीं, मैं भी तुम्हारी तरह सवारी बनकर आ सकता हूँ। सोनी का मन पुलकित हो गया और वह दौड़कर अपने फ्लैट में गई, रसोई में जाकर देखा तो कागराज खिड़की पर बैठे वही रोटी खा रहे हैं, जो बिछड़ते समय उसे दी थी।

आज सोनी को यह घर स्वर्ग से भी सुंदर लग रहा था।

डी.३०३ आम्रपाली
ईडन पार्क, ब्लॉक : एस-२७
नोएडा-३०१३०१
दूरभाष : ९८६८८०१६१२

कविता

शुभ दीपावली

● ममता पाठक

चलो, एक ऐसा दीप जलाएँ,
ज्ञानपुंज की लव लगाएँ;
चलो, एक ऐसा दीप जलाएँ।

मानस रूपी दीया सजाकर,
स्नेह का तेल भराएँ;
चलो, एक ऐसा दीप जलाएँ।

जग का सारा मिटे अँधियारा,
पल्लवित-पुष्पित हो भाईचारा;
भेदभाव की दूरी घटाएँ,
चलो, एक ऐसा दीप जलाएँ।

हो कोई न प्रांतवाद,
नहीं कोई हो भाषावाद;
आतंकवाद की जड़ हिलाएँ
चलो, एक ऐसा दीप जलाएँ।

एकता हो ध्येय हमारा,
मानवता हो केवल नारा;
लघु बड़ेन को गले लगाएँ
चलो, एक ऐसा दीप जलाएँ।

भाईदूज का पावन पर्व न्यारा,
प्रसारित करें संदेश हमारा;
भूले-भटके को राह दिखाएँ
चलो, एक ऐसा दीप जलाएँ।

सेंचुरी रेयान
कल्याण (महाराष्ट्र)
दूरभाष ८१०८५०१६०१

निबंध

मनुष्य नहीं हुआ पुराना

● नर्मदा प्रसाद उपाध्याय

अरस्तू ने सदियों पहले कहा था कि जितना सोचा जा सकता था, वह सोचा जा चुका। तब फिर आज क्या हो रहा है? अरस्तू के पहले और बाद में हजारों चिंतक हुए। अरस्तू ने यह भी नहीं बताया कि अंतिम बार सबसे नया कब सोचा गया? अरस्तू के समय में कंप्यूटर भी नहीं थे, जो अपने ढंग से सोचते। यंत्र की सोच और यांत्रिक सोच तो आज की देन है।

फिर क्या बात है कि हम आज भी किसी चिंतन विशेष पर उद्वेलित हो उठते हैं? क्यों किसी कविता पर मुग्ध हो जाते हैं? क्यों किसी को सुनकर, कुछ पढ़कर बेचैन हो जाते हैं? आखिर यह सब भी तो पहले कहा, सुना और लिखा गया होगा?

वास्तव में हम दुहराव पर उद्विग्न, मुग्ध या बेचैन नहीं होते, उसके प्रस्तुतीकरण पर होते हैं। हू ब हूपन दुहराव है, प्रस्तुतीकरण नहीं। वह ऐसा पुनर्संयोजन है, जो यह आभास कराता है कि वह बिल्कुल नया है। तब क्या यह संसार अनंत सदियों से नएपन और मौलिकता के भ्रम में जी रहा है?

हम प्रस्तुतीकरण की नई भंगिमा को नएपन की संज्ञा दे देते हैं, उसे मौलिक कह देते हैं। प्रस्तुतीकरण तो रोज दृश्य का भी होता है, लेकिन उसके संबंध में प्रश्न नहीं उठते। सुबह उदित होते, दोपहर में दमकते और साँझ को अस्त होते सूरज, अपनी घटती-बढ़ती कलाओं वाले चंद्रमा, सरसराते वृक्ष, बहती हवा, कलकल प्रवहमान नदी और उपवन में फूले फूलों को देखकर हम मुग्ध हो लाते हैं, लेकिन उद्विग्न नहीं होते, बेचैन नहीं होते, इसलिए कि वे हमारी चेतना के अंग बन गए हैं, लेकिन नया सुनना और पढ़ना चेतना को झकझोरता है। इसलिए कि वह चेतना का अंग नहीं है, वह बाहरी है। वह नई भंगिमा में प्रस्तुत हो रहा है। कुछ नया दिखाई दे तो उसके बारे में भी यही प्रतिक्रिया होती है, इसलिए कि वह सूरज, चाँद, वृक्ष, हवा, नदी और फूल नहीं है।

सृष्टि के ये उपादान मनुष्य के चिंतन की तरह नहीं हैं। ये उसके मस्तिष्क से भिन्न हैं। यदि मनुष्य का मस्तिष्क भी इन उपादानों की तरह होता तो फिर इस संसार में एक चिरंतन स्थिरता, अखंड नीरवता और निश्चल गति होती, लेकिन मानव मस्तिष्क ने इस संसार को चिरनूतन बना दिया। उसके चिंतन की प्रयोगधर्मिता ने विश्व को नित्य परिवर्तन के परिधान पहना दिए, ऐसे परिधान जो पलक झपकते बदल जाते हैं, जिनके रंग पल-पल में बदलते हैं और जिनकी कोई स्थायी पहचान नहीं रह पाती।

सुप्रसिद्ध साहित्यकार। लगभग पच्चीस वर्षों से लेखन के क्षेत्र में सक्रिय। अब तक आठ ललित-निबंध संग्रह, दो संपादित ग्रंथ व 'भारतीय चित्रांकन परंपरा' पुस्तक प्रकाशित। मध्य प्रदेश साहित्य परिषद् द्वारा 'मुकुटधर पांडेय पुरस्कार' तथा मध्य प्रदेश हिंदी साहित्य सम्मेलन द्वारा 'वागीश्वरी पुरस्कार' से पुरस्कृत।

कृष्ण, महावीर और बुद्ध, आर्यभट और भास्कराचार्य, शंकर और वल्लभ, आइंस्टीन और स्टीफन हॉकिंग जैसे अनेक व्यक्तित्व वे हैं, जिन्होंने संसार को नित्य नए परिधान पहनने का संस्कार सौंप दिया।

मनुष्यता इसीलिए प्रणम्य है, वह इसीलिए देवत्व को पराजित करती है, क्योंकि देवताओं के स्वर्ग जैसी एकरसता मनुष्य ने धरती पर नहीं रहने दी। स्वर्ग जैसी एकरसता और मोक्ष जैसा निर्जन मौन सच्चा मनुष्य कभी नहीं चाहेगा, क्योंकि स्वर्ग और मोक्ष की भूमि सृजन के लिए बंजर है, इसलिए मौलिकता यदि भ्रम भी है तो ऐसा भ्रम इस सृष्टि का सौभाग्य है।

मनुष्यता इसीलिए प्रणम्य है, वह इसीलिए देवत्व को पराजित करती है, क्योंकि देवताओं के स्वर्ग जैसी एकरसता मनुष्य ने धरती पर नहीं रहने दी। स्वर्ग जैसी एकरसता और मोक्ष जैसा निर्जन मौन सच्चा मनुष्य कभी नहीं चाहेगा, क्योंकि स्वर्ग और मोक्ष की भूमि सृजन के लिए बंजर है, इसलिए मौलिकता यदि भ्रम भी है तो ऐसा भ्रम इस सृष्टि का सौभाग्य है।

रचना, फिर मिटाना; मिटाना, फिर रचना और मिटाते-मिटाते अपने आपको मिटाकर मनुष्यता के लिए रचना मानव की फितरत रही है और इसी फितरत के कारण यह दुनिया आज प्रत्येक क्षण नए-नए रूपों में सृजित होकर चिरनवीन बने रहनेवाली दुनिया है।

मिटने और रचने की इस हठ को पालकर मनुष्य स्वयं को भी रचता आया है। यही कारण है कि रचनात्मकता उसका संस्कार बन गई, ऐसे स्पंदन बन गई, जिनके बिना वह जी नहीं सकता। मनुष्य कभी पुराना नहीं हुआ। वह अपने आपको नया बनाता रहा और विश्व को विकसित करता रहा।

तब यह सवाल है कि फिर मनुष्य का यह जो दानवीय रूप दिखाई देता है, वह क्या है? प्रदूषण से लेकर आतंक तक जो कुछ इस मनुष्य ने संसार को दिया, क्या यह उसकी रचना है, उसका सर्जनात्मक अवदान है? क्या विध्वंस को रचाव कहा जाएगा?

नहीं, विध्वंस रचना नहीं है। मनुष्य की फितरत की देन सिर्फ सृजन नहीं है, संहार भी है। मनुष्य फितरती नहीं होता तो फिर संहार नहीं होता। उसकी एक फितरत यह भी है कि वह संहार को भी सृजन मान लेता है। अल्फ्रेड नोबेल डायनामाइट जैसे विस्फोटक का आविष्कार करते हैं और अपनी वसीयत में शांति के लिए उस पुरस्कार को भी स्थापित करते हैं, जो किसी शांतिदूत मनुष्य को या संस्था को

दिया जाता है। लेकिन सच यही है कि संहार के मुकाबले सृजन ही सदैव विजयी हुआ है, इसीलिए तमाम आशंकाओं के बीच भी संसार का रथ समय के पथ पर कभी रुका नहीं। इस रथ का सारथी मनुष्य है। अर्जुन का रथ हाँकते उसके सारथी बने कृष्ण इसी मनुष्य की उज्ज्वल अस्मिता के रूपाकार हैं।

मनुष्य के इसी उजास से भरपूर स्वरूप का उद्घोष करते हुए भागवतकार कहते हैं कि मैं एक गुप्त रहस्य की बात कहता हूँ कि मनुष्य से श्रेष्ठ कुछ भी तो नहीं है—

''गुह्यं ब्रह्म तदिदं ब्रवीमि, न हि मानुषात् श्रेष्ठतरं हि किंचिद्।''

और चंडीदास कहते हैं कि मनुष्य से बड़ा सत्य कुछ भी नहीं है—

''सबार ऊपरे मानुष सत्य ताहार ऊपरे नाहीं।''

इतिहास की गवाही है कि ईश्वर की गति तब तक नहीं है, जब तक वह मनुष्य नहीं बनता। ईश्वर से जुड़े तमाम रूपक, कथाएँ, किंवदंतियाँ और आख्यान उसके मानव रूप से जुड़े हैं। निराकार ईश्वर का न तो कोई आख्यान है और न इतिहास।

मनुष्य इसीलिए मौलिक है, अभिनव है, चिरनूतन और चिरंतन सर्जक है, क्योंकि वह सूरज, चाँद, वृक्ष, हवा, नदी और फूल नहीं है। यदि वह यह सब होता तो फिर दुहराव होता। वह मनुष्य इसीलिए है, क्योंकि उसके पास नित्य-नए प्रस्तुतीकरण की भंगिमाएँ हैं और उसका मूल स्वर संहार का नहीं, सृजन का है। इसीलिए जब कभी कवि को सृजन के आहत होने की आशंका होती है तो महुए की बाँसुरी और साँझ के तारे की याद आती है। स्वर्गीय केदारनाथ सिंह की यही अमर स्मृति मनुष्य की पहचान के रूप में अब सुरक्षित रह गई है—

मनुष्य इसीलिए मौलिक है, अभिनव है, चिरनूतन और चिरंतन सर्जक है, क्योंकि वह सूरज, चाँद, वृक्ष, हवा, नदी और फूल नहीं है। यदि वह यह सब होता तो फिर दुहराव होता। वह मनुष्य इसीलिए है, क्योंकि उसके पास नित्य-नए प्रस्तुतीकरण की भंगिमाएँ हैं और उसका मूल स्वर संहार का नहीं, सृजन का है। इसीलिए जब कभी कवि को सृजन के आहत होने की आशंका होती है तो महुए की बाँसुरी और साँझ के तारे की याद आती है।

आम की सोर पर
मत करना वार,
नहीं तो महुआ रात भर
रोएगा जंगल में,
कच्चा बाँस कभी काटना मत
नहीं तो सारी बाँसुरियाँ हो जाएँगी बेसुरी,
कल जो मिला था राह में
हैरान-परेशान
उसकी पूछती हुई आँखें
भूलना मत,
नहीं तो साँझ का तारा
भटक जाएगा रास्ता।

८५, इंदिरा गांधी नगर
आर.टी.ओ. कार्यालय के पास
केसरबाग रोड, इंदौर-९ (म.प्र.)
दूरभाष : ०९४२५०९२८९३

दीवाली का नजराना जवानों को

गीत

● सुबेदार कृष्णदेव प्रसाद सिंह

कबूल कर लो जवानो! दीवाली पे मेरे प्यार का नजराना,
कभी चले न आपके आगे, प्रतिकूल मौसम का मनमाना।
सफलताओं का रिमझिम सावन, बरसे आपके जीवन में,
छलके सीमाओं पर भी आपके हाथों में खुशियों का पैमाना।
कश्मीर से कन्याकुमारी तक फैला है विशाल देश हमारा,
कदम-कदम पर है आपको, अपनी माटी से फर्ज निभाना।
कबूल कर लो जवानो!···

जब हम शाम में घरों में मना रहे होंगे दीवाली, दीये जलाकर,
आप तब अपनी बंदूक से दुश्मनों पर, लगा रहे होंगे निशाना।
दीवाली पर छुट्टी नहीं ली होगी आपने, अपनी देशसेवा के चलते,
आपके इंतजार में थाली में, आपके घर में सूख जाएगा खाना।
आपकी वजह से ही हमारी आजादी सुरक्षित है, दुश्मनों के डर से,
यह मैं नहीं कह रहा जमाने से, कह रहा है यह मुझसे जमाना।
कबूल कर लो जवानो!···

नाज है आपकी कर्तव्यनिष्ठा पर, हमेशा पूरे भारत देश को,
दिल कहता है खोल दे तू, अपने जवानों के लिए खुशी का खजाना।
आपका आदर्श यही कहता है कि हर भारतवासी अपना है आपका,
हर कोई एक समान है, आपके लिए नहीं है कोई यहाँ बेगाना।
प्रकाश पर्व दीवाली मुबारक आपको, दे नई रोशनी सदा आपको,
गुनगुनाए आपके होंठ हमेशा, दुश्मनों पे सिर्फ जीत का ही तराना।
कबूल कर लो जवानो!···

फ्लैट न.-२, मयूरेश अपार्टमेंट, आड़के नगर-३
जय भवानी रोड, नासिक रोड
नासिक-४२२१०२ (महाराष्ट्र)
दूरभाष : ९०११७७७५७२

उठा ले गई उसको

● महाराजकृष्ण रसगोत्र

महाराजकृष्ण रसगोत्र ब्रिटेन में भारत के उच्चायुक्त तथा मोरक्को, ट्यूनिशिया, नीदरलैंड, नेपाल, फ्रांस तथा यूनेस्को में राजदूत रहे। भोपाल गैस त्रासदी के समय भारत के विदेश सचिव थे। 'पद्मभूषण' से सम्मानित।

नारी का तराना

जिस घर में नारी रोती है
उस घर का आगे क्या होगा,
जिस देश में नारी दुखिया है
उस देश का आगे क्या होगा?

जिस घर में रोती है नारी
अपमानित है, अवहेलित है,
आहों में प्रेमविहीना की
वह घर न फले फूलेगा कभी।

जिस घर में उसका आदर है
उस घर में उसकी हँसी-खुशी,
सुख प्रेम की है वर्षा करती
वह घर बहिश्त बन जाता है।

बिटिया, भगिनी, युवती महिला
हैं आदर के हकदार सभी,
इन प्रेम स्वरूपी देवियों की
आहों में है दैवी ज्वाला।

उस ज्वाला में जल जाएगा
जो इनसे दुरव्यवहार करे,
सुख चैन नहीं वह पाएगा,
जो इनका ना सरकार करे।

जिस देश में नारी दुखिया है,
अवहेलित और उपेक्षित है,
उस देश का उन्नति कर पाना
संदेह युक्त है, शंकित है।

भारत के कोने-कोने से
रोजाना खबरें आती हैं,
नन्हीं पर हुआ बलात्कार
युवती के संग दुराचार।

नर-नारी बराबर हैं दोनों
सत्ता के बँटवारों में, जो
समभाग नहीं इनको देगा
वह देश पिछड़ता जाएगा।

अबला मत समझो नारी को
वह देशभक्त है सबला है,
भारत की उन्नति चाहती है,
इस देश के वीरों को उसका
बस एक यही है संदेसा—
आओ हम मिलकर काम करें
भारत का भाग्य बदल दें।

भारत के सब पुरवासी हम
ऋषि-मुनियों की संतानें हैं,
मानव समाज की उन्नति का
हमको जो मंत्र पढ़ाया था
उन्होंने, उस पर गौर करें,
फिर मिलकर उस पर अमल करें—
नार्यस्तु यत्र पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता: ॥

गम

हम गरीबों पर
गम तेरी सबसे बड़ी रहमत है,
परवरदिगार, तेरी मेहरबानियों के बँटवारे में
और जो भी कमी आई हो
तूने हमेशा खुले हाथों हमें गम बाँटे हैं;
क्या करें जिंदगी ही चार दिन की रही,
वरना तेरे गम तो बहुत लंबे हैं।

अधिकतर मेरे गम खो गए याद के बेपैंदे कुएँ में,
सिर्फ एक गम ताजा है—
अपने हसीं, दिलदार बच्चे की
एकाएक मौत के वक्त
खुद अपने पर मौत के न आने का गम,
वह दिल जिसे यह गम खाता हो
सर्द होकर संग बन जाता है।

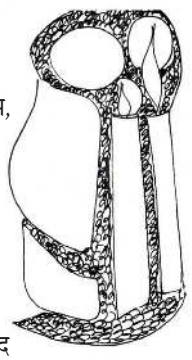

मगर इस गम से बड़े
और भी गम हैं तेरी दुनिया में,
और गो मेरा दिल गमों का आदी है,
एक गम ऐसा है कि उसकी महज याद
दिल को हिला जाती है।

एक रोज बहुत तड़के
एक कराहती आवाज
ले गई खींच मुझे
फूटते नासूर सी भद्दी एक झुग्गी में
जहाँ एक बदबख्त गरीब
भूख की सुलगती नींद के बहकाए से
अपने चंद मासूमों पर
एक फटी चादर का साया किए बैठा था :
और उसकी पथराई हुई आँखों में
बेरहम सुबह के फिर लौट आने का
गम तारी था।

गम की उस शक्ल के सामने आते ही
मुझे अपने पर काबू नहीं रहता है,
मैं तेरी रहमतों को भूल जाता हूँ
और जी कह उठता है कि कुछ भी हो
मैं तेरी दुनिया को एक बार उलटकर रख दूँ।

गम की आग

(पत्नी की मृत्यु पर कुछ पंक्तियाँ)

उसके चेहरे के नूर से घर रौशन था
उसकी साँसों की खुशबू से घर महकता था,
उसकी आवाज को सुनकर
चमन की चिड़ियाँ चाँचरी गाती थीं,
वह रूपवती थी, साध्वी शक्ति थी—
सत्य, प्रेम और धर्म की सजीव कामरू देवी,
वह मेरे हृदय की मलिका थी।
एक दिन सुबह अचानक,

मौत चोर की भाँति, दबे पाँव आई
उठा ले गई उसको।

अब यहाँ न सहर होती है, न शाम
एक गमगीन धुँधलाई का आलम है
रात की आमद की प्रतीक्षा में
दिन तो कट जाता है, मगर
रात आती है बेनींद गुजर जाती है।
हर उमंग, उम्मीद तमन्ना से विरक्त
मेरा दिल चाहता है मर जाए
मगर मर नहीं पाता,
आदत से मजबूर बेकार
धड़कता चला जाता है।

मुझे मौत से खौफ नहीं, मैंने उसे
रात की तन्हाई में सौ बार पुकारा है,
ललकारा है,
ऐसा लगता है, उसे खौफ मुझसे है
कि कहीं मेरे गम की आग
एक चिनगारी शोलों में भड़ककर
उसे जला न दे,
इसलिए यह छली चोर
कहीं दूर, सुरक्षित छोर पर छुपी बैठी है।

गरीब

सड़क की बगल की पगडंडी पर
बृहत् बरगद के तले
तने की टेक लिये बुत सा बैठा
यह भी मानव था
जो अब गरीब है।
इसका बुझा चेहरा
राख के रंगों में गढ़ा चित्र है एक चिता का
जिसमें इनसान के कुल अरमान
अभी ढेर हुए हों।
तिरस्कार के दो काले कुएँ हैं
जो कभी इसकी आँखें थीं।
युगों के त्याग से, तपोबल से
भूख पर इसने विजय पाई है
पेट की जगह अब इसके यहाँ
बस एक बेहिस गड्ढा है।

कोई भी, कहीं भी, कुछ भी नहीं अपना इसका
विधना है इसे जन्म दिया
और हक मरने का,
यह मगर जीता है न मरता है,
मौत के गिद्ध को ललचाए हुए
फुसलाए हुए, भरमाए हुए
बरगद के तले बैठा है।
न तो कुछ कहता है न सुनता है
हँसता है न रोता है,
यह न जाने कब क्या कर बैठे
सोचकर जी डरता है।

हर गाँव में, हर कसबे में, शहर में
हर डगर, पथ-पगडंडी के बृहत् बरगद के तले
अपने में प्रलय साधे बैठा है—
निर्वाक, निर्लिप्त, निष्करुण, दृढ़ और अजेय,
स्वयं महामृत्युंजय।

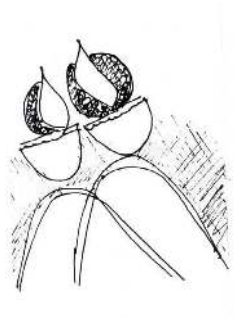

जो गरीब था वह बना बैठा है
सवाल सबसे कड़ा अपने जमाने का,
वक्त हल करता ही रहा है यों तो
हर युग के सवाल,
और खुद टेढ़ी समस्याएँ कभी
अपने हल बन जाती हैं,
हल वह सामने जो बदगद के तले बैठा है
अगर टल जाए तो बहुत अच्छा हो।

जमीन पर जुल्म का फैला हुआ हाथ
अब सँभल जाए तो बहुत अच्छा हो,
है गरीबों की विरासत यह धरा
उन्हें मिल जाए तो बहुत अच्छा हो।

प्रेयसी से अनुरोध

प्यार की इन पुनीत घड़ियों में
प्रिये, मत बोल!
रूह से दूर बसी बुदबुदी जीभ,
प्यार की हलचलों से अनभिज्ञ, शब्दीली
रूहों के मिलन के राग-रंग में लय सीन
कानों में कहे जाने को
इस निगोड़ी की शब्दशाला में धरा क्या है।
रूह का पड़ोसी दिल मगर मर्मज्ञ है,
प्यार की हलकोरों पे लरजते लमहे की
अनश्वरता की परख है उसको।
बस, अब तू अपने दिल को
मेरे दिल के करीब ला,
फिर इसकी थिरकन को मेरी मुहब्बत के
लय-ताल में खो जाने दे।
अब जरा सुन अपने जवान दिल की
धड़-धक-धड़ और
मेरे बुजुर्ग दिल की साफ, पुरजोर,
सँभली हुई धड़कन की रटन।
दिल रूह की घंटी है और
काल मंजी घंटी की तरह अभ्यस्त
सुलझे हुए दिल का संतुलित रणन
अनगढ़े नौजवान दिल की घड़घड़ाहट से
कहीं रसमय है
अब इसे सीखने दे प्यार के सुर ताल के भेद।

प्यार के परिरंभ में यों खोए हुए
हम हम ही तो नहीं हैं—
इन मोहब्बत की तिलिस्मी घड़ियों में
हम अपने हर रोज के अस्तित्व से
उन्मुक्त हो, ऊपर उठ
अतीत के प्रेमियों के प्रतिबिंब बने हैं।
उनकी प्रणय गाथाओं की प्रतिध्वनि
हममें ध्वनित हो
अपने इन सुधी पूर्ण पलों में
अमरत्व का रस भरती है।
प्यार के परिरंभ के इन अनमोल क्षणों में
हम अपनी सुर मिली साँसों की
धुनों-प्रतिध्वनियों को
बेतुकी जीभ की बातों में न बिखरने दें
बल्कि हम साँस के तारों को
अपने इस देह-दिल-रूह के ढाँचे पर
चढ़ा, बस खींच
बना ले एक सिहरती वीणा
कि जिसमें गूँज उठें
श्याम रसिया की रसीली मुरलिया की धुनें
और रसवती राधा के नूपुरों की रुन-झुन।

१०, पूर्वी मार्ग, वसंत विहार
नई दिल्ली-११००५७

संबंध विच्छेद

● गरिमा संजय

'अब इस इनसान के साथ रहना असंभव है। कैसे रह सकती हूँ इसके साथ ? बात-बात पर इतनी बहस ! इतना लड़ाई-झगड़ा ! अब नहीं रहा जाता। आखिर कितना सहूँ ? कब तक सहूँ ? और क्यों सहूँ ? मैं इनसान नहीं हूँ ?'

किचन को तेजी से समेटती निधि का पूरा चेहरा आँसुओं से भींगा था। बीच-बीच में अपने हाथों से आँसुओं को पोंछती जूठे बरतनों को तेजी से सिंक में पटक रही थी, बच्चों के लिए दोपहर का खाना डायनिंग टेबल पर रख रही थी और अपना टिफिन भी पैक करती जा रही थी।

झगड़े के चक्कर में आज फिर उसे ऑफिस के लिए देरी हो गई थी। देर से पहुँचने का मतलब, हर काम में देरी। अब देरी से घर भी लौटेगी, फिर शाम के खाने में देरी, देर से सोना, लेकिन उठना तो समय से ही, वरना कल सुबह देर होगी। इस चक्कर में कितनी ही बार उसकी नींद पूरी न हो पाती थी।

जैसे-तैसे तेजी से काम समेटा, उतनी ही तेजी से घर लॉक किया और उससे भी तेजी से बाहर की ओर भागी। बस, ऑटो, कुछ भी मिल जाए और वह किसी तरह जल्दी से ऑफिस पहुँच जाए।

'आज बात करूँगी सुदीप से। आखिर कब तक ऐसी जिंदगी जी सकती हूँ ? घर के सारे काम सँभालूँ, बच्चों का ध्यान रखूँ, फिर दफ्तर के काम ! उस पर भी सहानुभूति की जगह इतनी संवेदनशून्यता ! किसी काम में सहयोग नहीं और कुछ बोलूँ तो लड़ाई-झगड़ा ! इस तरह कब तक साथ रहा जा सकता है ?' वह मन-ही-मन बड़बड़ाती जा रही थी।

ऑटो में बैठते ही मोबाइल के फ्रंट कैमरे में चेहरा देखा। मैकअप किट निकाला और गालों पर सूखे आँसुओं को झटपट मैकअप की परत के नीचे दबा डाला। आँखों का गीलापन काजल और आई-लाइनर से छुपाया।

'अगर उसे साथ नहीं रहना तो ?' एक पल को मन डरा, फिर दूसरे ही पल, 'तो क्या कर सकती हूँ ? किसी को जबरन बाँधकर तो रख नहीं सकती।' बेबसी पर मन हार गया।

'ऐसा व्यवहार करना था तो शादी क्यों की ?' अब मन सुदीप को कोस रहा था।

'उस समय किसे पता था···मेरी ही किस्मत में ये सब लिखा था···' ऑफिस पहुँचते-पहुँचते मन खुद को ही कोसने लगा।

'बच्चे बड़े हो रहे हैं। आजकल उच्च शिक्षा में कितना खर्च होता है। कंपिटीशन के इस दौर में सही मार्गदर्शन न मिले तो बच्चों का भविष्य खराब हो सकता है। हमारे पास न कुबेर का खजाना है और न ही पुश्तैनी जायदाद, जिसके भरोसे बच्चों की परवरिश में कोई मदद मिल सके। दोनों मिल-जुलकर जितना कमाते हैं, उसी में बच्चों को पढ़ा-लिखाकर अपने पैरों पर खड़ा करना है, घर खरीदना है, और उनकी शादी भी तो करनी है।'

मूलतः इलेक्ट्रॉनिक मीडिया से संबद्ध। विविध प्रकाशकों एवं संस्थाओं के लिए लेखन एवं अनुवाद-कार्य। बीबीसी, ट्रांसटेल, डिस्कवरी चैनल, टीमजी एंटर चैनल आदि के लिए विविध डॉक्यूमेंटरी फिल्मों के हिंदी अनुवाद एवं डबिंग आदि के कार्य।

इतनी सारी जिम्मेदारियाँ हैं ! सोचकर ही निधि काँप जाती।

लेकिन सुदीप को तो जैसे किसी चीज की कोई परवाह ही न थी। जब भी उससे बात करने की कोशिश करती तो उलटा उस पर ही उखड़ जाता। समस्याओं के लिए प्लान करें तो उनसे निपटना असंभव नहीं; लेकिन वह तो समस्याओं को सुलझाने के बजाय उनसे भागता है। पूरी दुनिया को गालियाँ देगा, लेकिन अपने हालात सुधारने की कोशिश नहीं करेगा। अधिक बोलने पर निधि को भी बुरा-भला कहना शुरू कर देता है।

जैसे-जैसे बच्चे बड़ी कक्षा में पहुँच रहे थे, निधि की चिंताएँ बढ़ रही थी, लेकिन परिवार की ओर से सुदीप उतना ही लापरवाह होता जा रहा था। उसकी दुनिया केवल दफ्तर और दोस्तों में सिमटती जा रही थी। दफ्तर में काम का बोझ तो था ही, लेकिन खाली होने पर भी परिवार को समय देने के बजाय दोस्तों के साथ देर-देर तक बैठकें होतीं। बच्चे तो अकसर उसे देखे बिना ही सो जाते। दोस्तों के साथ बैठता तो नशा भी करता और उस नशे का असर परिवार की सुख-शांति पर दिखाई देने लगा था। घर में तनख्वाह देना बंद कर चुका था। घर के सारे खर्च, बच्चों की फीस, खाना-पीना, कपड़े, किताबें, हर छोटी-बड़ी जरूरत अकेले निधि ही पूरी करती। और यह सब उसे जुबान पर ताला लगाकर करना था। आपत्ति जताते ही घर में बवंडर उठ जाता।

उसकी तनख्वाह भी इतनी न थी कि घर-परिवार की सारी जरूरतें पूरी हो जाएँ और भविष्य के लिए बचत भी हो सके। तंगहाली और नशे का असर लड़ाई-झगड़े एवं मारपीट-हाथापाई के रूप में दिखाई देता। इन सबका बुरा असर बच्चों के कोमल मन और व्यक्तित्व पर पड़ रहा था; लेकिन सुदीप को ये बातें निधि समझा ही न पाती।

''क्या हुआ, निधि! कुछ दिनों से तुझे परेशान देख रही हूँ? अपनी दोस्त से नहीं बताएगी? मन हल्का हो जाएगा!'' सहकर्मी सरिता ने उसकी मन:स्थिति भाँपकर पूछा तो निधि ने बरबस ही अपना दर्द उसके सामने उँड़ेल दिया।

''कमाल है! कैसा इनसान है वो? क्यों झेल रही है तू ऐसे इनसान को?''

''करूँ भी क्या?'' अनमनी सी निधि सरिता से ही पूछ बैठी।

''देख, सुनने में बुरा तो लगता है, लेकिन तू ही बता, ऐसी शादी का क्या फायदा? सबकुछ अकेली ही सँभाल रही है तो अकेली रहकर सँभाल। आखिर परिवार और बच्चे उसके भी हैं! उसे नहीं समझना चाहिए? तू अकेली क्यों झेले सबकुछ? आखिर तेरी गलती क्या है?''

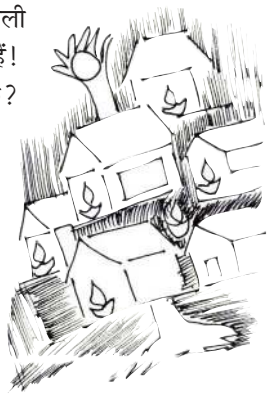

निधि चुपचाप सरिता को देखती रही।

''ठीक कह रही हो, सरिता···लेकिन···'' निधि असमंजस में थी। सरिता की बातों से असहमत नहीं थी, लेकिन उसके सुझावों से सहमत नहीं हो पा रही थी।

सरिता ने दबाव बनाया, ''लेकिन क्या, रोती क्यों हो? मैं तो कहती हूँ कि सबक सिखाओ ऐसे इनसान को। अलग हो जाओ। आखिर तुम खुद इतना कमाती हो, अपने पैरों पर खड़ी हो! तुम्हें इतना सहन करने की जरूरत ही क्या है?''

निधि चुप रह गई। 'बात तो सच है कि मैं खुद कमाती हूँ, घर भी अकेली ही सँभालती हूँ, सुदीप का तो कोई योगदान ही नहीं है···' सोच में गूँध रही थी।

''ऐसे दोहरी जिंदगी जीते-जीते मर जाओगी एक दिन। आईने में शक्ल देख अपनी, कैसी हो गई है? कैसा आदमी है यह सुदीप, उसे तेरा दर्द दिखाई नहीं देता?''

सरिता की सहानुभूति ने उसके मन को थोड़ा और झकझोरा।

लंच टाइम खत्म होने के साथ ही उनकी चर्चा को भी विराम लगा। शाम को घर के लिए निकलते समय सरिता ने एक बार फिर उसे चेताया, ''मुझे तेरी चिंता हो रही है, निधि! कल छुट्टी है, सही वक्त देखकर फाइनल बात कर ही ले, नहीं तो तू ऐसे ही मरती रहेगी, लेकिन उसे कोई फर्क नहीं पड़ेगा।''

रास्ते भर सरिता के शब्द निधि के कानों में गूँजते रहे। घर पहुँचने तक निर्णय भी ले लिया, 'आज तो सुदीप से सारी बातें साफ करके ही रहेगी।'

संयोग भी ऐसा बना कि आज सुदीप जल्दी घर आ गया। दोबारा बाहर जाने की कोई योजना बनाता, इससे पहले ही निधि ने शांत स्वर में कहा, ''आज घर पर बच्चों के साथ खाना खा लो!''

''क्यों, कोई खास दिन है?'' निधि का कोई भी सुझाव सुदीप को बरदाश्त न था।

''नहीं, कोई खास दिन नहीं। बस, रोज तुम्हें पूछते हैं, इसलिए कहा, बाकी तुम्हारी मर्जी।''

फिर से कहासुनी होने के डर से इतना ही बोलकर वह सीधी किचन में चली गई। सुदीप भी न जाने क्या सोचकर रुक गया।

उस दिन सुदीप ने बच्चों के साथ टी.वी. देखा, बातें कीं और खाना खाया। इस बदलाव का असर खुद सुदीप के चेहरे पर भी दिखाई दे रहा था। कितने दिनों बाद आज उसके चेहरे पर निश्छल, तनाव रहित हँसी नजर आ रही थी। यह सब देखकर निधि की आँखें भी चमक उठीं।

बच्चों को सुलाने के बाद निधि सुदीप के पास आ बैठी, ''सुदीप, अब मैं थक रही हूँ। इस तरह अकेले घर और दफ्तर सँभालना, बच्चों को सँभालना, तुम्हारा कोई सहयोग न मिलना, अब मुझसे सहन नहीं होता···''

न जाने क्यों उम्मीद थी, उसका दु:ख देखकर सुदीप उसकी बात समझेगा। लेकिन बात पूरी होती, इससे पहले ही सुदीप उखड़ चुका था, ''तो छोड़ दो! क्यों सहन करती हो? लेकिन एक बात याद रखना, कोई ऐलमनी नहीं मिलेगी तुम्हें···डिवोर्स की बात तुम खुद कर रही हो!''

''डिवोर्स!'' निधि अवाक् रह गई।

उसे क्यों लगा था कि आज सुदीप उसका मन समझेगा, परिवार और बच्चों की जरूरत समझेगा। जान देकर जीने का शौक किसे होता है? घर और दफ्तर की दोहरी जिंदगी वह इसलिए जी रही थी कि उसके परिवार की स्थिति बेहतर हो सके। लेकिन इस दोहरी जिंदगी ने उसे क्या दिया? जिसके साथ परिवार बनाया, वही परिवार तोड़ना चाहता है। स्तब्ध सी कुछ क्षण खामोश रह गई।

''क्या हुआ? अब सहन कर लोगी सबकुछ? पैसा नहीं मिलेगा, जानकर चुप हो गई?''

सुदीप की समझ, उसके तर्क और उसके विषाक्त तानों के सामने एक बार फिर निधि हार गई। गहरी साँस ली और बोली, ''मैंने डिवोर्स की बात कभी नहीं की; लेकिन ठीक है, जैसा तुम चाहो···''

गला रुँधने लगा था। परिवार सँभालने के लिए ही तो इस बहस में पड़ी थी, लेकिन एक बार फिर उसकी कोशिश नाकाम हुई। इतने जतन से जिस परिवार को उसने अब तक सँजोया था, वह पूरी तरह से बिखरने वाला था। हताश मन में अधिक बहस करने की शक्ति अब नहीं रह गई थी। गला साफ करके धीमे से बोली, ''तो, कैसे करना है सबकुछ?''

सुदीप की आवाज ने एक बार फिर आग उगली, ''टी.वी., फ्रिज, जो फर्नीचर ले जाना हो, ले जाओ और जहाँ जाना हो, जाओ!''

आँखों में छलकते आँसुओं की बाढ़ को दृढ़ता से वहीं रोक निधि ने पूछा, ''और बच्चे?''

''तुम्हें ले जाना हो तो ले जाओ, वरना मैं पाल सकता हूँ अपने बच्चों को!''

निधि के मन में ज्वालामुखी धधक उठा।

''वे बच्चे हैं सुदीप, बेजुबान टी.वी., फ्रिज या फर्नीचर नहीं, जिन्हें

हम अपनी जरूरत के हिसाब से बाँट लेंगे! उनकी भी कुछ मरजी, कुछ इच्छाएँ, कुछ जरूरतें और कुछ अरमान होंगे। माता-पिता की जरूरत हर बच्चे को होती है।''

पहली बार सुदीप खामोश रह गया।

''उन्होंने नहीं कहा था कि हम उन्हें जन्म दें। हम अपनी मरजी से उन्हें इस दुनिया में लाए हैं।''

आवेश में निधि की आवाज काँपने लगी, फिर भी वह बोलती रही, ''लाए हैं तो उन्हें पालने की जिम्मेदारी भी हमें ही निभानी पड़ेगी···हम चाहें या न चाहें, हममें आपस में बने या न बने।''

आँखों में थमे आँसू यकायक बह निकले। उन्हें सँभालने के लिए वह दोनों हाथों से चेहरा ढाँपकर बैठ गई।

खामोश सुदीप के मन में उथल-पुथल मची थी। सचमुच, वह अबतक केवल अपने बारे में ही सोचता था। शादी और बच्चों की जिम्मेदारियों को अबतक स्वीकार नहीं कर पाया था। उसे अभी भी कुँवारेपन की आजादी और मनमानी चाहिए थी। न मिलने पर वह पत्नी, परिवार, हर चीज से चिढ़ने लगा था।

कमरे में पसरी खामोशी को तोड़ते हुए निधि आगे बोली, ''घर और दफ्तर की दोहरी जिम्मेदारी सँभालना मेरे लिए भी आसान नहीं। फिर भी दोनों करती हूँ, ताकि अपने बच्चों को बेहतर जिंदगी दे सकूँ···हमेशा सोचती रही, तुम अब मेरे इस प्रयास में साथ दोगे···लेकिन···चलो···''

एक बार फिर कमरे में खामोशी छा गई। दोनों ही सिर झुकाए बैठे थे। दोनों ही कुछ कहना चाह रहे थे; लेकिन दोनों के मुँह से शब्द नहीं फूट रहे थे।

अचानक सुदीप ने खामोशी तोड़ी, ''तुम सचमुच डिवोर्स लेना नहीं चाहती?''

निधि तड़प उठी।

''किसने कहा तुमसे कि मैं डिवोर्स लेना चाहती हूँ?''

''मेरे एक दोस्त की बीवी···तुम्हारे साथ काम करती है···सरिता···''

निधि के दिल में अंगार दहकने लगे। समझ ही नहीं पा रही थी कि सुदीप से झूठ बोलकर और उसे सुदीप के खिलाफ भड़काकर आखिर सरिता को क्या मिलना था? वह खुद भी तो शादीशुदा थी।

आँसुओं को रोक पूछ बैठी, ''डिवोर्स लेना होता तो रात-दिन इतनी मेहनत करती अपने परिवार के लिए?''

सुदीप की आँखें तर हो गईं।

उसे चुप देख आगे बोली, ''रिश्ता तो हमारा है, सुदीप। इसमें किसी सरिता पर विश्वास करने से पहले एक बार मुझसे तो बात की होती!''

सुदीप की आँखों में पश्चात्ताप स्पष्ट था। धीमे से आगे बढ़कर निधि का हाथ अपने हाथ में लिया और बोला, ''क्या हम एक नई शुरुआत कर सकते हैं अपने बच्चों के लिए?''

निधि संतुष्ट थी कि सुदीप के शब्दों में ईमानदारी थी और आँखों में सच्चाई।

वह और भी संतुष्ट थी कि सरिता के बहकावे में नहीं आई।

बी-५, पंडारा रोड,
नई दिल्ली-११०००३
दूरभाष : ९८९०९६१९७०

कविता

माली

● सूर्य प्रकाश मिश्र

उड़ी चुनरिया छापे वाली
लाठी गई बुढ़ापे वाली,
आज भले हँस रही है मड़ई
कल से होगी खाली-खाली।

दिन ये बड़े भाग से आते
गोड़ घिस गए आते-जाते,
आज, बदल देगा जीवन में
दिल से जुड़े पुराने नाते।

आँख भर चली है मंगरू की
चुप है मंगरू की घरवाली।

जिस असाढ़ को नीम लगी है
उसी साल बिटिया जनमी है,
बेटी तो हो गई पराई
लेकिन इसकी छाँह बची है।

है उदास बैल मरखहवा,
आँख मूँद कर रहा जुगाली।

मन पलाश गुलमोहर फूला
सस्ते मिला कमाऊ दूल्हा,
है विश्वास कि चल जाएगा
लछमनिया का चौका-चूल्हा।

धरम दुहाई बड़े डीह की,
रक्षा करें गाँव की काली।

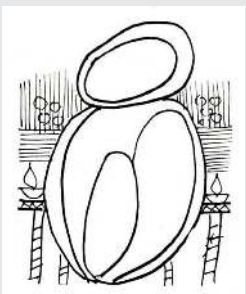

अब मंगरू दिन-रात खटेगा
सूखा-बारिश से निपटेगा,
कम खाएगा, कम खोएगा,
तब शादी का कर्ज पटेगा।

बेटी पैदा करने का सुख,
भोगेगा तिल-तिलकर माली।

बी-२३/४२ ए.के.
बसंत कटरा गांधी चौक, खोजवाँ
(दुर्गाकुंड) वाराणसी-२२१००१
दूरभाष : ०९८३९८८८७४३

राम झरोखे बैठ के

मौसम के रंग

● गोपाल चतुर्वेदी

मौसम की भी विविधता है भारत में, जैसे खान-पान, पहनावे और भाषा की। फिर भी इस विविधता में एक समानता है। बुजुर्ग बताते हैं कि अधिकांश देश में एक ही ऋतु की प्रधानता है, वह है ग्रीष्म। यों साधन संपन्न लोग पहाड़ों की ओर पलायन करते हैं, जब शहर भट्ठी सा सुलगता है और आदमी स्वयं को अलाव पर तंदूरी रोटी सा महसूस करता है। उच्च वर्ग के भाग्यशाली इनसान हों या निर्धन जनता के 'गरीब मंत्री'। उनके लिए यूरोप की सैर का इससे बेहतर अवसर क्या है? कुछ वहाँ अपने खरीदे घरों का आनंद लेते हैं तो जनप्रतिनिधि सरकारी आवभगत का। 'आराम हराम है' का नारा देनेवाले भले देश के प्रथम प्रधानमंत्री हों, उस पर अमल करनेवाला यदि केवल इकलौता व्यक्ति है तो वह मुल्क का वर्तमान प्रधान सेवक है। कुछ का कहना है कि वह अनिद्रा रोग से पीड़ित है तो कुछ का मत है कि वह काम का जन्मजात लतियल है। गनीमत है कि दोनों में से एक भी रोग संक्रामक नहीं है वरना देश को आजादी के बाद से अब तक विकास का अजीर्ण हो गया होता। ठीक ही है। अति आदमी के पेट की हो या भ्रष्ट के रेट अथवा विकास की, तीनों ही बुरी हैं। दादी का मत है कि त्वरित विकास पर पड़ोसी देशों की नजर लगती है और विरोधी दलों की भी। वे जल-भुन उठते हैं।

देश में कुछ अल्पसंख्यक, समृद्ध या निर्धन ऐसे भी हैं, जो फैशन से भरे-पूरे पर सुरुचि से कोरे-रीते हैं। उनको गरमियों में, रंगीन बनियान धारण कर अर्धनग्न रहने का शौक है। जैसे उनके मन की नंगई बदन पर उतर आई हो। वह सड़क पर चलते हैं तो कनखियों से इधर-उधर ताकते हुए। कितने उनके अद्यतन फैशन से प्रभावित हैं? कौन कहे, कब किस फिल्म निर्माता की नजर भी उन पर अटक जाए? बहुत सी बातें चलते-चलते संभव है। मसलन, सड़क के गड्ढे में पैर फँसना, खुले मैनहोल में टपक पड़ना, किसी छुट्टे साँड़ का बगैर चेतावनी दौड़ा लेना, किसी लड़की से जान-बूझकर टकराना और उसकी सहेलियों की चप्पलें खाना, कान में फोन सटाकर बात करते-करते या गाना सुनते-सुनते किसी वाहन से हिंसक 'हैलो' हो जाना अथवा किसी आतंकी इलाके की गोलीबारी का शिकार होना। फिल्म निर्माता की नजर पड़ने से, ऊपर की दुर्घटनाएँ कहीं अधिक मुमकिन है। ऐसे मुल्क में एक अन्य खतरनाक ऋतु है। इसे बजट का मौसम भी कहते हैं। इसमें सब अपनी जेब की खैर मनाते हैं, पर स्थिति वही बकरे की माँ की है, जिसकी जेब की नियति ही कटना है, वह निर्मम सरकारी कटाई से कब तक बचेगी? इसके बावजूद देश में चंद चीजें, अभी भी टैक्स फ्री हैं। इन में सूरज की धूप, हवा, रोशनी, हँसी और उम्मीद करना शामिल हैं। इनमें से बहुतेरे बाद में, 'करूँ क्या आस निरास भई' गाते भले हों, पर वे साहसी आस लगाने में फिर भी नहीं चूकते हैं। जब वित्तमंत्री आमदनी बढ़ाने का निश्चय दोहराते हैं, अपना दिल बैठता है। कौन कहे, वित्तमंत्री सूरज की धूप और ठहाकों पर कब टैक्स ठोक दें?

कुछ जन्मजात आशावदी होते हैं। हमारे एक मित्र भी हैं। पढ़े-लिखे, समझदार, बुद्धि से सक्षम, पर शरीर से लाचार। उनकी एक आँख दीपावली के शुभ अवसर पर, पटाखा सुलगाते-सुलगाते, उसके फूटने से चोटिल होकर जाती रही है। बेचारे घर बसाने को उत्सुक, पर लड़कीवालों की बेरुखी से पीड़ित। दहेज के मुखर विरोधी, पर हर गोरी, काली, दुबली-मोटी लड़की की नापसंदगी से आहत। स्वभाव से ऐसे नेक और मिलनसार कि उनसे नेकी भी शर्माए। युवा तो युवा, विधवा महिलाओं तक ने विवाह के नाम पर उन्हें घास नहीं डाली। अब उन्होंने दीवाली मनाना छोड़ दिया है। जब इतने किस्म की वर्तमान देवियाँ रूठी हैं, तब क्या पता, लक्ष्मी भी नाराज हों? ऐसे लक्ष्मीजी को पटाकर कुबेर बनने की उन्हें हसरत भी नहीं है। अकेले कितना उड़ाएँगे, और दुकेले होने की संभावना भी दिनों दिन क्षीण होती जा रही है। जब सारा शहर रोशनी से जगमग है और किसी युद्धस्थल सा बम-पटाखों के शोर से आक्रांत है, तब दो कमरे का छोटा सा माचिस का डिब्बा अंधकार का नन्हा सा टापू, उनकी मौन पीड़ा का गवाह है।

एक दिन हमने उनकी इस अरुचि के प्रति जिज्ञासा जताई तो उन्होंने हमें उपरोक्त दुर्घटना के बारे में बताया ही नहीं, अपने एकाक्षी होने के कारण अविवाहित रहने के विषय में भी। हमें उनसे हमदर्दी है, हमारे मोहल्ले के अधिकांश उनके प्रशंसक है। पर दूसरों में नुक्स निकालना कुछ की पैदाइशी और स्वाभाविक सिफत है। ऐसे अपने परिवार तक को नहीं बख्शते हैं तो हमारे मित्र को क्यों छोड़े? उनका आकलन है, ''जरूर इस नेकी के मुखौटे वाले में कोई न कोई चारित्रिक खोट है, वरना अभी तक कुँवारा क्यों रहता? कौन कहे नपुंसक हो? समलैंगिक भी हो सकता है? रोज घर के काम के लिए नए-नए लड़कों को नौकरी देता रहता है। हम तो ऐसों को अनैतिकता का छुपा रुस्तम मानते हैं। ऐसों से बचकर रहना ही उचित है।'' कोई कुछ भी कहे, हमारे मित्र को विवाह की उम्मीद अब भी गई नहीं है। हमें उत्सुकता भी है। देखें उनका स्वप्न साकार होता है कि नहीं? यों संदेह भी है। कहीं यह 'आशा कम विश्वास अधिक है' वाली बात तो नहीं है?

भारत में एक अन्य विशेषता है। कोई भी मौसम स्थायी नहीं

है, ग्रीष्म भी नहीं। गरमी, बरसात, बजट, जाड़ा आदि भी आता है, भले ही थोड़े दिन परिवर्तन की पीड़ा भी सुख देने के लिए। जैसे जब बारिश अपेक्षा और औसत से कम होती है तो सूखे का आगमन उतना ही अनिवार्य है, जितना कैक्टस का हर मौसम में उगे रहना। यदि बारिश आशा के अनुरूप हुई तो बाढ़ आना ही आना। दोनों स्थितियों में जनकल्याण को प्रतिबद्ध प्रजातांत्रिक सरकारें 'राहत' का प्रबंध करती हैं। सरकार को जायज शिकायत है कि हर जिले में राहत कार्य होने के वाबजूद जनता त्राहि-त्राहि में लगी रहती है। मंत्री और अफसर राहत की सच्चाई से वाकिफ हैं। उनके पास फाइलें हैं। उसमें बाकायदा हर जिले की रकम दर्ज है। सचिवालय का बाबू, अधिकारी, मंत्री सब जानते हैं कि इस राशि का कच्चा चिट्ठा। कहाँ-कहाँ राशि गई, यह भी। प्रमुख सचिव आका को समझाता है, ''सर! क्या कहें, सार्वजनिक रूप से कह भी नहीं सकते हैं। वहाँ तो आपका और हमारा जनता को जनार्दन बताना राजधर्म है। पर क्या करें, घरों में कुछ बच्चे रौंदू किस्म के होते हैं। वह खेलने, खाने, सोने, में याने हर वक्त रोते हैं, वैसे ही हमारी जनता भी है। इसे हर अवसर पर रोने की आदत है। तभी तो राहत की राशि कहीं कम तो कहीं न मिलने की शिकायत है। आप और हमारे रात-दिन राहत में जुटे रहने के वाबजूद यह दुर्दशा है।'' मंत्रीजी की पूरी सरकार में प्रसिद्धि है, गगनभेदी ठहाके और कर्णभेदी आपन्न वायु के विसर्जन के लिए। फिलहाल, उन्होंने ठहाके से काम चलाया। एक तथ्यात्मक प्रेस नोट आपकी ओर से जारी कर देते हैं—''सर! पढ़े-लिखे लोग तो वास्तविकता से परिचित हों।''

मंत्रीजी को प्रस्ताव भाया। उन्होंने मुंडी हिलाकर स्वीकृति दी और बोले, ''कहाँ?'' प्रमुख सचिव ने उनके हस्ताक्षर का स्थान दिखाया, उन्होंने चिड़िया बनाई और राहत की शिकायत का मुद्दा, अभाव से भुगतते इनसानों के समान चल बसा। मंत्रीजी बोलते तो कैसे बोलते? उनके गले में राहत की रकम अटकी हुई है और उनमें अभी कुछ लाज-शरम शेष है। वहीं अफसर खुर्राट है। उसने कई राहतें डकारी हैं। मंत्री खुश है। अपना हिस्सा पाकर मुख्यमंत्री ने उसकी पीठ जो ठोकी है। बस जो प्रसन्न नहीं है, वह जनता है। पर यह उसकी स्थायी नियति है। जो भी सरकार आती है, वह वादे तो ढेरों करती है किंतु देखने में आया है कि बहुधा पूरा एक भी नहीं हो पाता है। सत्तारूढ़ दल का हर पदाधिकारी, अफसर, बाबू, कर्मचारी आदि सब अपनी अपनी जेबें भरने में वैसे ही लगे रहते हैं, जैसे दीमक फाइलों में या निरक्षर, बच्चे पैदा करने में।

यों तो रोगग्रस्त देश में हर सरकारी या निजी डॉक्टर की चाँदी है, पर बाढ़ या सूखे में मरीजों की संख्या से अकसर उनकी प्रसन्नता उर्फ फीस के मीटर की राशि में पर्याप्त इजाफा होता है। डॉक्टर इसकी शान तो नहीं बघारते हैं, पर एक इंजीनियर साहब हैं। वह पाँच बेटियों या लक्ष्मियों के सौभाग्यशाली पिता हैं। वह अब सारी जिम्मेदारियों से निवृत्त हो चुके हैं, उनके पास हर विवाह के खर्चे और दहेज की फाइल है। वह अकसर दोस्तों को बताते हैं, ''सुधा की बाढ़ के प्रसाद की शादी है, शीला की सूखे की।'' हर कन्या का विवाह किसी न किसी प्राकृतिक आपदा का परिणाम है। उनके ऐसे स्पष्टवादी देश में कम ही होंगे।

ऐसा नहीं है कि बाढ़ और सूखे में ही गरीब मरते हैं। जाड़े में भी शीत-लहर है, उनके प्राण हरने को। इस पर भी कई विद्वान् अपनी विद्वत्ता झाड़ते हैं, माल्थस के सिद्धांत का हवाला देकर कि जब जनसंख्या में अतिशय वृद्धि होती है, तब प्राकृतिक आपदाएँ उसे घटाने में सक्रिय हो जाती हैं। इसके विपरीत, सर्दी सांस्कृतिक उत्सवों का अवसर भी है। कहीं कवि-सम्मेलन होते हैं, कहीं आयातित अंदाज के 'लिट-फैस्ट,' तो कहीं फैशन शो। संपन्न अपनी हैसियत जताने को हैरिस्ट्रीड के कोट प्रदर्शित करने वहाँ जाते हैं और आधुनिकता के रंग में रँगी युवतियाँ अर्धनग्नता के नवीनतम परिधानों में सजकर। मौसम कैसा भी हो, वातानुकूलन के युग में अधिक कपड़ों का बोझ लादने की मूर्खता क्यों की जाए?

जब से बंदर-भालू के तमाशों पर रोक लग गई है तब से ही 'लिट-फैस्ट' नामक साहित्यिक तमाशा लोकप्रिय हो रहा है। जिन्हें अपनी साहित्यिक सुरुचि का दिखावा करना है, उनका वहाँ पधारना अनिवार्य है। इस साहित्यिक सर्कस में एक ही प्रकार के चुनिंदा शेर, भालू, जोकर वगैरह-वगैरह हर वर्ष इसकी शोभा बढ़ाने पधारते हैं। इन तमाशों में सत्ताधारियों के चिंतन के अनुरूप कभी राष्ट्रप्रेम झलकता है, कभी धर्मनिरपेक्षता, कभी विश्वबंधुत्व।

हिंदी साहित्य की चर्चा भी अंग्रेजी में करने का हुनर जिनको हासिल है, वही 'लिट-फैस्ट' के नायक हैं। इसके आयोजकों की ख्याति अपने साहित्य-प्रेम के कारण है। दीगर है कि उन्होंने आजतक हिंदी या अंग्रेजी के साहित्य को पढ़ने की जहमत कभी नहीं उठाई है। कोई का दारू का ठेका है तो किसी की कपड़े की आढ़त। ऐसे 'गँवार विद्वानों' में हिल-मिलकर साहित्य सेवा का आकर्षण भी है। लिट-फैस्ट भी यही उपलब्धि क्या कम है? साहित्य अब पुस्तक मेले की चाट-पकौड़ी और लिट-फैस्ट के संदर्भ तक सीमित है। मनोरंजन के लिए टी.वी. नहीं देखा, दोस्तों के साथ पुस्तक मेला देख लिया या लिट-फैस्ट में अकेले स्वयं को प्रदर्शित कर लिया, सामाजिक श्रेष्ठता की तलाश में। हमारे मन में हीनता की ऐसी प्रबल ग्रंथि है कि श्रेष्ठता की तलाश में हम पाश्चात्य साहित्य की दुहाई देते हैं और इसीलिए लिट-फैस्ट में दिखने को व्याकुल रहते हैं। कोई पहचान ले तो कहना ही क्या?

मुल्क का मौसम बदलता रहता है। यों अपने देश का एक अन्य खुशनुमा मौसम भी है। यह हमारे प्रजातंत्र की पहचान है। किसी राज्य में चुनाव होते हैं, तो कहीं उपचुनाव। पूरे वर्ष, कहीं-न-कहीं चुनावी मौसम चलता ही रहता है। जो दल या नेता जनता को भाषण, वादे, प्रलोभन, आश्वासन आदि से ठगने में जितना सफल है, वह इस प्रजातंत्र के उत्सव में उतना ही कामयाब है। बात सब जनहित की करते हैं, जोर अपनी जात पर रहता है। हर दल की मान्यता है कि उसका विरोधी सांप्रदायिक है। दलित उत्पीड़न का सबसे अधिक शोर वह मचाते हैं, जिन्होंने उनके सुधार के लिए क्या किया अपने शासनकाल में उस पर आज भी प्रश्नचिह्न लगा हुआ है। उनकी परंपरा राजसी है, नजरिया सामंती। परिवार के बाहर का कोई प्रधानमंत्री उन्हें बर्दाश्त नहीं है। नहीं तो स्वर्गीय राव के आर्थिक सुधारों को भुलाने के सक्रिय प्रयास वह क्यों करते? सत्ता की आला

कुरसी पर उनका जन्मसिद्ध अधिकार है। कोई अन्य इस पर बैठे तो उनकी अनुमति लेकर अन्यथा उसका भविष्य सुरक्षित नहीं है।

ऐसे चुनावी मौसम देश का सर्वाधिक चर्चित मौसम है। कहीं उपचुनाव तक हो तो टी.वी. से लेकर समाचार-पत्र तक, बजट के समान उसके नतीजे पर यों बहस करते हैं, जैसे देश की सरकार का भविष्य उसी पर निर्भर है। हर किस्म के गठजोड़ का आकलन किया जाता है, इस निष्कर्ष के साथ कि अब सत्ता दल का सूरज डूबनेवाला है।

सिर्फ इस उम्मीद भर से दफ्तरों में काम ठप है। अफसर अभी से पुराने संपर्कों को साधने में लगे हैं। पत्रकारों को फिर से उपहारों और विदेशी यात्राओं की आशा जगी है, दूसरे सरकारी प्रधान के साथ। वर्तमान ने तो कितनी नाइनसाफी की है, इस पावन परंपरा को तोड़कर। उसकी इमेज अच्छी बने तो कैसे बने? यों इस मौसम में भी कभी वादों की बाढ़ आती है, कभी नतीजों का सूखा पड़ता है। कभी इनसान महँगाई से ठिठुरता है तो कभी भ्रष्टाचार के बुखार से। कौन कहे, इस कथन में कितनी सच्चाई है कि निर्धन को किसी मौसम में चैन नहीं है? चुनावी मौसम भी, कभी धन, कभी आरक्षण जैसे अधिकतर खोखले आश्वासन देकर चला जाता है। जनता फिर ठगी-की-ठगी रह जाती है। गरीबों का सफर क्या सिर्फ सिफर से सिफर तक का है?

सा अ

९/५, राणा प्रताप मार्ग
लखनऊ-२२६००१
दूरभाष : ९४१५३४८४३८

शिखर-पुरुष के लिए नमन है

कविता

• कृष्ण मित्र

सुपरिचित लेखक। अब तक २० कविता-संग्रह प्रकाशित। साहित्य भूषण सम्मान तथा अनेक संस्थानों द्वारा सम्मानित एवं पुरस्कृत। शिखर पुरुष अटल बिहारी वाजपेयी के सान्निध्य में वीर अर्जुन दैनिक पत्र के संपादक मंडल में कार्य किया। पत्र-पत्रिकाओं में निरंतर लेखन।

कदम-कदम निर्माण हो रहे
उन अनंत इतिहासों का
शिखर पुरुष के लिए नमन है
पीढ़ी के विश्वासों का।

संकल्पों में अटल चुनौती निष्ठा थी संस्कारों में
आचरणों में सदा सरलता, नैतिकता व्यवहारों में,
हृदय-स्थल में थी उदारता, पैनापन था वाणी में
शब्द-शब्द में बसी चेतना ज्यों कविता कल्याणी में,
चिंतन में चिंता स्वदेश की ओज भरा हुंकारों में
दुश्मन का दिल दहले जिससे वह प्रभाव ललकारों में।

भाषण में अद्‍भुत सागर था—
उत्साहों-उल्लासों का,
शिखर-पुरुष के लिए नमन है
पीढ़ी के विश्वासों का।

अथक प्रयासों से नफरत की चर्चा को विश्राम दिया
विश्व राजनीति को जिसने एक नया आयाम दिया,
अभियानों की परंपरा में वह स्वर्णिम इतिहास लिखा
निश्छलता में नई मित्रता का नूतन विश्वास लिखा,
बदले में फिर भी दुश्मन ने वार किया था धोखे से
बारूदी बादल आ पहुँचे जब करगिली झरोखे से।

भोगा था कड़वा यथार्थ
सामना किया संत्रासों का,
शिखर-पुरुष के लिए नमन है
पीढ़ी के विश्वासों का।

अणुबम के विस्फोटों से ब्रह्मांड समूचा थर्राया
और विश्व के सरपंचों ने था भारत को चेताया,
किंतु हुई जब सिंह-गर्जना सारा मौसम बदल गया
सैनिक तानाशाही के जलवों का आलम बदल गया,
दुनिया के प्रतिबंधों की परवाह नहीं की भारत ने
और किसी भी सुख-सुविधा की चाह नहीं की भारत ने।

उत्तर दिया हमेशा खुलकर
छद्‍म युद्ध-अभ्यासों का,
शिखर-पुरुष के लिए नमन है
पीढ़ी के विश्वासों का।

गठबंधन से जुड़े समूचे घटकों से सहयोग लिया
लोकतंत्र में प्रबल विरोधों में भी नया प्रयोग किया,
संसद् के भीतर विपक्ष की तकरारों की आँधी थी
बाहर सौ करोड़ लोगों ने भी उम्मीदें बाँधी थीं,
प्रतिपल संकट अवरोधों के आए अनगिन रूप लिये
कभी बर्फ की ठिठुरन लेकर या फिर तपती धूप लिये।

डिगा नहीं संकल्प अनूठा
सच्चे शांति-प्रयासों का,
शिखर-पुरुष के लिए नमन है
पीढ़ी के विश्वासों का।

सा अ

१०७, राकेश मार्ग, गाजियाबाद
दूरभाष : ९८१८२०१९७८

बाल-कहानी

दादी की बगिया

● रमेश यादव

हर साल की तरह इस साल भी दादी गाँव जाने की तैयारी कर रही थीं। गरमी की छुट्टियाँ पड़नेवाली थीं, इसलिए सोनिया ने भी इस साल दादी के साथ गाँव जाने की इच्छा जताई। यह खबर सुनते ही सोनिया के साथी रंजीता, कुणाल, जेनी और समीर ने भी अपने-अपने मम्मी-पापा से दादी के साथ गाँव जाने की इजाजत ले ली। आखिर एक-दूसरे के बगैर छुट्टियाँ बिताना इन सबके लिए मुश्किल जो था। दादी के मार्गदर्शन में बच्चे फल-फूल रहे हैं, यह देखकर बच्चों के मम्मी-पापा को भी बड़ा सुकून मिलता था। बच्चों के कारण सभी मम्मी-पापा अब एक-दूसरे के परिवार के काफी करीब आ गए थे। उनकी आपसी घनिष्टता बढ़ गई थी। मिल-जुलकर रहने का पाठ उन लोगों ने भी बच्चों से सीख लिया था। सोनिया की दादी शास्त्रीय संगीत की गायिका तो थी हीं, साथ ही उनका स्वभाव भी इतना स्नेहल था कि लोग उनसे प्रभावित हो जाते थे।

परीक्षा खत्म होते ही बच्चे दादी के साथ गाँव की ओर रवाना हो गए। रास्ते में पशु-पक्षी, पेड़-पौधों की हरियाली, जंगल, नदी, पहाड़ इत्यादि ने उनका मन खूब बहलाया। रेलगाड़ी में पिकनिक जैसा माहौल बन गया था। गाँव के घर पहुँचते ही घर के माली, रामू काका-काकी और उनके बच्चों ने उन सबका स्वागत किया। दादी का घर बड़ा ही प्यारा और काफी बड़ा था। घर के पास में एक बगिया भी थी। पानी निकालने के लिए कुआँ और एक नलका भी था। गाँव के बाहर एक नदी भी थी। कुल मिलाकर गाँव हरा-भरा और मनोरम था। रामू काका के दो बच्चे किरण और प्रिया अपने नए साथियों को लेकर बड़े खुश थे। शहर के बच्चे अपने स्कूल और शहरी जीवन के बारे में बताते हुए काफी उत्साहित हो रहे थे। किरण और प्रिया अपने नए मित्रों को लेकर खेत-खलिहान, नदी, मंदिर और बगीचे की सैर कराने में काफी व्यस्त हो गए। पेड़ से फल तोड़कर खाना शहरी बच्चों का सबसे प्रिय उपक्रम बन गया था। शहर के शोरगुल और भाग-दौड़ की जिंदगी से दूर गाँव का यह शांतिपूर्ण, सुकून भरा जीवन बच्चों को नई ऊर्जा और स्फूर्ति दे रहा था। यहाँ आकर वे बड़े प्रसन्न थे। गाँव के वातावरण की सूचना सबने फोन से अपने-अपने मम्मी-पापा को दे दी थी।

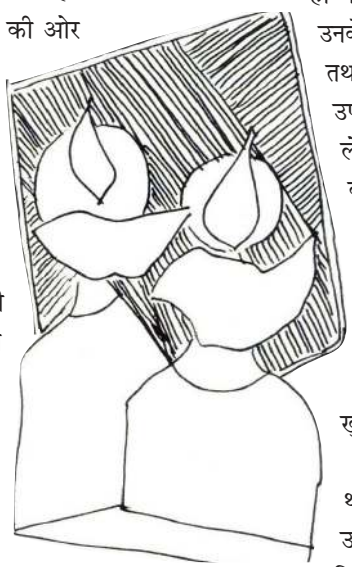

रामू काका ने घर और बगीचे को बड़े ही प्यार से सँभाला था। साफ-सुथरा और फल-फूलदार माहौल देखकर दादी काफी प्रसन्न हो गई थीं। इस बात के लिए दादी ने रामू काका सहित उनके पूरे परिवार की तारीफ की और सबको नए कपड़े तथा उपहार दिए। बच्चों ने भी किरण और प्रिया को उपहारस्वरूप प्यारे-प्यारे खिलौने दिए, जो वे शहर से लेकर आए थे। कुछ दिनों के सान्निध्य में ही रामू काका के बच्चे इन बच्चों से काफी घुल-मिल गए थे और अपने नए मित्रों से वे काफी कुछ नया सीख रहे थे। सबसे अच्छी बात तो यह थी कि उनके दिलों में पढ़ाई के प्रति विशेष रुचि पैदा हो गई और पढ़-लिखकर बड़ा इनसान बनने का सपना वे भी बुनने लगे थे। यह देखकर रामू काका और काकी काफी खुश हो रहे थे।

इस बीच रामू काका के ससुराल में शादी पड़ गई थी। अत: दादी की इजाजत लेकर कुछ दिनों के लिए उनका परिवार अपनी ससुराल चला गया। अब कुछ दिनों के लिए घर की सारी जिम्मेदारी दादी और बच्चों को सँभालनी थी। रसोई और साफ-सफाई से लेकर बागवानी तक की सारी जिम्मेदारी अब उन्हें सँभालनी थी। इस काम को लेकर बच्चे काफी उत्साहित थे। दादी जो काम देतीं, बच्चे उसे मन लगाकर करते थे। दादी

बाल-साहित्यकार एवं पत्रकार। बाल-कविता तथा अन्य विषयों की कई पुस्तकें चर्चित। पत्र-पत्रिकाओं में चार सौ से अधिक विविध लेख-रचनाएँ प्रकाशित। सौहार्द सम्मान, गुणवंत कामगार पुरस्कार, कमलेश्वर कहानी पुरस्कार एवं अन्य कई संस्थाओं द्वारा पचास से अधिक सम्मान प्राप्त।

के मार्गदर्शन में अब वे खाना पकाना भी सीख रहे थे। इस काम में बच्चों को बड़ा आनंद आ रहा था। मिलकर खाना बनाना और एक साथ बैठकर भोजन करना, इसका तो कोई जवाब ही नहीं था। इस काम में कुणाल और समीर दादी की खूब मदद करते और अपने मित्रों को भी प्रोत्साहित किया करते थे।

मगर चार दिन बाद ही दादी की तबीयत कुछ ढीली पड़ गई। अत: अब सारी जिम्मेदारी बच्चों पर आ गई। घर और रसोई का काम तो हो जाता था, मगर बागवानी का काम दादी नहीं कर पा रही थीं। इस काम को उन्होंने बच्चों को पूरी तरह से सौंप दिया। बच्चे इस काम को बड़े शौक से कर रहे थे। पेड़-पौधों को खाद-पानी देने में उन्हें बड़ा आनंद आ रहा था। इस तरह का काम उन बच्चों ने कभी नहीं किया था। पौधों की सिंचाई करते हुए दादी जब बच्चों को देखतीं तो उन्हें लगता, जैसे बच्चे अपने जीवन को सींच रहे हों।

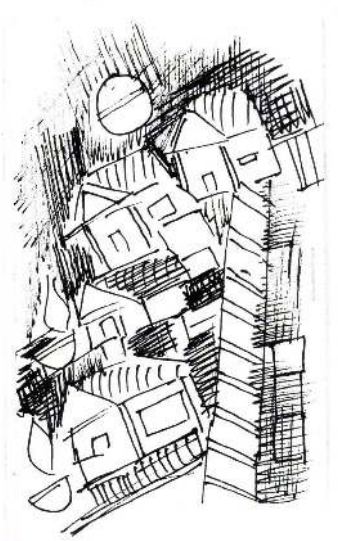

दो सप्ताह बाद जब दादी कुछ स्वस्थ हुईं तो बगिया को देखने गईं। अपनी बगिया से उन्हें बड़ा लगाव था। मगर वहाँ जाते ही वे निराश हो गईं। उनकी बगिया रूठ गई थी। पेड़-पौधे, फूल-पत्ते मुरझा गए थे। पत्तियाँ पीली पड़ गई थीं। दादी ने सभी बच्चों को बगिया में बुलाया और दिखाया कि देखो, ये पेड़-पौधे, फूल-पत्ते हमसे रूठ गए हैं, हमसे बात नहीं कर रहे हैं। तुम लोगों ने बगिया की देखभाल ठीक से नहीं की। कुछ लापरवाही जरूर बरती होगी।

बच्चों ने सफाई दी—''दादी, हम रोज इन पेड़-पौधों को पानी से नहलाते थे, इन्हें कपड़े से पोंछते थे। इन पर जमी धूल-मिट्टी साफ करते थे। फूलों को चमकाते थे। आस-पास की मिट्टी और धूल को झाड़ू से साफ करते थे। फूलों को धूप न लगे इसलिए उन्हें कपड़े से ढक देते थे। गमलों से सारा कचरा हटाकर पीले पत्तों को तोड़ देते थे। इन पौधों की टहनियाँ एक-दूसरे से उलझें नहीं, इसलिए हम गमलों को दूर-दूर रखते थे। मगर हम भी देख रहे हैं कि जो ताजगी पहले थी, वो अब नहीं है। दादी हमने इन पौधों का बड़ा ध्यान रखा, पर न जाने क्यों, ये हमसे रूठ गए!'' इतना ही नहीं, बच्चों ने दादी के सामने सबकुछ करके भी दिखाया।

दादी की पारखी नजरों को बात समझने में देर नहीं लगी। उन्हें बच्चों की मासूमियत और गलती का पता चल गया। अब दादी ने सारे बच्चों को पास बुलाया और समझाया कि देखो, इन पेड़-पौधों में भी हमारी तरह जान होती है, ये सजीव होते हैं। इन्हें हवा, पानी, भोजन, और सूर्य-प्रकाश की आवश्यकता होती है। तुम लोग जिस धूल-मिट्टी को कचरा समझ रहे हो, वह इन पेड़-पौधों के लिए खाद है। यही इनका भोजन होता है। ये पौधे एक-दूसरे से उलझकर आपसे में बातें करते हैं। ऑक्सीजन प्राप्त करते हैं। तुम लोगों को यदि एक-दूसरे से दूर-दूर कर दिया जाए तो कैसा महसूस करोगे! वही गमले के ये पौधे इस समय महसूस कर रहे होंगे। अकेलापन किसी को भी नहीं भाता। इनसान हो या पौधे, अकेलेपन में सभी सूख जाते हैं। नहाने के बाद हम लोग शरीर पोंछते हैं, ताकि हमें सर्दी न हो जाए, मगर ये पेड़-पौधे पानी को धीरे-धीरे सोखते हैं और पर्णहरिम के सहारे हरे-भरे रहते हैं। पानी और मिट्टी से ये क्षार और लवण प्राप्त करते हैं। और हाँ, मुख्य बात यह है कि ये खाद-मिट्टी, पानी इन पेड़-पौधों को इनकी जड़ों में देना होता है। ये जड़ें इन्हें सोखकर तनों तक पहुँचाती हैं, जहाँ इनका भोजन बनता है।

बच्चों को अपनी भूल का एहसास हो गया और वे पुन: बागवानी के काम में लग गए। अगले चार दिनों में ही बगिया पुन: तरो-ताजा होकर महक उठी। इसे देखकर सभी खुश हो गए और तय किया कि अब वे अपनी कॉलोनी में भी इस तरह के पेड़-पौधे लगाएँगे और परिसर को हरा-भरा बनाएँगे। इससे पर्यावरण की रक्षा होगी। साथ ही अपने अन्य साथियों को भी बागवानी का महत्त्व समझाएँगे। यह देखकर दादी अपने आपको धन्य मान रही थीं कि इतने आज्ञाकारी बच्चे उनके साथ हैं। वे सोच रही थीं कि बच्चों को बचपन से ही संस्कारों से सींचा जाना चाहिए। और वे अपने बचपन की यादों में खो गईं।

धीरे-धीरे ये बच्चे बड़े होते गए। समीर प्रसिद्ध डॉक्टर बन गया, कुणाल क्रिकेट का खिलाड़ी बन गया। फाईन आर्ट करके जेनी आर्टिस्ट बन गई, रंजीता सॉफ्टवेयर इंजीनियर बन गई तो सोनिया जानी-मानी गजल गायिका बन गई। रामू काका का बेटा किरण कृषि महाविद्यालय में प्राध्यापक हो गया तो प्रिया बैंक की अधिकारी बन गई। अब ये बच्चे नहीं, देश के जिम्मेदार नागरिक बन गए थे। अब ये लोग एक कॉलोनी में नहीं रहते थे, पर जहाँ भी थे, वहाँ से साल में दो बार तय करके एक-दूसरे से अवश्य मिलते थे। एक-दूसरे के सुख-दु:ख में सहभागी होते और अपने बचपन के दिनों को याद करके खूब ठहाके लगाते थे। दादी अब इस दुनिया में नहीं रहीं, पर उनकी बगिया फल-फूल रही है। हरियाली से लहलहा रही है।

तो मित्रो, अब आप लोग भी समझ गए होंगे कि जीवन में दादा-दादी का होना कितना जरूरी होता है! अब आप लोग यह भी सोच रहे होंगे कि दोस्ती की मिसाल क्या होती है और जीवन में अच्छे दोस्तों के क्या मायने होते हैं!

साअ

४८१-१६१ विनायक वासुदेव,
एन.एम. जोशी मार्ग,
चिंचपोकली (पश्चिम), मुंबई-४०००११
दूरभाष : ९८२०७५९०८८

आलेख

लोक आस्था और समरसता का महापर्व छठ

● संजय पंकज

आस्था का महापर्व छठ सूर्य-उपासना, प्रकृति-निष्ठा, सांस्कृतिक संवेदना, सामाजिक समरसता और लोक-चेतना का महान् प्रतिफलन और अनुशासित उत्सव है। आर्यों के इस पर्व का कृषि से गहरा संबंध है। ऋग्वेद में सूर्य की महिमा का पर्याप्त गान मिलता है। जीवित रहने का अर्थ ही है प्रति प्रात: उगते सूर्य का दर्शन। शीत प्रदेश से आनेवाले आर्यों के सूर्य के प्रति इस अनुराग ने ही सूर्य या सौर संस्कृति का जन्म दिया। इस संस्कृति ने सूर्य को ही अपना आराध्य माना और उसकी रश्मियों को स्वास्थ्य के दृष्टिकोण से महत्त्वपूर्ण समझा। छठ पर्व धार्मिक अनुशासन में सूर्योपासना ही है।

छठ पर्व

छठ षष्ठी का अपभ्रंश है। कार्तिक मास की अमावस्या को दीवाली के बाद मनाए जानेवाले इस चार दिवसीय व्रत की सबसे कठिन और महत्त्वपूर्ण रात्रि कार्तिक शुक्ल षष्ठी की होती है। कार्तिक शुक्ल पक्ष की षष्ठी को यह व्रत मनाए जाने के कारण इसका नामकरण छठ व्रत पड़ा।

भारत में सूर्योपासना के लिए प्रसिद्ध पर्व है छठ। मूलत: सूर्य षष्ठी व्रत होने के कारण इसे छठ कहा गया है। यह पर्व वर्ष में दो बार मनाया जाता है। पहली बार चैत्र में और दूसरी बार कार्तिक में। चैत्र शुक्ल पक्ष षष्ठी पर मनाए जानेवाले छठ पर्व को 'चैती छठ' व कार्तिक शुक्ल पक्ष षष्ठी पर मनाए जानेवाले पर्व को 'कार्तिकी छठ' कहा जाता है। पारिवारिक सुख-समृद्धि तथा मनोवांछित फल प्राप्ति के लिए यह पर्व मनाया जाता है। स्त्री और पुरुष समान रूप से इस पर्व को मनाते हैं।

छठ पर्व किस प्रकार मनाते हैं? : यह पर्व चार दिनों का होता है। पहले दिन सेंधा नमक, घी से बना हुआ अरवा चावल और कद्दू की सब्जी प्रसाद के रूप में ली जाती है। अगले दिन से उपवास आरंभ होता है। व्रती दिनभर अन्न-जल त्याग कर शाम करीब ७ बजे से खीर बनाकर पूजा करने के उपरांत प्रसाद ग्रहण करते हैं, जिसे 'खरना' कहते हैं। तीसरे दिन डूबते हुए सूर्य को अर्घ्य यानी दूध अर्पण करते हैं। अंतिम दिन उगते हुए सूर्य को अर्घ्य चढ़ाते हैं। पूजा में पवित्रता का विशेष ध्यान रखा जाता है; लहसून-प्याज वर्जित होता है। जिन घरों में यह पूजा होती है, वहाँ भक्तिगीत गाए जाते हैं। अंत में लोगों को पूजा का प्रसाद दिया जाता है।

छठ की शुरुआत कार्तिक शुक्ल चतुर्थी को तथा समाप्ति कार्तिक शुक्ल सप्तमी को होती है। इस दौरान व्रतधारी लगातार ३६ घंटे का व्रत रखते हैं। इस दौरान वे पानी भी ग्रहण नहीं करते।

नहाय खाय : पहला दिन कार्तिक शुक्ल चतुर्थी 'नहाय-खाय' के रूप में मनाया जाता है। सबसे पहले घर की सफाई कर उसे पवित्र किया जाता है। इसके पश्चात् छठव्रती स्नान कर पवित्र तरीके से बने शुद्ध शाकाहारी भोजन ग्रहण कर व्रत की शुरुआत करते हैं। घर के सभी सदस्य व्रती के भोजनोपरांत ही भोजन ग्रहण करते हैं। भोजन के रूप में कद्दू-दाल और चावल ग्रहण किया जाता है। यह दाल चने की होती है।

सुपरिचित साहित्यकार। 'यवनिका उठने तक', 'माँ है शब्दातीत', 'यहाँ तो सब बनजारे', 'मंजर-मंजर आग लगी है' कृतियाँ चर्चित। पत्र-पत्रिकाओं एवं संकलनों में रचनाएँ प्रकाशित। आकाशवाणी एवं दूरदर्शन से प्रसारित। 'अर्चना साहित्य पुरस्कार', 'अवंतिका सरस्वती सम्मान', 'कलाश्री सम्मान' सहित दर्जन भर सम्मान।

खरना : दूसरे दिन कार्तिक शुक्ल पंचमी को व्रतधारी दिनभर का उपवास रखने के बाद शाम को भोजन करते हैं। इसे 'खरना' कहा जाता है। खरना का प्रसाद लेने के लिए आस-पास के सभी लोगों को निमंत्रित किया जाता है। प्रसाद के रूप में गन्ने के रस में बने हुए चावल की खीर के साथ दूध, चावल का पिट्ठा और घी चुपड़ी रोटी बनाई जाती है। इसमें नमक या चीनी का उपयोग नहीं किया जाता है। इस दौरान पूरे घर की स्वच्छता का विशेष ध्यान रखा जाता है।

संध्या (प्रत्यूषा) अर्घ्य : तीसरे दिन कार्तिक शुक्ल षष्ठी को दिन में छठ का प्रसाद बनाया जाता है। प्रसाद के रूप में ठेकुआ जिसे कुछ क्षेत्रों में टिकरी भी कहते हैं, के अलावा चावल के लड्डू, जिसे लडुआ भी कहा जाता है, बनाते हैं। इसके अलावा चढ़ावा के रूप में लाया गया साँचा और फल भी छठ प्रसाद के रूप में शामिल होता है।

शाम को पूरी तैयारी और व्यवस्था कर बाँस की टोकरी में अर्घ्य का सूप सजाया जाता है और व्रती के साथ परिवार तथा पड़ोस के सारे लोग अस्ताचलगामी सूर्य को अर्घ्य देने घाट की ओर चल पड़ते हैं। सभी छठव्रती एक नियत तालाब या नदी किनारे इकट्ठा होकर सामूहिक रूप से अर्घ्य दान संपन्न करते हैं। सूर्य को जल और दूध का अर्घ्य दिया जाता है तथा छठी मैया की प्रसाद भरे सूप से पूजा की जाती है; इस दौरान कुछ घंटे के लिए मेले जैसा दृश्य बन जाता है।

प्रात: या भोरिया (उषा) अर्घ्य : चौथे दिन कार्तिक शुक्ल सप्तमी की सुबह उदीयमान सूर्य को अर्घ्य दिया जाता है। व्रती वहीं पुन: इकट्ठा होते हैं, जहाँ उन्होंने पूर्व संध्या को अर्घ्य दिया था। पुन: पिछले शाम की प्रक्रिया की पुनरावृत्ति होती है। सभी व्रती तथा श्रद्धालु घर वापस आते

हैं, व्रती घर वापस आकर गाँव के पीपल के पेड़, जिसको ब्रह्म बाबा कहते हैं, वहाँ जाकर पूजा करते हैं। पूजा के पश्चात् व्रती कच्चे दूध का शरबत पीकर तथा थोड़ा प्रसाद खाकर व्रत पूर्ण करते हैं, जिसे पारण या परना कहते हैं।

व्रत : छठ उत्सव के केंद्र में छठ व्रत है, जो एक कठिन तपस्या की तरह है। यह छठ व्रत अधिकतर महिलाओं द्वारा किया जाता है; कुछ पुरुष भी यह व्रत रखते हैं। व्रत रखनेवाली महिलाओं को 'परवैतिन' कहा जाता है। चार दिनों के इस व्रत में व्रती को लगातार उपवास करना होता है। भोजन के साथ ही सुखद शैया का भी त्याग किया जाता है। पर्व के लिए बनाए गए कमरे में व्रती फर्श पर एक कंबल या चादर के सहारे ही रात बिताते हैं। एक बार छठ पर्व को शुरू करने के बाद हर साल तब तक करना होता है, जब तक कि परिवार का दूसरा सदस्य इसके लिए तैयार न हो जाए, फिर भी व्रत करने के लिए शारीरिक तौर पर अक्षम होने की स्थिति में या घर में किसी की मृत्यु हो जाने पर यह पर्व नहीं मनाने की छूट है, पर तब छट व्रत का संकल्प अन्य परिवार के किसी दूसरे व्रती को दे दिया जाता है या विधानपूर्वक नदी में प्रवाहित कर दिया जाता है। अगर किसी की अकाल-मृत्यु छठ के ही दिन हो जाए तो यह पर्व मनाना तब तक बंद कर दिया जाता है, जब तक परिवार का कोई सदस्य पुन: संकल्प लेकर व्रत आरंभ न करे।

सूर्यपूजा का संदर्भ एवं पौराणिकता : छठ पर्व मूलत: सूर्य की आराधना का पर्व है। वेदों में सूर्य को विशेष देवत्व प्राप्त है। हिंदू धर्मशास्त्रों के अनुसार देवताओं में से कुछ को मूर्त या स्थूल रूप में देखा या अनुभव किया जा सकता है, जैसे अग्नि, वायु और सूर्य। उसमें सूर्य को सर्वोच्च स्थान प्राप्त है। उपनिषदों ने तो सूर्य को भी प्राण माना है, 'असावादित्य: प्राण:' (तैत्तिरीय संहिता ५.२, ५.४) सूर्य की शक्तियों का मुख्य स्रोत उनकी पत्नी ऊषा और प्रत्यूषा हैं। छठ में सूर्य के साथ-साथ दोनों शक्तियों की संयुक्त आराधना होती है। प्रात:काल में सूर्य की पहली किरण (ऊषा) और सायंकाल में सूर्य की अंतिम किरण (प्रत्यूषा) को अर्घ्य देकर दोनों का नमन किया जाता है।

भारत में सूर्योपासना ऋग्वैदिक काल से होती आ रही है। सूर्य को परमात्मा का मूर्त रूप माना गया है। ऋग्वेद के चौथे मंडल के छब्बीसवें सूक्त में परमात्मा ने स्वयं को सूर्य कहा है—

अहं मनुरभवं सूर्यश्चा, हं कक्षीवाहं ऋषिरस्मि विप्र:।
अहं कुत्समार्जुनेयं न्यृज्जेह्यहं कविरुशना पश्यतामा॥
अहं भूमिमददामार्यायास्हं, वृष्टि दाशुषे मर्त्याय।
अहमपो अनयं वावशाना, मम देवासो अनु केतमायं॥

मैं ही मनु हूँ, मैं ही सूर्य हूँ, मैं हीं विप्र तत्त्वदर्शी-बुद्धिमान-कक्षिवान ऋषि हूँ, मैं ही स्वत: सिद्ध अर्जुनेय कुत्स हूँ, ब्रह्म-चेतना की जिज्ञासा करनेवाले हे कवियो! देखो मुझे, मैंने ही मनु के लिए पृथ्वी को दान किया था। मुझे हविष्यादि देनेवाले यजमान मनुष्यों को इस मर्त्य में मैं ही वृष्टि द्वारा जीवन प्रदान करता हूँ। अग्नि, वायु, वरुण इत्यादि देवता मेरा ही अनुशरण करते हैं।

यजुर्वेद सूर्य को रुद्र-रूप मान प्रार्थना की गई है—

असौ यस्ताम्रो अरुण उत बभ्रु: सुमङ्गल:।
ये चेमारुद्रा अभितो दिक्षु।
श्रिता: सहस्त्रशोऽवैषाहेड ईमहे॥ *(शुक्ल यजुर्वेद, १६.६)*

ये जो प्रत्यक्ष, निखिल कर्मों के साक्षी, रुद्र रूप आदित्य हैं, जो उदयास्त मे हमारे विविध पापकर्मों और अपराधों से क्रोध में ताम्र की तरह कभी लालवर्ण और कभी पीतवर्ण के हो जाते हैं ('ध्यानार्थ—लाल-पीला होना') किंतु वस्तुत: जो अत्यंत मंगलमय हैं, जिनकी तीक्ष्ण रश्मियाँ रौद्र होते हुए भी कल्याणकारी और सभी दिशाओं में व्याप्त हैं, हम उनके क्रोध-शमन के लिए स्तुति और प्रार्थना करते हैं।

सूर्य और इसकी उपासना की चर्चा विष्णु पुराण, भगवत पुराण, ब्रह्म वैवर्त पुराण आदि में विस्तार से की गई है। मध्य काल तक छठ सूर्योपासना के व्यवस्थित पर्व के रूप में प्रतिष्ठित हो गया, जो अभी तक चला आ रहा है। हालाँकि अनेक विसंगतियाँ और पाखंड भी इसमें जुड़ते गए हैं।

देवता के रूप में : सृष्टि और पालन शक्ति के कारण सूर्य की उपासना सभ्यता के विकास के साथ विभिन्न स्थानों पर अलग-अलग रूप में प्रारंभ हो गई, लेकिन देवता के रूप में सूर्य की वंदना का उल्लेख पहली बार ऋग्वेद में मिलता है। इसके बाद अन्य सभी वेदों के साथ ही उपनिषद् आदि वैदिक ग्रंथों में इसकी चर्चा प्रमुखता से हुई है। निरुक्त के रचियता यास्क ने द्यु स्थानीय देवताओं में सूर्य को पहले स्थान पर रखा है।

मानवीय रूप की कल्पना : उत्तर-वैदिक काल के अंतिम कालखंड में सूर्य के मानवीय रूप की कल्पना होने लगी। इसने कालांतर में सूर्य की मूर्तिपूजा का रूप ले लिया। पौराणिक काल आते-आते सूर्य पूजा का प्रचलन और अधिक हो गया। अनेक स्थानों पर सूर्यदेव के मंदिर भी बनाए गए।

आरोग्य देवता के रूप में : सूर्य की किरणों में कई रोगों को नष्ट करने की क्षमता पाई गई है। ऋषि-मुनियों ने अपने अनुसंधान के क्रम में किसी खास दिन इसका प्रभाव विशेष पाया। संभवत: यही छठ पर्व के उद्भव की वेला रही हो। भगवान् कृष्ण के पौत्र शांब को कुष्ठ रोग हो गया था। इस रोग से मुक्ति के लिए विशेष सूर्योपासना की गई, जिसके लिए शाक्य द्वीप से ब्राह्मणों को बुलाया गया था। इन ब्राह्मणों ने ही सूर्य-रश्मि में छिपी आरोग्य क्षमता का ज्ञान जंबूद्वीप के लोगों को दिया। ये

ब्राह्मण आज भी भारत वर्ष के विभिन्न प्रांतों में 'वैद्य-ब्राह्मण' के रूप में जाने जाते हैं। सूर्य की उपासना पद्धति पर मध्य युग में इनके द्वारा एक ग्रंथ भी लिखा गया, जो अठारह पुराणों में सूचीबद्ध तो नहीं है, पर इसे 'सांब-पुराण' के नाम से जाना जाता है।

पौराणिक और लोककथाएँ : छठ पूजा की परंपरा और उसके महत्त्व का प्रतिपादन करनेवाली अनेक पौराणिक और लोककथाएँ प्रचलित हैं। लोक में एक भ्रम पैदा होता है कि कार्तिक महीने में षष्ठी का व्रत विधान कुमार कार्त्तिकेय से संबंध रखता है। कथा प्रचलित है कि कार्त्तिकेय का पोषण छह कृतिकाओं ने किया था। इसलिए उनकी विजय यात्रा के स्मरण में यह मास कार्तिक है। और इसी मास में छठ पर्व होता है। लेकिन देवी भागवत में प्रियव्रत की कथा आती है। स्वयंभू मनु का पुत्र प्रियव्रत स्वभाव से वीतरागी था। उसने राजकाज छोड़कर संन्यास ले लिया। वंश के समाप्त हो जाने की चिंता से ग्रसित मंत्रियों तथा कुटुंब के द्वारा समझाने पर प्रियव्रत ने विवाह किया और गृहस्थ बन गए। प्रियव्रत को एक पुत्ररत्न पैदा हुआ। दुर्भाग्य से वह मरा हुआ था। श्मशान में उसके करुण कंद्रन और पत्नी के विलाप से वायुमार्ग से जा रहा एक विमान उतरा। उसमें श्वेतवसना एक सौम्य आकृतिवाली देवी विराज रही थीं। देवी ने प्रियव्रत को समझाया, मगर वह शोकाकुल था और उसकी पीड़ा व्यथित कर देनेवाली थी। देवी ने उपचार करके उसके पुत्र को जीवित कर दिया। पुत्र का नाम सुव्रत रखा गया। उस देवी ने बताया कि उसकी उत्पत्ति प्रकृति के छठे अणु से हुई है। उसका नाम षष्ठी है। बालकों का कल्याण करने के कारण वह 'बालदा' है। सबका मंगल करने के कारण 'मंगलचंडी' है। और मन से भी तीव्र गति रहने के कारण वह 'मनसा' देवी है। पौराणिक मान्यता है—काक बंध्या च या नारी, मृत वत्सा च या भवेत। वर्ष शुत्वा लभेतुपुत्र षष्ठी देवी प्रसादत: (देवी भागवत) छठ की उपासना पुत्र प्राप्ति, रोग मुक्ति और पारिवारिक सुख शांति के लिए की जाती है।

रामायण से : एक मान्यता के अनुसार लंका विजय के बाद रामराज्य की स्थापना के दिन कार्तिक शुक्ल षष्ठी को भगवान् राम और माता सीता ने उपवास किया और सूर्यदेव की आराधना की। सप्तमी को सूर्योदय के समय पुन: अनुष्ठान कर सूर्यदेव से आशीर्वाद प्राप्त किया था।

महाभारत से : एक अन्य मान्यता के अनुसार छठ पर्व की शुरुआत महाभारत काल में हुई थी। सबसे पहले सूर्यपुत्र कर्ण ने सूर्यदेव की पूजा शुरू की। कर्ण भगवान् सूर्य के परम भक्त थे। वे प्रतिदिन घंटों कमर तक पानी में खड़े होकर सूर्यदेव को अर्घ्य देते थे। सूर्यदेव की कृपा से ही वे महान् योद्धा बने थे। आज भी छठ में अर्घ्य दान की यही पद्धति प्रचलित है।

कुछ कथाओं में पांडवों की पत्नी द्रौपदी द्वारा भी इंद्रप्रस्थ की स्थापना के समय धौम्य ऋषि के निर्देशानुसार सूर्य की पूजा करने का उल्लेख है। बाद मे वे अपने परिजनों के उत्तम स्वास्थ्य की कामना और लंबी उम्र के लिए नियमित सूर्यपूजा करने लगी थीं।

सामाजिक-सांस्कृतिक महत्त्व : छठ पूजा का सबसे महत्त्वपूर्ण पक्ष इसकी सादगी, पवित्रता और लोकपक्ष है। भक्ति और अध्यात्म से परिपूर्ण इस पर्व में बाँस निर्मित सूप, टोकरी, मिट्टी के बरतनों, गन्ने का रस, गुड़, चावल और गेहूँ से निर्मित प्रसाद तथा सुमधुर लोकगीतों से युक्त होकर लोक-जीवन की भरपूर मिठास का प्रसार करता है।

शास्त्रों से अलग यह जन सामान्य द्वारा अपने रीति-रिवाजों के रंगों में गढ़ी गई उपासना पद्धति है। इसके केंद्र में वेद, पुराण जैसे धर्मग्रंथ न होकर किसान और ग्रामीण जीवन है। इस व्रत के लिए न विशेष धन की आवश्यकता है, न पुरोहित या गुरु की अभ्यर्थना की। जरूरत पड़ती है तो पास-पड़ोस के सहयोग की, जो अपनी सेवा के लिए सहर्ष और कृतज्ञतापूर्वक प्रस्तुत रहता है। इस उत्सव के लिए जनता स्वयं अपने सामूहिक अभियान संगठित करती है। नगरों की सफाई, व्रतियों के गुजरनेवाले रास्तों का प्रबंधन, तालाब या नदी किनारे अर्घ्य दान की उपयुक्त व्यवस्था के लिए समाज सरकार की सहायता की राह नहीं देखता। इस उत्सव में खरना के उत्सव से लेकर अर्घ्यदान तक समाज की अनिवार्य उपस्थिति बनी रहती है। यह सामान्य और गरीब जनता के अपने दैनिक जीवन की मुश्किलों को भुलाकर सेवा-भाव और भक्ति-भाव से किए गए सामूहिक कर्म का विराट् और भव्य प्रदर्शन है।

वैज्ञानिक एवं खगोलीय दृष्टिकोण : छठ पर्व को वैज्ञानिक दृष्टिकोण से देखा जाए तो षष्ठी तिथि (छठ) को एक विशेष खगोलीय परिवर्तन होता है, इस समय सूर्य की पराबैगनी किरणें (ltra Violet Rays) पृथ्वी की सतह पर सामान्य से अधिक मात्रा में एकत्र हो जाती हैं। प्रकृति का यह विधान वर्षा ऋतु में जनमे अनावश्यक कीट एवं अन्य जीवाणुओं को नष्ट करने के लिए है, किंतु इस विधान की सार्वभौमिकता के कारण मनुष्य पर भी इसका प्रभाव पड़ता है। छठ व्रत के अनुपालन से इसके संभावित कुप्रभावों से मानव की यथासंभव रक्षा करने का सामर्थ्य प्राप्त होता है। पर्व पालन से सूर्य (तारा) प्रकाश (पराबैगनी किरण) के हानिकारक प्रभाव से जीवों की रक्षा संभव है। पृथ्वी के जीवों को इससे बहुत लाभ मिलता है।

समान्यतया सूर्य के प्रकाश के साथ उसकी पराबैगनी किरणें भी चंद्रमा और पृथ्वी पर आती हैं। सूर्य का प्रकाश जब पृथ्वी पर पहुँचता है, तो पहले वायुमंडल मिलता है। वायुमंडल में प्रवेश करने पर उसे आयन मंडल मिलता है। पराबैगनी किरणों का उपयोग कर वायुमंडल अपने ऑक्सीजन तत्त्व को संश्लेषित कर उसे उसके एलोट्रोप ओजोन में बदल देता है। इस क्रिया द्वारा सूर्य की पराबैगनी किरणों का अधिकांश भाग पृथ्वी के वायुमंडल में ही अवशोषित हो जाता है। पृथ्वी की सतह पर केवल उसका नगण्य भाग ही पहुँच पाता है। सामान्य अवस्था में पृथ्वी की सतह पर पहुँचनेवाली पराबैगनी किरण की मात्रा मनुष्यों या जीवों के सहन करने की सीमा में होती है। अत: सामान्य अवस्था में मनुष्यों पर उसका कोई विशेष हानिकारक प्रभाव नहीं पड़ता, बल्कि उस धूप द्वारा हानिकारक कीटाणु मर जाते हैं, जिससे मनुष्य या अन्य दीर्घ-जीवियों को लाभ होता है। छठ के दिन जैसी खगोलीय स्थिति (चंद्रमा और पृथ्वी

के भ्रमण तलों की सम रेखा के दोनों छोरों पर) सूर्य की पराबैगनी किरणें कुछ चंद्र सतह से परावर्तित तथा कुछ गोलीय अपवर्तित होती हुई, पृथ्वी पर पुन: सामान्य से अधिक मात्रा में पहुँच जाती हैं। वायुमंडल के स्तरों से आवर्तित होती हुई, सूर्यास्त तथा सूर्योदय को यह और भी सघन हो जाती है। ज्योतिषीय गणना के अनुसार यह घटना कार्तिक तथा चैत्र मास की अमावस्या के छह दिन उपरांत होती है।

छठ पूजा और बिहारवासियों की पहचान : छठ पूजा को देश के कई हिस्सों में बिहार और उत्तर प्रदेश से आए लोगों की पहचान के रूप में देखा जाता रहा है। यही कारण है कि महाराष्ट्र में 'शिवसेना' और उससे टूटकर अलग हुए 'महाराष्ट्र नव निर्माण सेना' के नेता कई बार इसका विरोध कर चुके हैं और इस पर्व को एक प्रकार के शक्ति प्रदर्शन का नाम दे चुके हैं। श्रीकृष्ण के पौत्र सांब को कुष्ठ रोग से मुक्त करने के लिए शाक द्वीप से आए ब्राह्मणों ने मगध क्षेत्र को अपना आश्रय बना लिया। मगध के राजपुत्र का कल्याण करने के कारण उन ब्राह्मणों को 'मग बंधु' कहा गया। इन्होंने सूर्य उपासना का सहारा लेकर जनकल्याण का मार्ग प्रशस्त किया।

औरंगाबाद में प्राचीन सूर्य मंदिर आज भी स्थित है। तिरहुत, भोजपुर, मगध और अंग क्षेत्र में छठ व्रत के अनेक नाम हैं। कहीं किसी लोकगीत में छठी मइया तो किसी गीत में रौना माई के रूप में इनका स्मरण किया जाता है। सामाजिक समरसता का बड़ा पर्व छठ समाज के हर वर्ग के लोगों को जोड़ता है। नदी या तालाब में हर जाति के लोग एक साथ खड़े होकर डूबते और उगते हुए सूर्य को अर्घ्य देते हैं। प्रसाद के रूप में इस मास में उपजे हुए कंद, मूल, फल और अनाज का उपयोग किया जाता है। सारी-सारी रात व्रत करनेवाले परिवार सहित तालाब या नदी के किनारे गीत गाते रहते हैं। पूजा करते रहते हैं और सुबह के सूर्य की पूजा करने के साथ कठिन नियमों में बँधा यह व्रत पूरा हो जाता है।

शुभानंदी
नीतीश्वर मार्ग, आमगोला
मुजफ्फरपुर-८४२००२
दूरभाष : ६२००३६७५०३

मन की पुकार

कविता

• अनीता प्रभाकर

मन के दीप में लौ जगमगाई,
प्रकाश ने की तिमिर से लड़ाई।

श्रद्धा से मंगल-दीप जलाकर,
सुविचारों का प्रकाश फैलाओ।
मन की संकीर्णता को भगाकर,
दिल में सर्वधर्म समभाव जगाओ।

विद्वानों ने यह सीख सिखाई,
मन के दीप में लौ जगमगाई,
प्रकाश ने की तिमिर से लड़ाई।

राह की हर बाधा को हटाकर,
हिम्मत से आगे बढ़ते जाओ।
कर्म के सिद्धांत को अपनाकर,
देश-हित प्राण की बाजी लगाओ।

सुरक्षा हेतु सौगंध यह खाई,
मन के दीप में लौ जगमगाई,
प्रकाश ने की तिमिर से लड़ाई।

परोपकार में जीवन लगाकर,
संसार में प्रेम-भाव फैलाओ।
सत्य-अहिंसा का पाठ पढ़ाकर,
धरा को अरि-मुक्त बनाओ।

विश्व शांति की भेरी बजाई,
मन के दीप में लौ जगमगाई,
प्रकाश ने की तिमिर से लड़ाई।

शत्रु-बुद्धि का विनाश करके,
सदा सत्य को विजय दिलाओ।
मानवता का उद्घोष करके,
एकता की पताका फहराओ।

'वसुधैव कुटुम्बकम्' रीत चलाई,
मन के दीप में लौ जगमगाई,
प्रकाश ने की तिमिर से लड़ाई।

जागरण-दीप

आओ जागरण-दीप जलाएँ,
सबके मुख पर मुसकान लाएँ।
कर दीप प्रज्वलित,
मन को उज्ज्वलित,
हो तिमिर तिरोहित,
प्रत्येक अंतस में ऊर्जा जगाएँ।

आओ जागरण-दीप जलाएँ,
सबके मुख पर मुसकान लाएँ।

न रहो आशंकित,
खुशियाँ हों वितरित,
आस्था स्वर उच्चरित,
कलुष भावना को अनल में जलाएँ।

आओ जागरण-दीप जलाएँ,
सबके मुख पर मुसकान लाएँ।

दीप से दीप ज्योतित,
जग न करो प्रदूषित,
जीवन उद्धार निश्चित,
उत्थान हेतु दूरदर्शिता दिखाएँ।
आओ जागरण-दीप जलाएँ,
सबके मुख पर मुसकान लाएँ।

दीपावली करें सुसज्जित,
हो मंत्रों से अभिमंत्रित,
भव होवे आलोकित,
प्रेम-प्रीति से पावन पर्व मनाएँ।

आओ जागरण-दीप जलाएँ,
सबके मुख पर मुसकान लाएँ।

स्नेह से बाती प्रकाशित,
हो सत् से असत् कंपित,
निर्वाण लौ कर प्रतिष्ठित,
पुन विश्व में मानवता फैलाएँ।
आओ जागरण-दीप जलाएँ।
सबके मुख पर मुसकान लाएँ।

मेरी विद्या दी

● शोभा दानी

आज दिनभर पानी बरसता रहा, रह-रहकर बिजली की कड़कड़ाहट और बादलों की गर्जना ने व्यथित मन को और व्यथित कर दिया। आज लरीसा क्यों नहीं आई। तेज तूफान में भी वह आए बिना नहीं रहती है—एक अनजान आशंका से दिल काँप-काँप जाता। कहीं कोई दुर्घटना न घट गई हो या फिर अस्वस्थ हो, जरा सी ठंड भी उसे बर्दाश्त नहीं है। मैं संज्ञाशून्य सा बरसते पानी को देख रहा था। सुकुमार खो सा गया। अतीत का दर्पण अभी धुँधला हुआ ही नहीं था। एक वर्ष पूर्व की ही तो बात है, जब वह मुझे कॉलेज की कैंटीन में मिली थी। नीली आँखें, पतले होंठ, हँसती तो लगता जूही के फूल झर रहे हों। वाणी में वीणा सी मधुर झंकार ''हैलो सुकुमार, आई एम लरीसा योर क्लासमेट।'' ऐसा अनुपम सौंदर्य तो कल्पनाओं में या प्रतिमाओं में ही देखा था। भाव-विभोर हो अपलक निहारता रहा; लगा क्लियोपैट्रा ही साक्षात् मेरे समक्ष खड़ी हो। ''हाय जेंटलमैन'' तंद्रा भंग हुई, झेंप मिटाते हुए मैंने हाथ मिलाया, ''हैलो, मैं सुकुमार।'' मैंने बकिंघम के लॉ कॉलेज में दाखिला ले लिया था। कुछ माह पूर्व ही लरीसा जर्मनी से आई थी। लरीसा के माता-पिता पाँच वर्ष पूर्व विमान दुर्घटना में काल-कलवित हो गए। बड़े भैया ने स्नेह व प्यार से उसे पाला और उसकी पढ़ाई जारी रखी। हम प्रतिदिन पार्क में, कॉलेज कैंटीन में व रेस्टोरेंट में मिलने लगे। उसकी मनमोहक छवि में मैं ऐसा बह गया कि हमारी दोस्ती कब प्रगाढ़ प्रेम में परिवर्तित हो गई, भान ही नहीं हुआ।

मैंने उसे हिंदी के कुछ वाक्य बोलना भी सिखा दिया। ईश्वर प्रदत्त इतनी खूबसूरत प्रतिमा पर मैं इतना मुग्ध हो गया कि उसे अपने जीवनसाथी के रूप में देखने लगा। यह भी नहीं सोचा कि बाबूजी गाँव के महापंडित और अम्माँ दिन-रात चूल्हे-चौके में खटनेवाली। उन्हें तो जैसे बाहर की दुनिया से कोई सरोकार ही नहीं था। क्या बाबूजी मुझे इस विवाह की स्वीकृति देंगे! विवेक को संध्या भी तो नहीं मिली। विवेक मेरे चाचा का लड़का और संध्या डी. माथुर की बेटी, हमारे साथवाले बँगले में ही रहते थे। संध्या की माँ भी डॉक्टर, दोनों ही खुले विचारोंवाले। संध्या इस दंपती की इकलौती संतान। एक दिन संध्या आई पूजा की थाली लिये। ''सुकुभैया, मुझे आपको व शिवम-रघु को राखी बाँधनी है।'' अम्माँ उस बालिका को मंत्रमुग्ध हो देख रही थीं। ''अरे आजा बेटी, हमारा अहोभाग्य कि मुझे घर बैठे ही बेटी मिल गई

नवोदित लेखिका। १९७४ में राजस्थान विश्वविद्यालय से हिंदी में स्नातकोत्तर। १९९९-२००० लॉयनेस क्लब जनपद अध्यक्षा, जनपद ३२१ ए। पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। संप्रति सक्रिय समाज-सेविका।

और भाइयों को बहना।'' मैं उस वक्त नौ वर्ष का तथा शिवम व रघु दोनों जुड़वाँ चार वर्ष के, संध्या पाँच की और विवेक सात वर्ष का था। हम तीनों एक ही स्कूल में पढ़ते थे। विवेक-संध्या की शुरू से ही नोक-झोंक चलती। छोटी-छोटी बातों पर विवेक अकसर उसके बाल खींचकर हर समय चिढ़ाता रहता, ''क्लास में फर्स्ट आती है तो अपने आपको पता नहीं क्या समझती है!'' विवेक कहता।

लड़ते-झगड़ते, खेलते-कूदते मैंने बी.कॉम. कर लिया। संध्या बी.कॉम. प्रथम वर्ष में और विवेक तृतीय वर्ष में था। मेरा लॉ कॉलेज बकिंघम में दाखिला हो गया था। विवेक को सी.ए. करने के लिए अगले वर्ष जयपुर जाना था। एक दिन संध्या मेरे पास आई और बोली, ''भैया, मुझे आपसे कुछ बात करनी है।'' मैंने कहा, ''बोल।'' ''भैया विवेक अच्छा है न?'' मैंने अनजान बनते हुए कहा, ''तो'', ''क्या भैया आप भी···'' कहकर शरमाती हुए चली गई। वैसे मुझे कुछ अंदेशा तो था कि विवेक-संध्या एक-दूसरे को पसंद करते हैं। मेरे चाचा पेशे से इंजीनियर थे, पंडिताई कभी की नहीं। चाची भी पढ़ी-लिखी नए विचारोंवाली महिला थीं, परंतु जब संस्कारों की बात आती है तो पढ़ाई-लिखाई धरी-की-धरी रह जाती है।

दूसरे दिन लंदन के लिए निकलना था। सारा दिन आपाधापी में बीता और मैं संध्या की बात बिल्कुल भूल गया। विचारों की शृंखला टूटी, आसमान स्वच्छ धुला सा, हल्की धूप चमक रही थी। अनमना सा उठा और सोचा, चलो स्फायर सर्कल तक घूम आऊँ। शायद लरीसा मिल जाए! खोया-खोया सा वहीं पड़ी बैंच पर बैठ गया। ''हाय सुकुमार!'' अचानक ऐलिस-डेविड ने चौंका दिया। ऐलिस-डेविड दोनों ही मेरे क्लासमेट थे—बड़ी प्यारी सी जोड़ी। ऐलिस के नैसर्गिक सौंदर्य के जादू में डेविड खोता चला गया। ऐसा उसने मुझे बताया। ये दानों भी लॉ कर रहे थे। डेविड लंदन से ही आया था। लरीसा, मैं और डेविड-ऐलिस

साथ-साथ घूमते, बकिंघम की दुरूह वीथियों में चलते-चलते कितनी दूर निकल जाते, पता ही नहीं चल पाता! धीरे-धीरे उन दोनों का साथ गहरी दोस्ती में बदल गया। उनका संग-साथ पाकर मैं कुछ पल के लिए अपने वतन को भी भूल गया। डेविड कुछ-कुछ हिंदी के शब्द बोलने लगा था, परंतु ऐलिस बिल्कुल नहीं बोल पाती, वह जर्मनी से आई थी। अत: लरीसा और वह जर्मन में गिटपिट करते रहते।

डेविड बोला, ''सुकुमार, हम नेक्स्ट संडे को मैरिज कर रहे हैं चर्च में।'' ''वाट एबाउट यू!'' मैं चौंका। यह तो संभव ही नहीं है, क्योंकि बाबूजी कट्टर ब्राह्मण तथा माँ ने मेरे विवाह के लिए अपने कुल की कन्या के जो स्वप्न सँजोए हैं, उन पर मैं कैसे तुषारपात करूँ? ''नो-नो इट इज इंपॉसिबल।'' लरीसा उदास हो गई। न कुछ बोली और न ही मुझसे मिली। जीवन में कभी-कभी ऐसे मोड़ आते हैं कि हम कुछ चाहकर भी कुछ नहीं कर पाते। मैं किंकर्तव्यविमूढ़ सा ठगा खड़ा रहा। राह ही नहीं मिल रही थी, फिर डेविड ने एक तुषारपात और किया ''कुमार, आफ्टर वन मंथ लरीसा विल गेट मैरिड विद विक्टर।'' लरीसा और विक्टर की स्कूलिंग एक साथ हुई और साथ-साथ ही बचपन बीता। मुझ पर तो घड़ों पानी पड़ गया। मैंने सोचा भी नहीं था कि मेरे जीवन में ऐसा तूफान आएगा कि रोके नहीं रुकेगा।

जैसे दीपक की लौ मंद पड़कर अचानक प्रदीप्त हो उठती है, वैसे ही मेरे जहन में विद्या दी का ध्यान आया। मुझसे दो वर्ष बड़ी मेरे मामा की लड़की इसी कॉलेज में फाइनल ईयर में थी। इलाहाबाद में मेरे मामा जज के पद पर कार्यरत थे—विशाल बँगला, नौकर-चाकर। गरमियों की छुट्टियों में अम्माँ और तीनों भाई एक महीने का पड़ाव वहीं डालते। अम्माँ, मामाजी की छोटी बहन तथा मामा-मामी, दोनों की लाड़ली, विद्या मामा की इकलौती संतान थी। ईश्वर ने उनके दो पुत्रों को अचानक छीन लिया। एक तो संगम में तैरते हुए डूब गया तो दूसरा पुत्र कुंभ मेले में कहीं खो गया। मामा-मामी पर ऐसा पहाड़ टूटा कि वे इस दु:ख से उबर नहीं पाए। जब विद्या दी का जन्म हुआ तो वे उन्हें पलकों पर बिठाकर रखते। कहीं भी एक खरोंच आ जाए तो दोनों ही तिलमिला उठते। मामा का स्वप्न तो विद्या दी को बैरिस्टर बनाने का था वो भी विलायत भेजकर।

एक दिन मामा ने अम्माँ से कहा, ''विमला, मैं सुकुमार को भी विलायत भेजूँगा, मेरा तो कोई बेटा है नहीं तथा इसे ही मैंने बेटा मान लिया है।'' अम्माँ बोली, ''भैया, तुम्हारे जीजाजी इसकी कभी इजाजत नहीं देंगे। वे तो तीनों बेटों को पंडिताई कराने पर तुले हुए हैं और मैं चाहती हूँ कि ये पढ़-लिखकर किसी लायक बनें।'' मामाजी का प्रभाव मुझ पर पूर्णत: छाया हुआ था। अत: मैं उन्हीं के पदचिह्नों पर चलने लगा। विद्या दी को मामाजी ने बकिंघम भेज दिया लॉ पढ़ने। सभी ने खूब विरोध किया, परंतु मामाजी के आगे न मामी की चली और न ही बाबूजी की। मैं भी बी.कॉम. कर चुका था। मामाजी ने मेरा दाखिला विद्या दी के कॉलेज में करवा दिया। विद्या दी से लगभग रोज ही मिलना होता था। मैंने लरीसा को भी दी से मिलवाया। दी ने मुझे सांत्वना दी, ''सुकुमार, पढ़ाई में मन लगा, मैं बुआजी-फूफाजी से बात करूँगी।'' आज उसी विश्वास से दी से बात की।

दी विचारों में खो गई, ''इतनी जल्दी यह कैसे संभव होगा सुकुमार!'' कुछ दिन इसी पशोपेस में निकल गए। समय द्रुतगति से भाग रहा था। मैं अपने फ्लैट में बैठा जीवन के ताने-बाने बुन रहा था, तभी फोन की घंटी की कर्कश आवाज ने मेरा ध्यान भंग कर दिया। ''सुकुमार बेटा, संध्या और विवेक का विवाह हमने तय कर दिया है, तुम तो आ नहीं पाओगे, पर आते तो अच्छा लगता!'' चाचाजी का फोन था। ''चाचाजी, विवाह कब है?'' ''इसी नवमी को, चार दिन बाद, सभी कुछ इतनी जल्दी तय हुआ कि तुम्हें बताने का समय ही नहीं मिला। तुम्हारी अम्माँ अस्वस्थ रहने लगी हैं—तुम भी अच्छी सी लड़की देखकर ब्याह कर लो।'' बिना रुके मैंने कहा, ''चाचाजी, मुझे एक लड़की पसंद है, जर्मन है और मेरे लिए उसने अंडा तक खाना छोड़ दिया है।'' चाचाजी ने कहा, ''भैया से बात करूँगा!''

उसी शाम विद्या दी कॉलेज कंपाउंड में मिल गईं। मैंने फिर बात छेड़ी। बोलीं, ''अरे, मैं भूल गई एग्जाम के चक्कर में। चल मैं एक दिन रूम पर आती हूँ, वहीं से बात करेंगे!'' सूरज ढल गया, शाम गहराने लगी। छह दिन तो बीत गए। मैं अन्यमनस्क सा बैठा था, दी आकर बोलीं, ''चल बाबूजी को फोन लगा'', मैंने कहा, ''पहले चाचा से बात करेंगे!'' ''चाचा, विवाह संपन्न हो गया?'' ''हाँ, सब कुशलपूर्वक हो गया। तुम्हारी चाची संध्या सी बहू पाकर खुश हैं।'' ''चाचाजी, आपने बाबूजी से बात की लरीसा की?'' ''अरे, मैं तो भूल ही गया।'' दूसरे दिन सुबह-सुबह बाबूजी का फोन आया। बाबूजी का गुस्सा सातवें आसमान पर था। ''क्या मलेच्छ बहू लाएगा? इसीलिए विदेश भेजा था? मना किया था तुम्हारे मामा को, पर मेरी कौन सुनता है, अब भुगतो।'' अम्मा को भी दो-चार बातें सुना दीं। अम्माँ रोने लगीं, ''बेटा, इसी आशा से तो जी रही हूँ कि तेरा ब्याह देख लूँ, राजेश्वरजी की कन्या १२वीं पास है, सुंदर व सुशील। मैं तो मन-ही-मन उसे बहू के रूप में देखने लगी हूँ। राजेश्वरजी मेरे दादाजी के मित्र के बेटे हैं।'' ''मैंने उनकी बेटी सुगंधा को देखा है, अच्छी है, परंतु भावी पत्नी के रूप की मैंने कभी कल्पना नहीं की।'' ''नहीं अम्माँ, तुम शिवम का उससे ब्याह करा दो। मैं लरीसा को अपनी भावी पत्नी के रूप में देखने लगा हूँ, अगर मुझे वो न मिली तो मैं आजीवन विवाह नहीं करूँगा।''

विद्या दी ने भी अम्माँ-बाबूजी को खूब समझाया। विद्या बाबूजी से कभी नहीं डरी, अत: खूब देर बात करती रहीं। शिवम-रघु मेरे छोटे

भाई थे। शिवम पढ़ने में होशियार था, सो इंजीनियरिंग की पढ़ाई के लिए राँची चला गया। रघु का पढ़ने में कभी मन लगा ही नहीं, सो बाबूजी ने उसे वेद-शास्त्रों की शिक्षा दिलवा दी; पर अम्माँ इन सबसे खुश नहीं थीं। हर समय मेरी और शिवम की पढ़ाई सुन रघु चिढ़ जाता। विचारों की तंद्रा भंग हुई। डोर बैल की कर्कश आवाज सुन धड़कते दिल से दरवाजा खोला। सामने लरीसा खड़ी थी। ''कुमार, मैं तुम्हारे बिना नहीं रह सकती। मेरी शादी को छह दिन शेष रह गए हैं।'' रातभर मैं उसे ढाढ़स बँधाता रहा। हम रातभर रोते रहे। सुबह गिरजाघर के घंटे की आवाज से हम चौंककर उठे, ''अरे, सुबह हो गई!'' किसी तरह लरीसा को मनाया, वह संयत हुई। आज की सुबह मेरा जीवन बदल देगी, मैंने कभी सोचा भी नहीं था।

स्वच्छ-धवल आकाश देखकर लग रहा था कि मेरे मन की अँधेरी परतें भी स्वच्छ-स्निग्ध हो गई हैं। अचानक विद्या दी को दरवाजे पर खड़ा देखकर थोड़ा सहम गया, ''इतनी सुबह!'' बस इतना ही कह पाया। ''चल।'' मुझे और लरीसा को लगभग घसीटते हुए ले गईं। ''क्या हुआ दी?'' ''तुम्हारी शादी तो आज ही होगी चर्च में।'' ''क्यों, कैसे, क्या हुआ?'' सारे प्रश्न अनुत्तरित ही रह गए। ''क्या अम्माँ, बाबूजी मान गए?'' दी ने उन्हें कैसे मनाया होगा! दस मिनट में हम चर्च के गेट पर थे—एलिस-डेविड, लरीसा के भाई-भाभी। ''विधिवत् तो तुम्हारा विवाह हिंदुस्तान में ही होगा।'' आज मैं कुछ और भी माँगता तो वो भी मुझे मिल जाता। मुझे अपने भाग्य पर विश्वास ही नहीं हो रहा था। शाम को लरीसा के भाई ने विवाह के उपलक्ष्य में छोटी सी पार्टी दी। सभी से विदा लेकर मैं दी को लेकर घर पहुँचा। अम्माँ का फोन था—''बधाई हो बेटा, राजेश्वरजी ने सुगंधा व शिवम के लिए हाँ कर दी है, जल्दी आना।'' आज मुझे दो-दो खुशियाँ मिली हैं। काफी मान-मनौवल के पश्चात् हमें एक सप्ताह की छुट्टी मिली। हवाई अड्डे पर सभी ने अश्रुपूरित नेत्रों से विदाई दी। मेरी आँखों में दीदी के लिए कृतज्ञता के आँसू थे।

ए-२८, सेक्टर-२६
नोएडा-२०१३०१
दूरभाष : ९८१८१८३०८५

नवगीत

करते खुट्टी-मेल

• जयराम जय

बचपन की गलियों में खेले
कैसे-कैसे खेल,
इक-दूजे के पीछे भागे
बनकर छुक-छुक रेल।

दौड़-दौड़कर छुप्पम-छुपाई
मन को भाती थी,
आँख बंद कर प्रीति पास में
दौड़ी आती थी,
झूठ-मूठ में आँख दिखाकर
करते खुट्टी-मेल।

गुल्ली-डंडा, लब्बा-पारी
उछल-कूद न्यारी,
जोश दोगुना बढ़ जाता
जब दिख जाती प्यारी,
मुँह बिचकाने वाले क्षण में
बढ़ी प्रेम की बेल।

खट्टी अमिया खाकर भी
मन में मिठास बढ़ना,
एक कहानी बन जाती थी
कंधों पर चढ़ना,
प्रतिबंधों में जीना लगता था
जैसे हो जेल।

पाटी-घोटा लिये बुद्दका
खेल-खेल पढ़ना,
पंडितजी की आँख बचाकर
इधर-उधर तकना,
बप्पा पूछ रहे अम्माँ से
पास हुए या फेल?

छत-आँगन में खड़ी प्रतीक्षा
आँसू बरसाए,
आनेवाले कहाँ फँस गए
अभी नहीं आए,
बचपन के सुख अंधकूप में
किसने दिए ढकेल?

पनघट की वह हँसी-ठिठोली
सावन के झूले,
दुनियादारी के चक्कर में
सबकुछ अब भूले,
जीवन जीना कठिन हो गया
निकल रहा है तेल।

'पर्णिका' बी ११/१ कृष्णविहार
आवास विकास कयाणपुर
कानपुर-२०८०१७ (उ.प्र.)
दूरभाष : ९४१५४२९१०४

पहेलियाँ

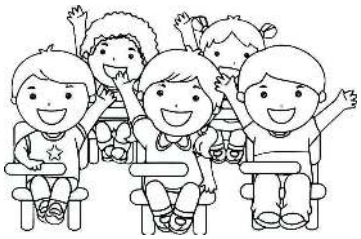

बाल-बूझ पहेलियाँ

● शिव अवतार सरस

: एक :

समझ गए तो बोलो··· ?
रंग-बिरंगे पंखों वाली,
घूम रही हूँ डाली-डाली
कली-फूल की बनकर आली,
झूम रही हूँ मैं मतवाली
लता, बेल, वृक्षों पर मचली,
हाथों में आ-आकर फिसली
लगती स्वर्ग परी-सी असली,
समझ गए तो बोलो—तितली।

: दो :

सब कहते मुझको··· ?
भिन-भिन, भिन-भिन करता
डाली-डाली मँडराता,
जामुन जैसा काला रंग, पर
नहीं किसी को मैं भाता,
बच्चे-बच्ची सब डर जाते
कली-फूल पर जब दौड़ा,
पकड़ न पाते कोई मुझको
सब कहते मुझको—भौंरा।

: तीन :

नाच रहा जंगल में··· ?
मिलजुल रहते नर-मादा,
मगर नाचता 'नर' ज्यादा
पंख बहुत लंबे, दो पैर,
दूर-दूर तक करता सैर
काँ-काँ-काँ की कर आवाज,
बुला रहा साथी को आज
बादल देख करे नित शोर,
नाच रहा जंगल में—मोर।

: चार :

देखो चलता···पटाँग ?
पतली गरदन लंबी टाँग,
चलता देखो ऊटपटाँग
पीछे लटकी छोटी पूँछ,
होंठों पर हलकी सी मूँछ
रखे पेट में जल की थैली,
शक्ल सदा से भद्दी-मैली
खेती का भी उत्तम साधन,
चलते रहे कभी थे वाहन—ऊँट।

: पाँच :

मैं हूँ सबसे लंबा प्राणी
चोटी तक चरने की ठानी,
चितकबरा-सा मेरा रंग
चलता सदा झुंड से संग,
रखता लंबे-लंबे पैर
दूर-दूर तक करता सैर,
मिला न अब तक कभी लिहाफ,
मुझको कहते सभी—जिराफ।

: छह :

मैं हूँ···का छत्ता ?
कटहल जैसा है आकार,
लाखों छिद्रों की भरमार
भिन-भिन-भिन मक्खी करतीं,
फूलों से रस लेकर भरतीं
बनता मोम, शहद तत्काल,
नहीं बिगड़ता सालो-साल
पेड़ों पर लटका मिलता,
मैं हूँ—मधुमक्खी का छत्ता।

: सात :

मुझको सब कहते··· ?
खंभे जैसे चार पैर हैं,
पीछे लटकी छोटी पूँछ,
दाँत दिखाता रहता अकसर,
मगर न मिलती मुख पर मूँछ,
तब रहता था युद्धक्षेत्र में,
अब सरकस का हूँ साथी,
तरह-तरह के करतब करता,
मुझको सब कहते—हाथी।

: आठ :

विश्वविदित है अरबी··· ?
तब रण में आगे रहता था
अब विद्युत् पॉवर कहता,
मुझको लेकर 'रेस' लगाते
गरमी-सर्दी सब सहता,
खड़े-खड़े सो लेता थोड़ा
तेज भागता खाकर कोड़ा,
इक्के-ताँगे में भी चलता
विश्वविदित है अरबी—घोड़ा।

: नौ :

मैं ही हूँ वह···काली ?
ऋतु वसंत में दौड़ी आती
दूर क्षितिज में फिर छिप जाती,
रूप-रंग मेरा भी काला
सारा जग मेरा मतवाला,
कुहु-कुहु की मधुरिम आवाज
भरे आम में मधुर मिठास,
मुझे देखकर खुश हैं आली
मैं ही हूँ वह—कोयल काली।

: दस :

बोलो ऐसी कौन कली ?
हमने देखी एक कली
इधर चली फिर उधर चली,
कमर मोड़ सिर झटक चली
मक्खी-मच्छर गटक चली,
हिंसक प्राणी है निश्चित
पर करती मानव का हित,
शीत-काल में छिप जाती
छत पर उलटी लटक चली,
ऊपर से मटमैला तन
रेंग रही पंजों के संग,
पेट श्वेत, चिकना-चुपड़ा
कीट-पतंगे सटक चली,
तन पर रखती लंबी पूँछ
मगर न मिलती मुख पर मूँछ,
फूल कभी न बन पाई
ऐसी अद्भुत मिली कली,
भौंरे निकट न आ पाते
तितली-झींगुर घबराते,
छिप-छिप फूली और फली,
बोलो ऐसी कौन कली ?
उत्तर (छिपकली)

साअ
मालती नगर,
मुरादाबाद-२५५००१ (उ.प्र.)
दूरभाष : ०९४५६०३२६७१

जाँबाज क्रांतिकारी प्रफुल्ल चंद्र चक्रवर्ती

● ऊषा निगम

बीसवीं शताब्दी के प्रथम दशक में बंगाल में होनेवाले राजनीतिक परिवर्तनों तथा अंग्रेजी सरकार की घोर दमन की नीति ने यह बिल्कुल स्पष्ट कर दिया था कि अब केवल शांतिपूर्ण प्रतिरोध से काम नहीं चलेगा। देश को आजाद कराने के लिए किसी अन्य मार्ग का अनुसरण करना होगा। फलस्वरूप बंगाल में अनेक गुप्त क्रांतिकारी सगंठनों की स्थापना हुई। कलकत्ता की 'युगांतर समिति' के कर्णधार बारींद्र कुमार घोष (महर्षि अरविंद के भाई) ने सर्वप्रथम १९०७ के आसपास बम की आवश्यकता और क्रांतिकारियों द्वारा बम के प्रयोग की जरूरत को महसूस किया। उन्होंने उल्लासकर दत्त तथा कुछ अन्य विश्वसनीय साथियों की मदद से कलकत्ता में मानिकतल्ला बाग के केंद्र में बम बनाने की व्यवस्था की।

बम तो बन गए, लेकिन उनका परीक्षण आवश्यक था, ताकि सफलता पर संदेह न रहे, और यहीं से प्रफुल्ल चंद्र चक्रवर्ती की प्रमुख भूमका का आरंभ होता है। प्रफुल्ल रंगपुर के क्रांतिकारी दल के सदस्य थे। उन्हें ही बम के परीक्षण का दायित्व दिया गया। यह निर्णय लिया गया कि देवघर के रोहिणी पर्वत पर परीक्षण किया जाएगा। प्रफुल्ल के साथ उल्लासकर, बारींद्र और विभूति सरकार भी थे। यह फरवरी १९०८ की बात है।

बम परीक्षण के पूर्व प्रफुल्ल को सारे निर्देश दिए जा चुके थे। यह कार्य बहुत सावधानीपूर्वक किया जाना था। सभी साथियों के साथ रोहिणी पर्वत पर पहुँचकर प्रफुल्ल ने एक रस्सी की मदद से बम को पहाड़ी के नीचे फेंका। बम परीक्षण का यह प्रथम अवसर था। अनुभव न होने के कारण इस बात का अनुमान नहीं हो सका कि बम फेंकने के बाद क्या होगा, कितना होगा।

प्रफुल्ल को बम फेंकते ही किसी पहाड़ी के पीछे छुपकर बैठ जाने का आदेश दिया गया था, जिसका अनुसरण या तो वह नहीं कर पाए अथवा उन्हें समय नहीं मिला। बम फेंकने और उसके फटने के बीच समय का अंतराल बहुत कम रहा, जिससे प्रफुल्ल बम विस्फोट होने के समय का अनुमान नहीं लगा सके। ऐसा भी हुआ कि बम ने धरती का स्पर्श नहीं किया, बीच में ही वायु के संपर्क में आने पर ज्वलनशील विस्फोटक रसायनों में प्रतिक्रिया स्वरूप तेज आवाज के साथ विस्फोट हो गया। वे अपनी सफलता पर प्रसन्न हो रहे थे कि प्रफुल्ल गंभीर रूप से घायल हो गए। वस्तुत: समय से पूर्व विस्फोट हो जाने के कारण प्रफुल्ल स्वयं को बचा नहीं सके। तीव्र गति से पत्थर उनके ऊपर आए, जिनके लगने से उनके मस्तक का एक हिस्सा तथा एक आँख फट गई, भेजा बाहर निकल आया और उनकी तुरंत मृत्यु हो गई। जो प्रफुल्ल एक क्षण पूर्व उल्लास और यौवन से भरा था, जो देशभक्ति की ऊर्जा से ऊर्जावान था, वह एक क्षण में ही शांत-स्थिर पड़ा था; एक क्षण में ही जीवन के सभी लक्षण उससे दूर चले गए थे। (*के.सी. घोष—द रोल ऑव ऑनर, पृ. १५३*)

विस्फोट में उल्लासकर भी घायल हुए। उन्हें उपचार के लिए दल के केंद्र पर लाना आवश्यक था। दुर्घटना के समय अँधेरा होना आरंभ हो गया था। अत: प्रफुल्ल के साथी उल्लासकर को लेकर चले गए। प्रफुल्ल को वहीं छोड़ देना उनकी विवशता थी। उल्लासकर को बचाना उनका पहला कर्तव्य था। किसी औजार के न होने के कारण पथरीली धरती को खोदा नहीं जा सकता था। अत: शव को गाड़ना असंभव था। शव को जलाना भी नामुमकिन था, क्योंकि प्रथम, सूखी लकड़ियों का अभाव था। द्वितीय, चिता से उठनेवाले धुएँ से स्थानीय लोग आकर्षित होते और उन सबका वहाँ से बचकर निकलना कठिन हो जाता।

घटना के दूसरे दिन प्रफुल्ल के साथी पहाड़ी पर गए। उन्होंने प्रफुल्ल के शव को लगभग उसी स्थिति में पाया, जैसा वे छोड़कर गए थे। इसके अगले दिन बारींद्र विभूति और उल्लासकर को देवघर से वापस जाना था। अत: वे पुन: अपने मृत साथी को देखने आए, लेकिन शव वहाँ नहीं था। उन्हें हैरानी इस बात की थी कि पूरा शव गायब था। किसी प्रकार का कोई अवशेष—बाल, हड्डी अथवा कपड़े के टुकड़े, कुछ भी वहा शेष नहीं था।

प्रफुल्ल के पिता ईशान चंद्र रंगपुर में पेशकार थे। सरकारी कर्मचारी होने के बावजूद ईशान चंद्र क्रांतिकारियों के सहयोगी थे। बारींद्र कुमार

घोष ने अपने एक भाषण में कहा था—''रंगपुर हमारी समिति का एक गढ़ था। वहाँ के पेशकार हमारे बड़े समर्थक थे। वे कहते थे कि में एक-एक कर अपने सभी लड़कों को देश के काम में लगाऊँगा, तुम लोग उनको मातृ-पूजा के लिए बलि चढ़ाना।'''प्रफुल्ल की मृत्यु का समाचार ईशान को लिखा गया तो उन्होंने जवाब में लिखा—'ठीक है, अब मैं अपने एक और लड़के को भेज रहा हूँ, उसे मातृ-पूजा में उत्सर्ग करना।' उनके उस दूसरे पुत्र का नाम सुरेश चंद्र था।

देश को माँ और उसकी सेवा को पूजा-अर्चना माननेवाले पिता के पुत्र ने देश के लिए अपने जीवन का बलिदान कर दिया। यह तो क्रांतिकारी आंदोलन का प्रारब्ध था। आगे चलकर देश के लिए सर्वस्व न्योछावर करनेवाले ऐसे निर्भीक युवकों की एक लबी श्रृंखला बनी, जिन पर गर्व करने का मन होता है। ये न कायर थे, न आतंकवादी, केवल पराधीनता की श्रृंखलाओं में जकड़ी अपनी भारत माँ को दासता से मुक्त कराना उनका ध्येय था।

सुपरिचित लेखिका। स्वतंत्रता सेनानियों पर विशेष लेखन। पत्र-पत्रिकाओं में लेख आदि निरंतर प्रकाशित। 'कानपुर : एक सिंहावलोकन' स्मारिका भी। सन् १९७०-७२ में पी.पी.एन. कॉलेज में अध्यापन कार्य किया। संप्रति लेखन में रत।

७४ कैंट, कानपुर-२०८००४
दूरभाष : ९७९२७३३७७७

बाल-कविता

दौड़ी-दौड़ी बिल्ली आई

● शिवचरण सरोहा

नन्ही छोकरी

नन्ही सी छोकरी
सिर पर टोकरी,
टोकरी में केले
दौड़ी जाए मेले,
कड़ी धूप झेले
केले लो, केले,
दुनिया के झमेले
कैसे पढ़े-खेले?

चूहे की दुकान

एक तराजू
एक बाट,
चूहा लेकर
आया खाट।
छोटी सी
दुकान लगाई,
दाल-चीनी
उसने सजाई।
दौड़ी-दौड़ी
बिल्ली आई,
दुकान पर
नजर जमाई।
लाला क्या है
तेरे पास,
मेरे लिए कुछ
खासम-खास।
सिर खुजलाकर
मुँह खोला,
लेकर उबासी
चूहा बोला—
'देर हो गई
बिल्ली बाई,
खत्म हुई अब
दूध-मलाई।'

हवा

पत्तों में सरसराई
लहरों में लहराई,
किताबों के
पन्ने पलटे,
न जाने कितने
छप्पर उलटे,
गुस्से में फिर
आँख दिखाई,
पैर पटके
धूल उड़ाई,
फिर वो
हवा हो गई,
अभी यहीं थी
कहाँ खो गई?

बंदर का डर

बोला बंदर बँदरिया से
कहाँ चल दी डियर,
तुम्हारे जाते ही मन में
हो जाता है फियर।
पहन चली हो तुम
कपड़े सुंदर वाइट,
दिल्ली में डार्लिंग
सेफ नहीं है नाइट।
जल्दी से तुम
घर लौट आना,
मिल न जाए किसी को
ईव टीजिंग का बहाना।
बोली बँदरिया तैश में
मैंने सीखे हैं कराटे,
किसी ने की बदतमीजी
पड़ेंगे उसे चाँटे।

आधी छुट्टी

हँसते-हँसाते
नाचते-गाते
धक्कम-धक्का
गुत्थम-गुत्था
पकड़म-पकड़ाई
छुपन-छुपाई
हल्ला-गुल्ला
खुल्लम-खुल्ला
अब्बा-कुट्टी
आधी-छुट्टी
ता-ता थैया
नाचो भैया।

ए-१०७, शकूर पुर
आनंद वास
दिल्ली-११००३४
दूरभाष : ८४४७१७१०१४

अंतरगंगी

मूल : **राघवेंद्र पाटील**
अनुवाद : **ललितांबा**

श्री राघवेंद्र पाटील कन्नड़ के सुप्रसिद्ध कथाकार हैं। उनकी ध्वनि और उनका संदेश ज्यादातर प्रतीकात्मक हुआ करते हैं। केंद्रीय साहित्य अकादेमी ने उनको उनकी कहानियों के लिए पुरस्कृत किया है। उन पुरस्कृत कहानियों में से यह अंतरगंगी भी एक है। मूलतः प्राध्यापक पाटील की रचनाओं में सामाजिक चिंतन बहुत गहरा है। उनकी कहानियों की प्रशंसा कर कन्नड़ के यशस्वी कवि एच.एस. वेंकटेश मूर्ति कहते हैं, ''आसानी से मुँह खोलनेवालों में से नहीं। जड़ भरत की तरह ठंडा हो बैठे आपके अंदर कैसे-कैसे अनाहत की प्रथम वर्षा का गर्जन है, पन्ना खोलते ही थाप देते अरबी घोड़े का खरपुट निनाद है। तेजी से बहती हवा के आगे जड़ ही उखड़कर हिलनेवाला इंद्रधनुष है।'' कन्नड़ के स्थापित समीक्षक आमूर के शब्दों में–''पाटील जीवन की लय का अपना अन्वेषण आगे बढ़ाते हैं। पाटील अपने अनुभवों का वर्णन कर कहते हैं कि सच्चाई और उसकी प्रस्तुति का तर्क एवं वैचारिकता लेखक पर बहुत बोझ डालती है।''

अटारी पर मेरा कमरा है। एक पलंग, एक कुरसी, एक टेबल है। मैं सामान्य रूप से वहाँ पढ़ता-लिखता नहीं। वहीं पर नहीं, कहीं भी, टेबल की एक दराज, दराज में मेरे लिए आवश्यक वस्तुएँ। मैं अपना ज्यादातर वक्त इसी कमरे में बिताता हूँ। नीचे खाना खाता हूँ, चाय पीता हूँ, नाश्ता करता हूँ। ऊपर अपने कमरे के बगलवाले टॉयलेट में जाता हूँ, सिगरेट पीता हूँ और कुछ-कुछ···ये सब करने के लिए कोई समय-नियम आदि मेरे लिए कुछ नहीं···सब किसी काल-निर्देशन से बँधे नहीं। इसी तरह का एक दिन बीता, दस दिन, सौ दिन, फिर हारकर अनगिनत कई दिन बिताकर आज आया। आज मैं खाना खाकर पलंग पर पाँव फैलाए पड़ा हूँ।··· सिगरेट पीकर मैं जो धुआँ छोड़ रहा था, उसमें कैंसर के वायरस नाच रहे थे। धुआँ सिर तक चढ़ा, खाँसी आई। छाती में गौर-गौर की आवाज के साथ जलन शुरू हुई। आजकल रुक-रुककर छाती में दर्द होता रहता है। मेरे मन में हठात् एक विचार चढ़ा। सोचा, क्यों न किसी मजदूर को बुलाकर छाती में गड्ढ़ा खुदवाकर पता लगाया जाए कि अंदर हुआ क्या है? बस, मैंने खिड़की के पास जाकर पिछेवाले मकान में रहते माली को बुलाया। उससे सब्बल और फावड़ा लाने को कहा, माली आया। मैंने कहा, ''देख काडू, काडप्पा उसका नाम था। अभी उठा तो जलने लगा है। बहुत करके जल मूल सूख गया होगा। थोड़ा सा खोदकर देखना चाहिए।'' आदेश किया। माली ने ''जी'' कहा। मैं पीठ के बल लेटा। काडप्पा ने खोदना शुरू किया। पहले फावड़े से खोदा, उसे एक टोकरी में भरकर मेरी बगल में फेंका। उसमें जरा सा भी शीतांश न था। काडप्पा खोदता ही गया। ढेर बढ़ता गया। मैंने पूछा, ''काडू, जल मूल मिला?'' गहराई से काडप्पा की आवाज सुनाई दी, ''नहीं'', मैं अपनी ऊब हटाने के लिए सोचने लगा कि काडप्पा की आवाज कितनी गहराई से आई होगी? काडप्पा की बीवी सिर पर पाथेय उठा लाई। थोड़ी देर खोदना बंद कर काडप्पा ने खाना खाया, पानी पिया। मैंने भी जरा सी चाय पी। काडप्पा ने फिर से खोदना शुरू किया। मैंने जोर से पूछा, ''रे काडा, जल मूल मिला?'' काडा की आवाज बहुत धीमी सुनाई दी, ''अभी नहीं।'' मेरे अंदर खोदने की आवाज धड्-धड् सुनाई पड़ रही थी। ढेर पड़ता जा रहा था। काडप्पा का खाना-पानी, काडप्पा का आराम करना, फिर खुदाई, फिर-फिर ढेर बढ़ना···बीच-बीच में जल मूल मिला? वाला मेरा प्रश्न काडप्पा का निषेधात्मक जवाब···इसी तरह चक्र चला था।

एक दिन, दो दिन, अनगिनत कई दिन बीतकर आज आया···काडप्पा खोदता ही रहा। ढेर मात्र सूखा। जल नहीं, जल मूल नहीं, गीला नहीं, शीतांश नहीं। काडप्पा दुबारा काडू बना। काडप्पा बना, काडप्पा बना, काडप्पा बना वह खोदता ही रहा। अंत में काडप्पा ने ''हो'' कह चिल्लाया। धम्-धम् कर ऊपर चढ़ने लगा। दिनभर रातोरात चढ़ता रहा, खाली कैसे होता···जन्म-जन्म की खुदाईवाला गड्ढा जो था। फिर किसी तरह ऊपर आकर मेरे आगे घुटने टेककर बैठा, ''मिला बाबूजी!'' कहा। मुझे खुशी मिली। ''क्या-क्या है? कितने जल मूल हैं। बता तो?'' मैंने कहा। उसने कहा कि ''आप खुद उतरकर देख लीजिए।'' मैंने कहा, ''अपनी छाती के बराबर गड्ढे में मैं कैसे उतर सकता हूँ रे?'' उसने कहा, ''क्यों नहीं बाबूजी, जैसे मैं उतरा था, मेरी बीवी उतरी थी, मेरे बाप, दादा, परदादा उतरे थे न, उस तरह आप भी उतरिए न। मैंने भी यह सोचकर कि ''सच तो है।'' उतरने लगा। काडू, काडप्पा, काडप्पा जिन सीढ़ियों से उतरा था, मैं भी उन्हीं सीढ़ियों से उतरने लगा। उतरकर जमीन के नीचे जाकर देखता हूँ कि तल भाग पर एक-दो-दस-सौ···थक गया अनगिनत चिंता! मैं डर गया। लगा, मैं यहाँ कहाँ आ गया? यहाँ कोई तो मिल सकेगा, मैंने दोनों तरफ अपनी नजर दौड़ाई। वहाँ एक इनसान बैठा था। सोचा, डरते समय एक साथी मिल गया, मैं उसकी तरफ बढ़ा। वह चिता के एक अंगारे से अपनी चिलम भरकर गाँजे को गरम कर रहा था। मुझे देखकर वह इनसान भयंकर रूप से हँसा। उसके दाँतों के छेद से मक्खी उड़ आए। उससे गंध झर रही थी। उसका बदन दुर्गंध भरा, भयंकर हँसी, इनसे बेचैन होकर मैं समझ नहीं पाया कि उससे क्या बात करें, सिर्फ आँखों से देखता रहा। वह अब फिर से विकृत रूप से हँसा, परिचित इनसान की तरह यह पूछकर, ''आराम से हो?'' मेरे पास आकर कंधों पर अपना हाथ रखा। मुझे लगा, यह तो पूरा असभ्य है, मगर मैं उसके साथ झगड़ा नहीं कर सकता था, क्योंकि वह जानता ही होगा कि मेरा जलमूल कैसे सूख गया? मैंने बातें कीं, बताओ, यहाँ का जलमूल

कैसे सूख गया? क्यों सूखा? कब सूखा? लगा, वह बिना हँसे बात कर ही नहीं सकता। गंदे तरीके से हँसा, ''क्या बाउजी। उछलता रहा, यहाँ का सारा जल सुखाकर आपने ही तो इसे मरघट बनाया है। वह कैसे? वह कैसे? वह कैसे? यह मुझे कहना पड़ेगा?'' मुझे लगा यह झगड़ा करने लगा है। मुझे छोड़कर झगड़ा करवाकर यह शायद मेरा गला दबाना चाहता है। मैं एकदम से धीमा पड़ा और कहा, ''अरे भाई, तुम यह क्या कह रहे हो? मैंने उस जल भरी भूमि को श्मशान बनाया? जब वह आदमी नीचे धसक गया और जोर से रोना शुरू कर दिया। फफककर रोने लगा। मैं वास्तव में घबरा गया।

यह सोचकर मैं कैसे इनसान के साथ बात कर रहा हूँ, हिचक गया। हिम्मत अपनाकर डरते-डरते ही मैं उसको शांत करने की कोशिश करने लगा। उसका रोना नियंत्रित हुआ। लगा, यह अजीब इनसान है, पागल भी हो सकता है। उसने रोना बंद करते ही कहना शुरू किया। वाल्मीकि की कहानी, सोचा कि यह कहीं वाल्मीकि का भूत तो नहीं? घबरा गया। भगवान का स्मरण किया। ब्रह्म गाँठ को पकड़ा। डर के बीच भी उसकी कहानी से ऊब गया। ऐसा लगा कि असंबद्ध बोल रहा है। मैंने जम्हाई ली। उसने कहानी रोक दी, फिर से रोने लगा। आवाज न ऊँचा उठती, न उतरती, सावन की झरती बारिश जैसा रोना। गरमी की धूप जैसा रोना। अब से मुझे भी रोना आने लगा। शांति से ऊँची आवाज में पूछा, ''अरे भाई! चुप हो जाओ।'' मैंने यह पूछा कि ''यहाँ का जलमूल कब और क्यों सूखा, उसके लिए रोते क्यों हो?'' उस इनसान की आँखें चौड़ी हुईं। उसका सारा खून आँखों में ही था। वह गुस्से में आया था। क्रोध की गंध उसकी आवाज में हठात् फूटी। वह कहने लगा, ''सुनना चाहते हो, सुनो। तुम्हारी छाती में गंगा निनाद कर रही थी। बहुत दिन पहले तुमने लकड़ी इस्तेमाल करते वक्त, पत्थर साफ करते तुमने कपड़ा नहीं देखा तब...वह ज्यादा दिन नहीं चला। तुमने एक दिन आदमी को नीचे भेजकर अपनी छाती को पानी में डुबोने को कहा।

सही, शुरू हो गया। दूसरा-तीसरा-चौथा...भेजते ही रहे, मैंने हम सबको तुम्हारी छाती के पानी में तुम्हारी अंतरगंगा में डुबोया। तुम्हारी गंगा मैली हो गई, सड़ गई। सड़कर दुर्गंधित हुई, मगर तुमने जिन लोगों को भेजा, उन्हें मैंने डुबोया ही। अपने जल की गंध तुम सह नहीं सके। नाक बंद की, दूर न हुई। अत्तर की बोतल उँड़ेल ली, बंद न की। अंत में तुमने कह दिया, ''आग लगा दो।'' उस इनसान की बातें चलती रहीं, तभी उसके नाखून बढ़ गए। आँखें लाल हुईं। उसके बदन से धुआँ फूटा, फिर अंत में वह भी एक चिता बन गया। मैं इस डर से कि वह मुझको ही जला देगी, ऊपर की तरफ भागने लगा। उस चिता से बचकर ऊपर जाने के लिए काडप्पा ने जो खोदा था, उन सीढ़ियों को लाँघ-लाँघकर मैं चढ़ने लगा।

सा अ

लघुकथा

गौ-ग्रास

• कोमल वाधवानी 'प्रेरणा'

सुंदरी देवी भोजन की थाली परोसी जाने पर श्लोक पढ़तीं, फिर थाली में से प्रत्येक व्यंजन का अंश एक चपाती पर रखकर गौ-ग्रास निकालतीं। भोजन के पश्चात् हाथ धोकर बालकनी में जा पहुँचतीं और उसके नीचे पहले से इंतजार कर रही गाय को गौ-ग्रास दे दिया करतीं। अगर कभी बालकनी में सुंदरी देवी नहीं दिखाई देतीं तो अपने आने की सूचना गाय रँभाकर दे देती।

कभी-कभार स्कूल की छुट्टी होने पर सुंदरी देवी के पोते-पोती भी इस दृश्य का आनंद उठाते और दादी से चुहलबाजी करते, ''अम्माँ, भूरी गाय ने कॉलबेल बजाई है। जाओ-जाओ, आपको बुला रही है।'' सुनकर अम्माँ मुसकरा देतीं।

अम्माँ के घर के सामने थोड़ी सी दूरी पर श्रीराम लॉज का पिछवाड़ा था, कुछ उजाड़ा-सा, जहाँ पर आते-जाते लोग गायों के लिए चारा डाल दिया करते थे, इसलिए वहाँ गायों का झुंड अकसर खड़ा रहता था। उसी झुंड में एक भूरी गाय थी, जिसे अम्माँ शुरू-शुरू में आवाज देतीं, तो वह उनकी एक आवाज पर ही दौड़ी आती। अम्माँ के हाथ से गौ-ग्रास खाकर लौटते समय वह पीछे मुड़कर अवश्य देखती तो अम्माँ को लगता, जैसे कह रही हो कि अब तुम भी जाओ और आराम करो।

एक दिन अम्माँ गौ-ग्रास लेकर बालकनी में पहुँचीं तो गाय नदारद थी। अस्सी वर्षीया अम्माँ ने अपनी धुँधली दृष्टि से दूर तक देखा, पर कुछ स्पष्ट न दिखा। उन्होंने अपना चश्मा निकाला और साड़ी के पल्लू से पोंछा, फिर लगाते हुए गाय को आवाज देना शुरू कर दिया। गाय को न आते देखकर उनका स्वर तेज और तेज होता चला गया। उनकी बेचैनी उनके स्वर में साफ झलक रही थी। यह देखकर सामने की एक छोटी सी गुमटी में बैठे टेलर मास्टर परमारे ने कहा, ''अम्माँजी, गाय तो अपने नियत समय पर आई थी, बहुत देर खड़ी रही, पर आखिरकार थककर चली गई।''

''अच्छा, मैंने तो सुना ही नहीं। सुनती भी कैसे? बच्चों ने जोर से टी.वी. जो चला रखा था।'' अम्माँ ने अपनी उँगली कान में डालकर इशारे से बताया।

''लाइए अम्माँजी, मैं देकर आता हूँ उसे।'' टेलर मास्टर ने आश्वस्त करते हुए कहा।

''अच्छा-अच्छा! बिना घड़ीवाली गाय भी अपने काम समय पर कर लेती है और एक हम लोग हैं, जो घर में इतनी घड़ियाँ होने के बावजूद...।''

पल्लू से आँखें पोंछती अम्माँ अंदर चली गईं।

सा अ

'शिवनंदन', ५९५, वैशाली नगर
(सेठीनगर), उज्जैन-४५६०१० (म.प्र.)
दूरभाष : ०७३४-२५२५२७७

हे उलूकवाहिनी! बरसो छप्पर फाड़ के

● ओम उपाध्याय

इधर जब से सुना है कि लक्ष्मी जब भी बरसती है तो छप्पर फाड़ के बरसती है, मैं सतर्क हो गया हूँ, आखिर औरों की भाँति धनवाली लक्ष्मी की चाह मुझे भी तो है, इधर जैसे ही लक्ष्मी के छप्पर फाड़कर बरसने का सुना, उधर मैंने अपने एक इकलौते मकान, जिसे मैंने 'तन', 'मन' और 'धन' अर्पित कर बनवाया था, पहले तो मकान बनवाने हेतु मन बनाने में फिर उस 'मन' पर घर के अन्य सदस्यों के 'मन' की स्वीकृति की मुहर लगवाने में, क्योंकि जब तक ये प्राथमिक औपचारिकताएँ पूरी नहीं करते, मकान तो क्या! किसी भी काम का श्रीगणेश नहीं हो सकता, खैर, जब अपना मकान बनवाने का मन बन गया व परिवार के सदस्यों की स्वीकृति भी मिल गई तो फिर अपना घर बनवाने के लिए धन की पड़ताल शुरू हुई और इस पड़ताल में तन को तकलीफ देना पड़ा। धन प्राप्ति की इस मुहिम में काफी भटकने, यहाँ-वहाँ हाथ पाँव मारने के पश्चात् जो सार निकला, धन प्राप्ति का कूल फंडा तैयार हुआ, वह था अपना 'प्रॉविडेंट फंड'। प्रॉविडेंट फंड हर सरकारी कर्मचारी अधिकारी का एकमात्र रक्षा सूत्र होता है, जो अचूक रामबाण होता है, जिसके दम पर ही सरकारी कर्मचारी जीता मरता है और जीवन की उन कठिनाइयों से उबरता है, जो अनायास आती है या फिर निश्चित होती है अस्तु। मैं प्रॉविडेंट फंड से फंड निकलवाने के लिए कार्यालयीन कारोबार में कूद गया। उक्त फंड से फंड निकलवाने में पुनः तन, मन और धन खर्च करना पड़ा। इस मुहिम अर्थात् कार्यालयीन कार्यप्रणाली के चलते कुछ दीपावलियाँ आईं और चली गईं, अंततोगत्वा प्रॉविडेंट फंड से फंड मिल ही गया, फिर तो घर-बाहर दीवाली का मौसम न होने के बावजूद दीवाली मनाई गई। जब प्रॉविडेंट फंड से फंड हासिल हो गया तो फिर बेदाग छवि के नेता की खोज की भाँति प्लॉट की, एक अदद वैध प्लॉट की खोज प्रारंभ हुई। इस प्लॉट खोज अभियान में शनैः-शनैः इष्टमित्र, रिश्तेदार व तथाकथित शुभचिंतक शामिल होते गए, हटते गए, शामिल···। हटते···। अंतत सबके परिश्रम और मेरे प्रॉविडेंट फंड से निकाले गए फंड के एक बड़े अंश के शहीद होने के साथ ही मैं एक वैध प्लॉट का वैध मालिक बन गया। चूँकि प्रॉविडेंट फंड का बड़ा अंश प्लॉट व प्लॉट की खोज की भेंट चढ़ गया था, मकान निर्माण हेतु अतिरिक्त राशि की आवश्यकता थी, क्योंकि बची हुई राशि से या तो नींव का निर्माण हो सकता था या चारदीवारी में से एक-दो दीवारें, अस्तु एक बार फिर तन मन और धन को कष्ट देना पड़ा। इस बार तन, मन, धन को कष्ट देकर जिस लक्ष्य की प्राप्ति करनी थी, वह था अपने प्लॉट पर अपना मकान बनवाने के लिए अतिरिक्त राशि की जुगाड़ और फिर इस जुगाड़ का समापन कर्ज लेकर हुआ। धीरे-धीरे अपने प्लॉट पर अपने मकान का सरकारी फाइलों की गति सा निर्माण संपन्न हुआ। आज उसी मकान की छत को इसलिए तुड़वा रहा हूँ, ताकि वहाँ छप्पर बनवा सकूँ, क्योंकि लक्ष्मीजी के बरसने की कहावत छत फाड़कर बरसने की नहीं, छप्पर फाड़कर बरसने की जो है।

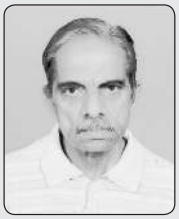

मूलतः बाल-साहित्यकार। अब तक तीन बाल-काव्य, तीन व्यंग्य तथा एक नाट्य-संग्रह के साथ-साथ पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ निरंतर प्रकाशित। छोटे-बड़े दर्जन भर पुरस्कार, अवार्ड एवं सम्मानों से अलंकृत।

लक्ष्मी उर्फ धन-दौलत बनाम रुपया-पैसा पाने के लिए लोग-बाग क्या-क्या करते हैं और क्या-क्या नहीं करते, ऐसे में मैं तो सात्त्विक व परंपरा अनुसार लक्ष्मी एकत्र करने की कोशिश कर रहा था। लक्ष्मी के छप्पर फाड़कर बरसने के अलावा जो मैंने उनके बायोडाटा कलेक्ट किए हैं, उनसे ज्ञात हुआ है कि उनकी 'सीट' कमल है और कमल कीचड़ में खिलता है। कमल के विषय में मैंने यह भी जाना है कि कुछेक विशेष अवसरों पर वह बहुमूल्य हो जाता है, कीमती हो जाता है। वैसे तो लक्ष्मीजी सर्वज्ञ हैं, फिर भी मैं उन्हें बता दूँ कि जो प्लॉट मैंने मकान बनवाने हेतु क्रय किया था तथा जिस पर आज छतवाला मकान है, जिसकी छत तुड़वाकर वहाँ छप्पर बनवा रहा हूँ, वह प्लॉट कभी कीचड़ युक्त तालाब था और कभी-कभी भूले-भटके वहाँ 'कमल' खिल जाया करते थे।

जैसे कि मैं सात्त्विक ढंग से लक्ष्मी को प्राप्त करने की कोशिश में था और धन की देवी के विषय में अपना सामान्य ज्ञान भी बढ़ा रहा था। अभी-अभी मुझे ज्ञात हुआ है कि लक्ष्मीजी का वाहन अर्थात् लक्ष्मीजी की सवारी जिस पर सवार हो वे एक छप्पर से दूसरे छप्पर की सैर करती रहती हैं, वह है 'उल्लू', तो लक्ष्मीजी को मैं बताना चाहूँगा कि 'उल्लू' के मामले में मैं उल्लू से भी एक कदम आगे हूँ, अर्थात् निरा उल्लू हूँ।

साहित्यकार, साहित्यिक पुरस्कार प्रदाता, साहित्य के मठाधीश मेरे साहित्यिक अवदान, नाम आदि से परिचित होने के बावजूद मुझे पुरस्कार देने के विषय में उल्लू बनाते रहते हैं। मेरे अपने इस नए मकान के इर्द-गिर्द दिन में और रात में उल्लुओं का डेरा रहता है, जमघट होता है, जहाँ दिन में वे कभी-कभी और रात में हमेशा ही कारगुजारियाँ व वारदातें करते रहते हैं और मैं काठ का उल्लू सा न सिर्फ देखता रहता हूँ बल्कि मौन रहकर उनकी हौसला-अफजाई भी करता हूँ।

अंत में, जब मैं इस लेरख को इसकी नियति तक पहुँचा रहा था अर्थात् लेख-लेखन की इतिश्री कर रहा था तो एक भुक्त-भोगी तथा सदैव लक्ष्मी की चिंता में रत रहे ताजे-ताजे कंगाल हुए धनपति ने बताया कि लक्ष्मी चंचल होती है और एक जगह कभी नहीं रहती, स्विस बैंक में भी कभी वह राजा, अस्तु, इस मामले में भी मैं भाग्यशाली हूँ, क्योंकि एक अरसे से मैं रंक की कतार में ही हूँ।

चलते-चलते कभी रईस रहे सज्जन बोले, श्रीमान लक्ष्मी की एक और विशेषता है चंचल होने के अलावा, वे अँधेरे में और गुफा स्थान में निवास करना पसंद करती हैं, जैसे जमीन के अंदर, तिजोरी में, जेबों में लाकर्स में आदि-आदि, सो यह बिंदु भी मेरे पक्ष का है, क्योंकि विद्युत् विभाग और नगर निगम की संयुक्त मेहरबानियों से मेरे अपने मकान के आस-पास दूर-दूर तक विद्युत् की लाइनें तो हैं किंतु उनमें करंट नहीं है, जहाँ करंट है वहाँ बल्ब, ट्यूब लाइट, वेपर लैंप वगैरह-वगैरह नहीं हैं, इसलिए सारा क्षेत्र और मकान घुप्प अँधेरे में डूबा रहता है तथा तिजोरियाँ, जो मैंने इस आशा और विश्वास में बनवाई हैं कि वे भविष्य में धन-दौलत से लबालब रहेंगी, आयकर वालों की विशेष मेहरबानियों से एकदम खाली हैं। जहाँ वर्तमान में मकड़ियों ने अपने अवैध मकान बना रखे हैं।

अतएव हे लक्ष्मी माँ! सारी स्थितियाँ आपके अनुकूल हैं तथा छप्पर जो छत तुड़वाकर बनवा रहा हूँ, वह असली की छायाप्रति है, जिसे ब्रेक करने में आपको कोई मशक्कत नहीं करनी पड़ेगी। इस वास्ते आप बिना ब्रेक के बरस जाइए, मेरा कल्याण होगा।

१६७, ग्रेटर वैशाली,
इंदौर (म.प्र.)
दूरभाष : ९४०७५१५१७४

लेखकों से अनुरोध

- मौलिक तथा अप्रकाशित-अप्रसारित रचनाएँ ही भेजें।
- रचना फुलस्केप कागज पर साफ लिखी हुई अथवा शुद्ध टंकित की हुई मूल प्रति भेजें।
- पूर्व स्वीकृति बिना लंबी रचना न भेजें।
- केवल साहित्यिक रचनाएँ ही भेजें।
- प्रत्येक रचना पर शीर्षक, लेखक का नाम, पता एवं दूरभाष संख्या अवश्य लिखें; साथ ही लेखक परिचय एवं फोटो भी भेजें।
- डाक टिकट लगा लिफाफा साथ होने पर ही अस्वीकृत रचनाएँ वापस भेजी जा सकती हैं। अतः रचना की एक प्रति अपने पास अवश्य रखें।
- किसी अवसर विशेष पर आधारित आलेख को कृपया उस अवसर से कम-से-कम तीन माह पूर्व भेजें, ताकि समय रहते उसे प्रकाशन-योजना में शामिल किया जा सके।
- रचना भेजने के बाद कृपया दूरभाष द्वारा जानकारी न लें। रचनाओं का प्रकाशन योजना एवं व्यवस्था के अनुसार यथा समय होगा।

ललित निबंध

त्योहारों की परिधि में लोक-संस्कृति की ज्योति

• नलिनी श्रीवास्तव

मानव जीवन में सबसे विशिष्ट और तेज गति से खत्म होती चीज है वक्त। कब वर्तमान अतीत के झरोखे में चला जाता है, पता ही नहीं चलता। आधुनिकता के सैलाब में बहते हुए चिरपुरातन संस्कृति की यादें त्योहारों के माध्यम से ताजा हो जाती हैं। यही कारण है कि हमारी संस्कृति चिरपुरातन होकर भी चिरनवीन बनी हुई है।

भारतीय संस्कृति धर्म, वेद, पुराणों के बीच घिरी हुई है। इतना ही नहीं, भारतीय संस्कृति रूपी वृक्ष में त्योहार, उत्सव, मंगल रूपी फूलों से उसका सौरभ सदा संपन्न रहा है। त्योहारों का महत्त्व सिर्फ धार्मिक ही नहीं, ऐतिहासिक, सामाजिक, राजनीति एवं विज्ञान के आदर्शों को भी स्पष्ट रूप से प्रगट करता है। हिंदुस्तान सिर्फ धन-धान्य से ही श्रीसंपन्न नहीं था, बल्कि शूरवीर योद्धाओं, वैदिक मर्यादा की परंपरा को निभाते हुए जान पर खेल जाना, मानवता और ईमानदारी के बेमिसाल उदाहरणों से भरा पड़ा है।

त्योहार मनाने के पीछे एकता, सहयोग, आदर्श, बंधुत्व की भावना अंतर्निहित होती है। हर त्योहार के पीछे कोई-न-कोई कहानी विशेष रूप से जुड़ी रहती है, जिसमें कभी देवी की शक्ति महिमा की स्तुति, कभी मर्यादा की दृढ़ता पर एकता का विश्वास, कर्तव्य की पराकाष्ठा, असत्य पर सत्य की विजय, बुराई पर भलाई की जीत, अहं पर सरल निश्छल हृदय के टक्कर की कहानी दुहराई जाती है। कुछ सामाजिक रीति-रिवाज और परंपराएँ भी सहयोग की भावना पर आधारित रहती हैं। प्रत्येक त्योहार के पीछे कोई-न-कोई मानवीय कल्याण आदर्श व शिक्षा का भाव विशेष रूप से अंतर्निहित होता है। उसमें मनोरंजन के विशुद्ध उल्लास का आनंद भी समाया रहता है। त्योहार के समय स्फूर्ति, जागरूकता, साफ-सफाई, सजावट के अलावा विभिन्न सुस्वादिष्ट भोज्य पदार्थ के साथ मिष्टान्नों के बनाने की भी अपनी एक परंपरा आज भी भारतीयों में प्रत्यक्ष दिखाई देती है।

सावन के आते ही वर्षा की रिमझिम फुहारों से वसुंधरा पुलकित होने लगती है। इधर त्योहारों का सिलसिल शुरू हो जाता है। वर्षा की बूँदाबाँदी में सभी भगवान् जगन्नाथजी की 'रथयात्रा' के उत्सव में शामिल होकर आनंदित होते हैं।

त्योहारों की शृंखला में रथयात्रा का एक विशेष महत्त्व है। वर्ष के आरंभ में आदिशक्ति की आराधना कर नवरात्रि का उत्सव मनाया जाता है। ग्रीष्म की प्रचंड ताप में झुलसती धरती में आषाढ़ की रिमझिम फुहार किसानों के हृदय में आशा की एक नई किरण उत्साह और उमंग का संचार करती है। रथयात्रा एक धार्मिक उत्सव है, जो प्रत्येक गाँव, शहर और नगर में उल्लास के साथ मनाया जाता है। जगन्नाथपुरी का तो यह मुख्य उत्सव है। ज्येष्ठ की पूर्णिमा को जगन्नाथजी, बलभद्र तथा सुभद्राजी को स्नानवेदी पर अक्षयवट के पवित्र कुश से दोपहर में स्नान कराया जाता है। फिर वस्त्र एवं आभूषण से सुसज्जित कर पंद्रह दिनों तक अंदर मंदिर में रखते हैं। आषाढ़ शुक्ल द्वितीया को भी जगन्नाथजी, बलभद्र और सुभद्राजी को बड़े समारोह के साथ रथ में बैठाकर नगर भ्रमण कराते हुए गुंडिचा मंदिर ले जाते हैं। बड़े, बूढ़े, बच्चे सभी पुण्य लाभ के भाव से श्रद्धा और भक्ति से रथ को खींचते हैं। उत्साह और उल्लास के साथ भगवान् जगन्नाथ का दर्शन कर आनंदित होते हैं। गजामूँग का प्रसाद दिया जाता है। जगन्नाथ स्वामी के प्रसाद का विशेष महत्त्व है। इसका अनादर न करते हुए भक्ति भाव से ग्रहण किया जाता है। वहाँ सात दिन रहकर भगवान् जगन्नाथ फिर वापस अपने सिंहासन पर विराजते हैं। कहा जाता है कि भगवान् की लीला इस संसार में लोगों को धर्म के प्रति आस्था एवं अपने कर्तव्य-बोध की याद दिलाती है। बंधुत्व भाव से मिल-जुलकर आनंदित होना चाहते हैं, प्रसन्न होना चाहते हैं। गजामूँग एक माध्यम है, उसके सहारे जिनके किसी भी प्रकार के खून के रिश्ते में कमी है तो उसकी पूर्ति करने के लिए बड़ी बेसब्री से रथयात्रा उत्सव का लोग रास्ता देखते रहते हैं। जब रथयात्रा उत्सव का दिन आ जाता है, तब हर व्यक्ति जिसे अपनी भाई की चाहत हो या किसी बहन की चाहत हो तो एक-दूसरे को गजामूँग देकर उस रिश्ता को एक नाम दे देते हैं। फिर भाई-भाई, बहन-बहन उस रिश्ते की पवित्रता को जीवनपर्यंत प्राणपण से निभाते चले आते हैं। यह हमारी भारतीय संस्कृति में त्योहारों के माध्यम से एक विशिष्ट अवदान है, जो अन्य किसी देश में नहीं पाया जाता है।

गजामूँग से बने भाई-बहन का परिवार सगे रिश्तों से भी बढ़कर स्नेहिल व आदरणीय माने जाते हैं। यह हमारी भारतीय संस्कृति की अमूल्य धरोहर है।

हरेली के त्योहार में 'गेड़ी' की हलचल गाँव में ही दिखाई देती है। लेकिन गेड़ी चलाना भी एक कला है। गाँवों के घरों में बाँस की कमी नहीं रहती है। बच्चों को खेलने के लिए उनके खुशी के लिए मिनटों में

सुपरिचित कथाकार। 'एक टुकड़ा सच', 'कैक्टस की चुभन' (कहानी-संग्रह); 'बख्शी जी—मेरे दादाजी' (संस्मरणात्मक निबंध-संग्रह) एवं कहानियाँ तथा लेख प्रकाशित। 'समाजरत्न पतिराम साव सम्मान', 'वसुंधरा कला सृजन सम्मान', 'अ.भा. मुंशी प्रेमचंद सम्मान' एवं अन्य सम्मान।

बढ़ई दादा, बढ़ई चाचा गेड़ी बनाकर दे देते हैं। गेड़ी चलाते हुए बच्चों को मानसिक संतुलन बनाए रखने का प्रयास करना पड़ता है। तभी गेड़ी में सवार गिरता नहीं है। यही संतुलन आगे चलकर जीवन में संयम और बड़ों की मर्यादा का आदर करना सिखाता है। त्योहारों का सिलसिला बढ़ते-बढ़ते पूर्णिमा के दिन रक्षाबंधन का त्योहार मनाया जाता है। यह भाई-बहन का स्नेह का पवित्र बंधन है। दूसरे दिन भोजली का त्योहार मनाया जाता है। यह भी लोक-संस्कृति का विशिष्ट पर्व है। मुझे याद आ रहा है सन् १९५४-५५ की बात है, जब खैरागढ़ राज में भोजली का त्योहार बड़ी धूमधाम से मनाया जाता था। खैरागढ़ की सबसे बड़ी विशेषता है कि वहाँ गाँवों की सरलता एवं शहरों की समस्त सुविधाएँ सहजता से देखने को मिलती हैं।

रक्षाबंधन के एक सप्ताह पहले ही नवमी के दिन प्रत्येक घर में अँधेरे कमरे में भोजली को अधिष्ठात्री देवी की प्रतीक प्रतिदिन सुबह पत्ते के दोने में मिट्टी और गेहूँ के दाने डालकर भोजली देवी की पूजा की जाती है। प्रतिदिन उसमें पानी डालना एक पूजा की भाँति अनिवार्य कार्य होता है। राखी के दूसरे दिन भोजली की पूजा की जाती है। फिर विसर्जन करने के लिए सभी कुँवारी कन्याएँ भोजली को घर से बाहर निकालती हैं। जिसकी भोजली पीले रंग की दिखाई देती है, उसे देवी की कृपा मानकर लोग प्रसन्न होते हैं। खैरागढ़ के राजमहल में यह एक परंपरा है कि बस्ती के सभी घरों के लोग भोजली को लेकर एक जुलूस के रूप में राजमहल में पहुँचते। वहाँ सर्वश्रेष्ठ भोजली को पुरस्कृत भी किया जाता था। फिर सभी अपने भोजली को लिये नदी की ओर जाते और वहाँ भोजली की पूजा कर नारियल फोड़ते और मिट्टी तथा दोने को नदी में बहा देते थे। भोजली को लेकर घर आ जाते थे। गाँवों में आज भी यह प्रथा है। अपनी सखी-सहेलियों को दो-चार भोजली देकर भोजली बदलने का प्रयास अभी भी कायम है। सीता-राम भोजली कहकर एक-दूसरे की अंतरंग सहेली बन जाती हैं।

यह स्नेह का बंधन अटूट होता है। फिर आदर की भावना से प्रेरित हो अपनी सहेली का नाम नहीं लेते हैं। उससे भोजली कहकर ही बातें करते हैं। इस प्रकार भोजली के त्योहार के माध्यम से गाँव में आपस में मैत्री भाव का एक अति सुंदर रूप देखने को मिलता है। हमारे छत्तीसगढ़ राज्य की यह एक प्राचीन किंवदंती है कि भोजली देवी की पूजा करने से अकाल व सूखाग्रस्त इलाका न बने, इसलिए नौ दिन तक सूर्य की पूजा करते हुए गेहूँ के दाने अँधेरे में उगाए जाते हैं। उसे ही भोजली कहा जाता है। अपने पीले रंग के सौंदर्य से यह सबका मन मोह लेती है। पीला रंग सदैव से ही शुभ कार्य के लिए अति उत्तम माना जाता है। भोजली की सुंदरता से सभी गाँव के बड़े-बूढ़े इसे सूर्य की कृपा मान यह सोचने लगते हैं कि निश्चित ही धन-धान्य की वृद्धि होगी। इस प्रकार सभी भोजली को देख आनंदित होते हैं। इसी प्रकार छत्तीसगढ़ में वर्षा के मेघ को देखकर 'मघा परमेश्वरी' के नाम से पूजा की जाती है। ऐसी कितनी ही कथाएँ और कितने ही त्योहारों का सिलसिला वर्षभर चलता रहता है।

बसंत पंचमी मे सरस्वती की आराधना की जाती है। प्रकृति अपने पूर्ण यौवन में रंग-बिरंगे फूलों की सुंदरता से समस्त जनमानस के मन को मोह लेती है। फलों के राजा आम में बौर वसंत पंचमी के समय अपनी पूर्ण मादकता के साथ खिलने लगता है। होली रंगों का निराला त्योहार है, सभी अपने मन की कटुता-बैर के बदरंग को भूलकर रंग-बिरंगे प्रेम के रंग में डूब जाना चाहते हैं। तभी तो यह कहा जाता है कि 'ब्रज के कान्हा गाँव की गोरी, रंग बरसाती देखी होली'।

कोई भी त्योहार (हम) रोजमर्रा की जिंदगी से हटकर पूजा-अर्चना और बंधुत्व भाव से प्रेरित होकर मनाते आ रहे हैं। आने-जानेवाले मेहमानों को भी अपनी कलात्मक रुचि का परिचय देने का भी यह सुनहरा अवसर होता है। इसी से गृहिणी अपने आँगन को विशेष रूप से साफ कर रंगोली बनाकर अपनी कला-सौष्ठव की कारीगरी से मेहमानों को मुग्ध करने का प्रयास करती है। किसी की रंगोली सरल-सीधी बेल पर ही आधारित रहती है। किसी की रंगोली बड़ी, पर रंगों के समायोजन से उसमें चार चाँद लग जाते हैं। इसमें गृहिणी के मन के भावों का भी सुंदर समन्वय देखने को मिलता है। घर के अंदर की भी साज-सजावट गृहिणी के स्वभाव के अनुरूप ही दिखाई देती है। उसकी सुघड़ता, संपन्नता का परिचय हमें उसके ड्राईंग-रूम में पहुँचते ही अनायास मिल जाता है। कहीं गुलदस्ते में रजनीगंधा के फूल लगे रहते हैं तो किसी के गुलदस्ते में गुलाब, मोंगरे, हिना एक साथ अपनी मोहक सुरभि से कमरे की सुंदरता को द्विगुणित करते हैं। इस प्रकार हँसी-खुशी और उल्लासमय वातावरण में त्योहार मनाने की परंपरा हर भारतीय घरों में पाई जाती है। त्योहार के आगमन से पूर्व ही तैयारियाँ शुरू हो जाती हैं और उनकी त्योहारों की उमंग भरी भावनाओं का जल्द ही पुनरागमन हो, इसी आशा को प्रगट करते हुए परिवार के समस्त सदस्यों द्वारा त्योहारों का समापन होता है।

ये त्योहार हमारे जीवन में खुशी का संचार करने का काम करते हैं। यही कारण है कि छत्तीसगढ़ के लोगों के स्वभाव में आज भी वह भोलापन एवं निष्कपट भाव का सागर लहराता रहता है। 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना यहाँ के जनमानस का तो कंठहार ही है। इन्हीं उदार गुणों के कारण आज छत्तीसगढ़ राज्य में प्राय: सभी राज्य के व्यक्ति रोजी-रोटी के लिए आते हैं और यहीं के होकर रह जाते हैं। यह हमारे छत्तीसगढ़ राज्य की सबसे बड़ी विशेषता है।

शिवायन
क्वार्टर. नं. ३-बी, स्ट्रीट नं.-३३,
सेक्टर-१, भिलाई-४९०००१
दूरभाष : ९७५२६०६०३६

बाल-कहानी

कलियुग के चूहे

● मंजुरानी जैन

दीपावली के दस दिन पहले ही त्योहार की रौनक घर के चप्पे-चप्पे पर छा गई थी। पिंकू, अंशु, मनु, नन्नू और मिनी सभी छुट्टी मनाने दिल्ली आ जाते थे। वहीं आता था दीवाली का असली मजा। उनमें से सबसे भाग्यशाली बस नन्नू ही था, जो सदा बाबूजी के लाड़-दुलार में रहता था। मिनी उसकी बड़ी बहन थी। पिंकू, अंशु और मनु, मामा के लड़के थे। ये सब अपने बड़े घर आकर सारा-का-सारा बदला साल में एक बार उतार लेना चाहते थे। जबसे सब मिले थे, उनमें कानाफूसी चल रही थी। रास्ते की थकान क्या उतरी, सब दिमाग और शरीर से चेतन हो गए थे। अगले दिन सब बाबूजी के सामने आकर खड़े हो गए।

बाबूजी अखबार पढ़ने में मशगूल थे। उन्हें अपने चारों तरफ कुछ खलबली का-सा माहौल महसूस हुआ तो उन्होंने अपने चश्मे के भीतर से निगाहें ऊपर कीं, फिर भौंहों के जरिए प्रश्न की मुद्रा में उनकी ओर ताका। बच्चे एक-दूसरे को कोहनी मारने लगे। बाबूजी मुसकराए। अब उन्हें अपना मुँह खोलना ही पड़ा, बाले, ''बच्चो, क्या बात है? क्या पहली बार मुझसे मिल रहे हो?''

''हें···हें···हें···!'' पिंकू और मनु की मिली-जुली हँसी उनके कानों में पड़ी।

''हें···हें···हें! यह क्या बात है? बोलना नहीं जानते क्या तुम लोग? भई, मैं कह रहा हूँ, कुछ तो बोला।''

इस बार अंशु ने हिम्मत की। बोला, ''बाबूजी, वो···हम जानना चाहते थे···कि आप बाजार कब ज···जाएँगे?''

''क्यों, क्या मँगाना है तुम्हें?''

मनु जल्दी से बोला, ''आपको तो जैसे याद ही नहीं है। हर दीवाली पर आप कुछ-न-कुछ लाते हैं न हमारे लिए।''

इससे पहले कि वह कुछ और बोलता, बाबूजी ने उसे झिड़की दी, ''और तुम्हें भी जैसे पता नहीं है कि वह काम मैं धनतेरस के दिन करता हूँ। पर इस बार मेरे पास पैसे जरा कम हैं, इसलिए सोचना पड़ेगा कि उसमें क्या लाऊँ। खैर, वह सब मैं बाद में ही देखूँगा।''

उनकी नजर चार साल के नन्नू पर पड़ी। वह गाल फुलाए उन्हीं की तरफ देख रहा था। उसके गाल पर हल्की-सी थपकी देकर बोले, ''जाओ, बेटा, बाहर खेलो!''

बाबूजी से बच्चों को यह उम्मीद नहीं थी कि वे पैसे कम होने की बात करेंगे, वे सब निराश मुद्रा में बाहर आ गए। बाहर जाकर वे सब एक कोने में सिमट गए। तय हुआ कि दोपहर को जब घर के सब बड़े सो जाएँगे तो वे पाँचों दुछत्ती में अपनी मीटिंग करेंगे।

सुपरिचित रचनाकार। पत्र-पत्रिकाओं में कहानियाँ प्रकाशित एवं दिल्ली पाठ्यक्रम के रैपिड रीडर में सम्मिलित। संप्रति कई वर्षों तक मुंबई विश्वविद्यालय में चीफ लाइब्रेरियन के पद पर कार्य।

दोपहर को सब खाना खाकर लेट गए। फिर जब अपने तय किए गए स्थान पर एकत्र होने के लिए ऊपर चढ़े तो धक से रह गए। बाबूजी वहाँ एक कुरसी पर बैठे और दूसरी कुरसी पर पाँव रखे आराम फरमा रहे थे। वे सब एक-दूसरे की तरफ देख ही रहे थे कि नीचे से डाकिये की आवाज सुनाई दी। बाबूजी तुरंत चेतन होकर नीचे की ओर दौड़े। बच्चों ने मौके का फायदा उठाया और जम गए वहीं। मिनी जाकर नीचे देख आई। बाबूजी अपने कमरे में बैठे किसी पत्र को पढ़ने में व्यस्त हो गए थे। सबको तसल्ली हो गई कि वह अब ऊपर नहीं आएँगे।

मीटिंग शुरू हुई, पिंकू सबका लीडर था। उसे नन्नू से ही सबसे ज्यादा खतरा था। एक चॉकलेट उसे दुश्मन का मुखबिर बना सकती थी। उसे खड़ा किया गया और 'माँ कसम' दिलाई गई कि मीटिंग में हुई कोई भी बात वह घर में किसी को नहीं बताएगा। उसने अपना गला पकड़कर कसम खाई। पिंकू ने शंका जाहिर करते हुए कहा, ''देखो, बाबूजी आज बाजार जाएँगे। वह हमारे लिए क्या-क्या चीजें लाएँगे, इसका पता कैसे चले?''

''बात यह है कि हम सब मिलकर भी आज तक कभी धनतेरस के पहले यह पता नहीं लगा पाए कि बाबूजी हमें देंगे क्या, जबकि वह एक हैं और हम पाँच! इस बार हम पता लगाकर ही रहेंगे।'' पिंकू ने लीडरों के अंदाज में हाथ ऊपर उठाते हुए कहा।

''पर भैया, यह सब होगा कैसे?'' मिनी ने पूछा।

''यह काम हमारा छोटा सिपाही करेगा।'' पिंकू ने उत्तर दिया। नन्नू आँखें फाड़-फाड़कर सब देख-सुन रहा था। उसे नींद आ रही थी, मगर जब सब की दृष्टि उस पर पड़ी तो वह चौकन्ना हो गया।

''क्या है?'' उसने टेढ़ी नजर उन सब पर डालकर पूछा, तो सब हँस पड़े। उसकी सूरत रोनियाई-सी हो गई। मिनी ने मौके की नजाकत को समझकर उसे अपनी गोदी में बैठाकर पूछा, ''जो हम कहेंगे, वह करेगा, छोटा भैया?''

नन्नू दीदी के गले लग गया। उसने लाड़ भरे स्वर में अपनी शर्त रखी, ''आप सब मेरे साथ क्रिकेट खेलोगे?''

''ओ···हो···यार, बड़ा बोर है यह तो!'' मनु बोला।

''चुप मनु, हम खेलेंगे इसके साथ! चलो भैया, बताओ क्या करना होगा?'' अंशु ने मनु को डाँटा और पिंकू से सवाल भी किया।

इस बार पिंकू ने उसे पास बुलाया और उसके गले में हाथ डालकर बोला, ''देख, बाबूजी आज बाजार जाएँगे तो तुझे भी जाना है उनके साथ। ध्यान से देखना, वह हमारे लिए क्या-क्या खरीदेंगे। हम सब तेरे साथ क्रिकट खेलेंगे।''

नन्नू ने भोली-सी 'हाँ' में गरदन हिला दी। इसके साथ ही मीटिंग बरखास्त हो गई।

शाम को बाबूजी जैसे ही बाजार जाने के लिए तैयार हुए, नन्नू उनके साथ चलने को मचल उठा। उन्होंने बहुत समझाया। जब वह नहीं माना, तो उन्होंने वादा किया कि वह उसके लिए चॉकलेट लाएँगे। इस बार नन्नू के मुँह में पानी आ गया। पर नजर जब कमरे के पिछले दरवाजे की ओर गई तो पाया कि दो जोड़ी आँखें उसे घूर रही थीं। वह सँभलकर फिर जिद पर अड़ गया। खैर, मजबूरन दादाजी को उसे लेकर ही निकलना पड़ा।

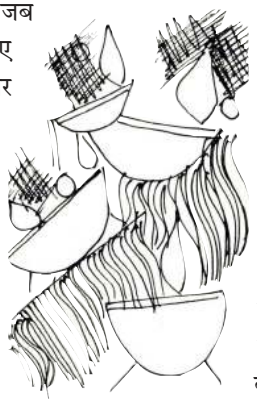

उनके निकलते ही बच्चा-पार्टी में खुशी की लहर दौड़ गई। वे सब उछल रहे थे। मिनी बोली, ''देखा, कितना पक्का है मेरा छोटा भैया!''

''हाँ भई, मान गया।'' मनु ने ताली बजाकर सहमति प्रकट की। फिर खेलने के लिए जैसे ही बाहर जाने लगे, उन्हें कुछ दूरी से नन्नू आता दिखाई दिया। वे सब वहीं खड़े रह गए। फिर उनकी नजर उस चॉकलेट पर गई, जो वह बड़ी लगन से खाने में मस्त था। पिंकू ने अपना माथा पीट लिया।

जब वे सब अगली बैठक की योजना बना ही रहे थे कि बाबूजी भी वहाँ आ धमक। वे सब एक-दूसरे का मुँह ताकने लगे। कुछ सामान जो बाबूजी बाजार से लाये थे, वह बहू के हाथ में थमाया और अंदर कमरे में चले गए। बाबूजी को इस समय चुप देखकर बच्चे आशंकित हो उठे कि दोपहर की उनकी सारी बातें कहीं उन्होंने सुन तो नहीं ली थीं। वे चुपचाप बाहर की ओर खिसक लिये।

कुछ समय बाद जब खाना वगैरह निपट गया, तो बाबूजी ने उन सबको अपने कमरे में आने को कहा। सब डरते-डरते उनके कमरे में पहुँचे। बाबूजी ने बड़े प्यार से पिंकू के गले में हाथ डालते हुए कहा, ''परसों के दिन तुम सब जल्दी उठ जाना। ठीक आठ बजे मैटाडोर दरवाजे पर आ जाएगी। अप्पू-घर देख आना सब जाकर, बड़ी बढ़िया जगह है।''

सबने राहत की साँस ली। वे खूब प्रसन्न थे। अब वे इस उधेड़बुन में लग गए कि पिकनिक पर क्या-क्या ले जाना है, कौन-कौन से झूलों में बैठना है आदि-आदि। अगले दिन बच्चे सुबह आठ बजे उठे। मुँह-हाथ धोकर कपड़े बदले और मैटाडोर के लिए इंतजार करने लगे। मैटाडोर ठीक साढ़े-आठ बजे घर के सामने आकर खड़ी हो गई।

पूरा दिन मस्ती में गुजरा। शाम को जब वे लौट रहे थे तो अचानक फिर याद आया कि दीवाली करीब आ रही है। उनमें इस बात को लेकर फिर खलबली मच गई। बाबूजी की अनुपस्थिति में मैटाडोर में अपने उपहारों के विषय में बात करने की पूरी आजादी थी। बात का जो सार निकला वह यह था कि बाबूजी तोहफे तो जरूर लाए होंगे।

पिंकू बोला, ''ऐसा नहीं हो सकता कि बाबूजी हमारे लिए कुछ न लाए हों। वह कह रहे थे कि उनके पास इस बार पैसे कम हैं। पर चाहे छोटी-मोटी चीजें लाएँ, खरीदे बिना उन्हें चैन भी तो नहीं पड़ेगा।''

''पर हम तो घर पर ही थे, हमें तो वे कभी कुछ लाते दिखाई नहीं दिए।''

''अरे, पिछली बार भी तो तुम घर पर ही थे···तब क्या तुम्हें पता चल पाया था, बताओ?''

मन्नू बीच में कूद पड़ा, बोला, ''वह जो यह कह रहे थे कि पैसे कम हैं, कहीं हमें इस बार इस पिकनिक पर भेजने का तोहफा तो नहीं दे रहे!''

''अरे यार, क्या तुक्का मारा है तूने। हो सकता है, यही सच हो!'' पिंकू ने भी यही आशंका जताई।

मिनी बोली, ''अब उनके पास पैसे नहीं होंगे तो कहाँ से लाएँगे? कोई बात नहीं, इस बार की दीवाली ऐसी ही सही। पर तोहफे का इंतजार करना हमारा हक है। वो तो हम अपना काम करते रहेंगे। क्या पता, बाबूजी का क्या प्लान है इस बार!''

उन सब बातों से बेखबर नन्नू 'अम्मा देख, ओ देख, तेरा मुन्ना बिगड़ा जाए···!' गाना सुनने में मस्त था और गाने की ताल के साथ बराबर हिल भी रहा था। मनु ने उसके सिर पर चपती मार कर कहा, ''अबे चुप रहो, यार!''

''पंद्रह मिनट में घर आनेवाला है। मेरी बात ध्यान से सुन, रात को तू बाबूजी के पास सोएगा, मम्मी के पास नहीं।'' मिनी ने नन्नू को फिर पट्टी पढ़ाने की कोशिश की।

''क्यों?'' नन्नू ने पूछा।

''अरे पगले, अच्छा बता, तुझे यह पता नहीं करना कि बाबूजी तेरे लिए क्या लाए होंगे, हैं?'' मिनी ने उसके दिमाग की खिड़की खोलते हुए कहा।

नन्नू थोड़ा-सा उत्सुक दिखाई दिया। उसने फिर अकड़कर पूछा, ''एक ऐक्लेयर दोगी मुझे?''

मनु ने तुरंत एक के बजाय दो ऐक्लेयर उसके हाथ में पकड़ा दीं और बोला, ''कल और मिलेंगी। अब तुझे यह पता लगाना है कि बाबूजी के संदूक की चाबी कहाँ रखी है, ठीक है?''

नन्नू रात को बाबूजी से लिपटकर सोया। वह खर्राटे भरने लगे, तो उसके हाथ उनकी जेब से होते हुए उनके गले तक पहुँचे। हाथ में वह चीज आ ही गई, जिसका उसे पता लगाना था। पर यह क्या? वह तो एक डोरी से बँधी उनके गले का हार बनी हुई थी! वह जल्दी से उठकर अपने लीडर के पास भागा-भागा गया। उसे स्थिति की जानकारी दी।

मनु ने पलंग से छलाँग लगाई और अपने ज्यामेट्री-बॉक्स में से

एक छोटी-सी कैंची निकाल लाया। फिर उसे नन्नू के हाथ में देता हुआ बोला, ''ले, डोरी काटकर चाबी निकाल ला!''

''अबे चुप! जूते पड़वाएगा नन्नू पर! पकड़ा गया तो सब उगल देगा। हम सबको लेने-के-देने पड़ जाएँगे।'' अंशु ने उसे झिड़का। उसने नन्नू को सलाह दी कि वह उस चाबी को तब तक उनके गले में इधर-उधर चुभाता रहे, जब तक वह परेशान न हो जाएँ।

नन्नू बिगड़ गया। वह बोला, ''नहीं, बाबूजी को दुखेगी। मैं नहीं करूँगा।''

जब उसे हल्के-हल्के चुभाने की सलाह दी तो यह बात नन्नू की समझ में आ गई। उसने ऐसे ही किया। बाबूजी गहरी नींद में थे, खर्राटे भी ले रहे थे। उसने वैसा ही किया, जैसा उसे बताया गया था। बाबूजी ने तंग आकर गले से डोरी निकाली और अपने तकिये के नीचे रख दी। अब उसे संतोष हो गया था, वह भी सो गया।

अगले दिन वादे के अनुसार उसे और चॉकलेट मिलीं। सबने उसको शाबाशी दी और प्यार दिया तो उसका हौसला दुगना हो गया। अगले दिन बाबूजी ने सोते समय चाबा तकिये के नीचे रख दी। कुछ देर बाद नन्नू ने धीरे से वहाँ से चाबा को आजाद किया और हौले से जाकर सबको बुला लाया। संदूक भी आहिस्ता से ही खोला गया। सबने उसमें झाँका। कुछ खास नजर नहीं आया। हाँ, छोटी-छोटी सी थैलियाँ उसमें जरूर रखी थीं।

उन्होंने उनमें से दो-तीन थैलियाँ निकालीं और जल्दी से अपने कमरे की राह ली।

''यार, लगता है, इस बार बाबूजी हमें कुछ सोना-चाँदी भेंट करनेवाले हैं।'' अंशु ने फुलझड़ी छोड़ी।

''चुप कर यार, मरवाएगा तू! और कुछ नहीं।'' पिंकू ने उसे डाँटते हुए कहा।

अपने कमरे में आकर जब उन्होंने थैलियाँ खोलीं, तो देखा कि उनमें सूखे मेवे भरे हुए थे। तो इस बार क्या बाबूजी उनके लिए ये सूखे मेवे ही लाए हैं? आधी रात का समय था। सबको भूख लग रही थी, सो उन्हें कुछ थैलियाँ हल्की करनी पड़ीं। बचे हुए सामान को वापस उसी जगह रखकर आने का काम मिनी और मनु को सौंपा गया। मिनी और मनु ने थैलियाँ धीरे से संदूक में रखते समय कुछ मेवे उनमें से और निकाले। जल्दी से संदूक में ताला लगाया गया। आँख फाड़े नन्नू सब देख रहा था। चाबी हौले से भयभीत नन्नू के हवाले की गई।

अगले दिन जब बाबूजी घूमकर लौटे तो अपने कमरे के दरवाजे में उन्होंने जैसे ही पाँव रखा तो अपने पाँव के नीचे उन्हें कुछ कड़कने की आवाज सुनाई दी। पाँव उठाया तो देखा एक काजू धराशायी अवस्था में जमीन पर पड़ा था। उनकी नजरें तुरंत संदूक की ओर गईं, पर वह तो बंद था। उन्होंने तकिए के नीचे से चाबी निकाली। संदूक खोलकर देखा, तो पाया कि मेवे की थैलियाँ खुली पड़ी थीं।

थैलियाँ लेकर वह रसोईघर की तरफ गए और उन्हें बहू के हवाले करते हुए बोले, ''ये कुछ सूखे मेवे लाया था। सोचा था, दीवाली पर काम आ जाएँगे। पर ये कलियुग के चूहे भी ऐसे शातिर हैं, ताला लगे संदूक में भी घुसकर आधा माल चट कर गए।''

बच्चे बैठे दूध पी रहे थे। सबकी नजरें एक-दूसरे से मिलीं। वे घड़ मार गए। अब उन्हें यकीन हो गया था कि बाबूजी के पास इस बार सचमुच पैसे नहीं थे।

धनतेरस के दिन बाबूजी ने बच्चों को इकट्ठा किया और उन्हें छत पर ले गए। उन्होंने उस कमरे का ताला खोला, जिसमें आड़-कबाड़ भरा रहता था। दरवाजा खुलते ही सबकी आँखें चुँधिया गईं। सामने एक चमचमाती साइकिल खड़ी थी।

अंशु उछल पड़ा। उसने बाबूजी को कसकर अपनी बाँहों में भर लिया। पिंकू बॉस्केट बॉल का बड़ा शौकीन था। बाबूजी उसके लिए पूरा सैट ही ले आए थे, मनु के लिए बैडमिंटन रैकेट्स, नन्नू के लिए चलता-फिरता रोबोट और मिनी के लिए थी एक सुंदर-सी घड़ी।

अपनी मनपसंद चीजें पाकर सब बड़े खुश थे। दु:ख था तो केवल इस बात का कि पिकनिक पर भेजकर बाबूजी ने उन्हें बुद्धू सिद्ध कर दिया था। उनका खुफिया विभाग इतनी योजनाएँ अमल में लाकर भी केवल चूहों का विभाग बनकर रह गया था। साअ

१०, नरूला बिल्डिंग, पहला माला, २१वीं रोड,
चेंबूर, मुंबई-४०००७१
दूरभाष : ९८६९६८६४३०

दोहा

दीपावली

● अविनाश ब्यौहार

दीपक तम से जूझता, रहा प्रकाश बिखेर।
प्रजातंत्र फूले-फले, कभी न हो अंधेर॥

तोरण सजते द्वार पर, मन में होता तोष।
खुशियों के क्षण आ गए, चल पैदल कई कोस॥

कोठी में झालर लगी, जलती-बुझती आज।
दौड़-दौड़ वधुएँ करें, घर के सारे काज॥

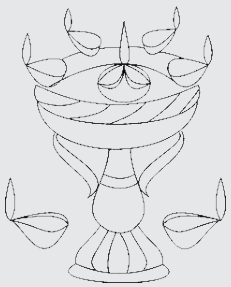

दीवाली में फूलते, हरसिंगार के फूल।
किरणों का झूला पड़ा, रमा रही हैं झूल॥

दिये खड़े हैं पंक्ति से, जैसे हो कोई फौज।
खुश हैं लाई बताशे, थाली भर है लौज॥

मना रहे त्योहार हैं, बम फुलझड़ियाँ आज।
बिखरे हुए उजास को, है दीपक पर नाज॥

साअ

रॉयल एस्टेट कॉलोनी
कटंगी रोड माढ़ोताल
जबलपुर-४८२००२
दूरभाष : ९८२६७९५३७२

जय-जय गौरी मैया

बाल-कविता

• शिवचरण चौहान

गणेश की दीवाली

दीवाली में धूम मचाए
गौरी-पुत्र गणेश;
बम-अनार, फुलझड़ियाँ लाए
गौरी-पुत्र गणेश।
पार्वती से बोले—आती
रात अमावस काली;
माँ मैं भी इस बार मनाऊँगा
घर में दीवाली।
पटाखों की लड़ियाँ लाए
गौरी-पुत्र गणेश॥

मूषक की दुम में बाँधूँगा
लड़ी पटाखों वाली;
और पीठ नंदी के बम रख
देखूँगा दीवाली।
तोंद गोद में फिरें उठाए
गौरी-पुत्र गणेश॥

अरे बाप रे! भागो-भागो
नंदी-मूषक भागे;
पीछे-पीछे हैं गणेश
दोनों हैं भागे आगे।
रुको-रुको कह दौड़ लगाए
गौरी-पुत्र गणेश॥

भाग रहे हैं नंदी-मूषक
दोनों हैं घबराए;
अरे बार रे! शिवनंदन से
कोई हमें बचाए।
शिवशंभू बैठे मुसकाएँ
गौरी-पुत्र गणेश॥

इसी बीच आ गईं वहाँ पर
प्यारी गौरी मैया;
चलो पुत्र, है देर हो रही
खड़ी लक्ष्मी मैया।
खड़े हुए हैं शीश झुकाए
गौरी-पुत्र गणेश॥

धरती पर है आज रात
होती दीवाली पूजा;
जल्दी जाओ, लक्ष्मी के संग
रुकी हुई है पूजा।
सज-धजकर हैं तिलक लगाए
गौरी-पुत्र गणेश॥

गए गणेश बैठ मूषक पर
जय-जय गौरी मैया;
जान बची, अब नाच रहे हैं
नंदी ता-ता थैया।
लीला रोज-रोज दिखलाएँ
गौरी-पुत्र गणेश॥

मूषक और गणेश

बात-बात में होड़ लगाएँ
मूषक और गणेश।
होड़ बड़ी बेजोड़ लगाएँ
मूषक और गणेश॥
बड़े-बड़े सौ लड्डू सबसे

पहले जो खाएगा।
वही विजेता होगा, हरदम
पहले वह खाएगा॥
सौ-सौ लड्डू गए मँगाए
मूषक और गणेश।
खाने को तब आगे आए
मूषक और गणेश॥
दोनों हाथों से गणेश ने
सारे लड्डू खाए।
पर मूषकजी, सौ में से
दो लड्डू कम खा पाए॥
धमाचौकड़ी खूब मचाएँ
मूषक और गणेश।
फिर खाने की होड़ लगाएँ
मूषक और गणेश॥

कटहल कद्दू और करेला

कटहल कद्दू और करेला
गए घूमने मेला।
जमकर खूब मिठाई खाई
पास न पैसा-धेला॥
पकड़ लिया तब हलवाई ने

पैसा अभी निकालो।
वरना सभी कड़ाही माँजो
और मिठाई खालो॥
है मंजूर खिलाओ पहले
हमको खूब मिठाई

कद्दू-कटहल और करेला
बोले हम हैं भाई॥
अरे बाप रे, पेटू हैं ये
मेरी शामत आई।
खा जाएँगे ये दुकान सब
केवल बचे कड़ाही॥
हाथ जोड़ हलवाई बोला
प्यारे बंधु करेला।
नहीं चाहिए पैसा-धेला
धूमो जाकर मेला॥

साअ
१०९/३२३-रामकृष्ण नगर
कानपुर-२०८०९२
दूरभाष : ६३९४२४७९५७

समर्पित मित्र

मूल : **ऑस्कर वाइल्ड**

अनुवाद : **अशोक गुजराती**

इस कहानी को कोई बाल-कथा समझकर नजरअंदाज नहीं कर सकता है। इसका एक पात्र ह्यूग हमें शेक्सपियर के 'शायलॉक' चरित्र (मर्चंट ऑफ वेनिस) की याद दिलाता है। असल में यह व्यंग्यात्मक कहानी चालाकी और सदाशयता के अंतर को रेखांकित करते हुए हमें धूर्तता ही नहीं, अति भोलेपन से भी परहेज करने का सबक देती है।

बहुत दिन हुए, हांस नाम का एक साधारण परंतु ईमानदार व्यक्ति था। वह कोई बहुत प्रसिद्ध व्यक्ति नहीं था, सिवा उसके दयालु हृदय एवं प्राय: मुसकराते विनोदी गोल चेहरे के। वह छोटे से कॉटेज में रहता था, जिसके परिसर के बाग में दिनभर काम करता रहता। उस पूरे इलाके में उसका बगीचा सबसे सुंदर था। तरह-तरह के फूल वहाँ हरदम खिले रहते थे। अलग-अलग रंग के, विभिन्न सुगंधवाले। कई-कई प्रकार के मौसम के अनुसार बदलते महीनों के संग-संग एक-दूसरे का स्थान ग्रहण करते। इसलिए वह उद्यान हमेशा खूबसूरत बना रहता, अपनी खुशबू चारों ओर बिखेरता हुआ।

उसके कई दोस्त थे, पर सबसे विश्वसनीय था चक्कीवाला ह्यूग। वह अमीर चक्कीवाला हांस के प्रति बहुत समर्पित था। इतना कि उसकी बगिया के सामने से गुजरते हुए वह सदा हांस की चारदीवारी से अंदर झाँकता जरूर था। कभी वहाँ से निकलते हुए फूलों को तोड़कर बड़ा-सा गुलदस्ता बना लेता, स्वादिष्ट सब्जियों को उखाड़ लेता या फलों के मौसम में चेरी, आलूबुखारे आदि से अपनी जेब अवश्य भर लेता।

'सच्चे मित्रों का द्वैत भाव से परे प्रत्येक वस्तु पर समान अधिकार होना चाहिए।' ह्यूग कहता रहता। हांस मुसकान के साथ गरदन हिलाता और गर्व करता कि उसका दोस्त इतने आदर्श विचारोंवाला है।

अकसर पड़ोसियों को यह विचित्र लगता कि ह्यूग प्रतिदान में कभी कुछ नहीं देता, जबकि उसकी चक्की में सौ बोरे आटे के बहुधा यों ही पड़े रहते; उसके पास छह दुधारू गाएँ थीं; ऊनी भेड़ों का बहुत बड़ा बाड़ा था। हांस इन टिप्पणियों के लिए अपने मस्तिष्क को कभी त्रास नहीं देता था। अपितु उसे ह्यूग द्वारा निस्स्वार्थ दोस्ती पर की गई चमत्कारिक उक्तियाँ सुनकर बेहद प्रसन्नता होती थी।

हांस अपने बगीचे में परिश्रम करता रहता। वसंत, ग्रीष्म और शरद ऋतु में वह बहुत सुखी रहता, लेकिन शीत काल में बाजार में बेचने के लिए उसके बाग में न फूल होते थे और न फल; तब ठंड और भूख से चिंतित वह खिन्न रहता। उस अवधि में रात में सोने से पूर्व चंद सूखे नाशपाती अथवा मूँगफली के दाने ही उसका भोजन होते। शीत में वह एकांत वास भी झेलता, क्योंकि उन दिनों ह्यूग कभी उससे मिलने नहीं आता था।

''जब तक बर्फबारी होती रहेगी, मेरा हांस को मिलने जाना उचित नहीं है,'' ह्यूग अपनी पत्नी से कहता, ''क्योंकि जब लोग मुश्किल में होते हैं, उन्हें अकेला छोड़ देना चाहिए। मिलनेवालों को उन्हें सताना नहीं चाहिए। कम-से-कम मेरी तो दोस्ती को लेकर यही सोच है और मैं सही हूँ, मुझे इस पर पूरा भरोसा है। इसलिए मैं वसंत की प्रतीक्षा करूँगा, फिर उससे मिलने जाऊँगा। तब वह मुझे बास्केट भरकर अपने सर्वोत्तम गुलाब देगा। ऐसा करना उसे बहुत खुशी देगा।''

''आप निश्चित ही दूसरों के लिए अत्यंत सहृदय रहते हैं।'' देवदार से बने विशाल हॉल में आरामकुरसी पर बैठते हुए उसकी पत्नी बोली, ''सच में बहुत गहरी दोस्ती के बारे में आपके वचन सुनना असीम अह्लादकारी होता है। मुझे विश्वास है कि फादर भी इतनी विद्वत्तापूर्ण बातें नहीं कर सकता, हालाँकि वह तीन मंजिला मकान में रहता है और अपनी छोटी उँगली में अँगूठी धारण करता है।''

''क्या हम हांस चाचा को यहाँ नहीं बुला सकते?'' ह्यूग के बड़े बेटे ने पूछा, ''यदि वे तकलीफ में हैं तो उन्हें मैं अपनी आधी रबड़ी दे सकता हूँ और अपने खरगोश दिखा सकता हूँ।''

''तुम कितने मूर्ख लड़के हो!'' ह्यूग चिल्लाया, ''मैं समझ नहीं पा रहा, तुमको स्कूल भेजने का क्या लाभ हुआ। लगता है, तुम कुछ सीख नहीं पाए हो। अगर हांस यहाँ आ गया और उसने हमारा गरम बँगला, बढ़िया भोजन, शराब का संग्रह देखा तो वह ईर्ष्या से भर उठेगा। जलन बहुत खतरनाक होती है, जिससे किसी का भी स्वभाव डगमगा सकता है। मैं कभी नहीं चाहूँगा कि हांस की फितरत बिगड़े। मैं उसका सबसे

अच्छा दोस्त हूँ। हमेशा ध्यान रखूँगा कि वह किसी तरह भी उत्तेजित न हो। इसके अलावा, यदि वह यहाँ आता है तो मुझसे थोड़ा आटा उधार माँग सकता है। यह मैं बर्दाश्त नहीं कर सकता। आटा एक चीज है तो दोस्ती दूसरी। उनमें घालमेल करना ठीक नहीं। कारण, दोनों शब्दों की वर्तनी भिन्न है, उनका भावार्थ अलग है। कोई भी इस फर्क को बूझ सकता है।''

''आप कितना अच्छा बोलते हैं।'' ह्यूग की पत्नी अपना गिलास गरम बियर से भरते हुए बोली, ''मुझे काफी उनींदापन लग रहा है, मानो मैं चर्च में हूँ।''

''बहुत से लोग क्रियाशील होते हैं,'' ह्यूग ने कहा, ''लेकिन बहुत कम बेहतर बोल पाते हैं। यह सिद्ध करता है कि इन दो गुणों में बोल पाना ज्यादा दुश्वार है और अधिक उत्कृष्ट भी।'' ह्यूग ने सामने बैठे अपने बेटे की ओर कठोर दृष्टि डाली। बेटा अपने आप पर इतना लज्जित हो उठा कि उसका चेहरा लाल हो गया और वह सिर झुकाए चाय पीता रहा। बहरहाल, वह इतनी कम वय का था कि क्षमा-योग्य था।

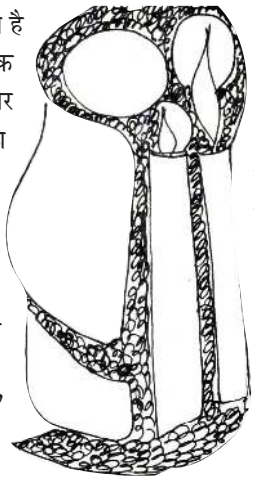

जैसे ही शीत ऋतु समाप्त हुई, गुलाब अपनी पँखुड़ियाँ खोलने लगे। ह्यूग ने अपनी पत्नी से कहा कि अब मैं हांस को मिलने जाऊँगा।

''वाह! कितना भावना से भरा दिल है आपका!'' उसकी पत्नी बोली, ''आप हमेशा दूसरों के बारे में सोचते हैं। और याद रखना, अपने साथ फूलों के लिए बड़ी बास्केट ले जाना मत भूलना।''

ह्यूग ने चक्की की धुरियों को लोहे की मजबूत जंजीर से बाँधा और बाँहों में बास्केट सँभाले पहाड़ी से नीचे उतरने लगा।

''नमस्ते, हांस।'' उसने अभिवादन किया।

''नमस्ते।'' हांस ने अपने फावड़े पर झुके-झुके कहा। उसकी कनपटियों के मध्य मुसकान पसर गई।

''और···ठंड के मौसम में तुम्हारा क्या हाल-चाल रहा?'' ह्यूग ने पूछा।

''आपका यह पूछना मुझे वाकई बहुत अच्छा लगा, बहुत!'' हांस बोला, ''कैसे बताऊँ, मेरा वक्त बेहद खराब गुजरा, लेकिन अब वसंत लौट आया है और मैं खुश हूँ। मेरे फूल खिल रहे हैं।''

''हम ठंड में तुम्हारे बारे में लगातार बातें करते रहे।'' ह्यूग बोला, ''और दु:खी थे कि तुम कैसे जी रहे होगे।''

''यह आपका सौजन्य है।'' हांस ने कहा, ''मुझे कभी-कभी शक होता रहा कि कहीं आप मुझे भूल तो नहीं गए।''

''हांस, मुझे तुम्हारे शक पर आश्चर्य हो रहा है।'' ह्यूग बोला, ''दोस्ती कभी नहीं भूलती। यही उसकी खूबी है। मुझे डर है कि तुम्हें जीवन की कविता समझ नहीं आती, वैसे तुम्हारे गुलाब कितने प्यारे लग रहे हैं।''

''निश्चित ही वे बहुत आकर्षक हैं।'' हांस ने जवाब दिया, ''और मेरे लिए यह खुशकिस्मती है कि वे इतने सारे हैं। मैं बाजार में ले जाकर उन्हें बेचूँगा और उन पैसों से अपना ठेला पुन: खरीदूँगा।''

''अपना ठेला खरीदोगे? यानी तुमने अपना ठेला बेच दिया था! ऐसी बेवकूफी क्यों की तुमने?''

''सच बताऊँ? मुझे मजबूरन बेचना पड़ा। मेरे लिए ठंड के दिन बड़े मुसीबत भरे होते हैं। मेरे पास रोटी खरीदने के लिए भी पैसे नहीं होते। मैंने पहले अपने कोट के चाँदी के बटन बेचे, फिर अपनी चाँदी की चेन, अपना लंबा पानी का पाइप और अंत में अपना ठेला। लेकिन मैं ये सब फिर से खरीद लूँगा।''

''हांस'', ह्यूग ने कहा, ''मैं अपना ठेला तुम्हें दे दूँगा। वह पूरा दुरुस्त तो नहीं है, उसकी एक बाजू टूट गई है, उसके चक्कों के स्पोक थोड़े खराब हैं। बावजूद इसके मैं वह तुम्हें दे दूँगा। मुझे पता है, यह मेरी उदारता होगी और बहुतांश लोग मुझे परले दर्जे का अहमक मानेंगे। लेकिन मैं दुनिया से इतर हूँ। मैं सोचता हूँ, यह उदारता मित्रता का सुगंधित अर्क है। सिवा इसके मेरे पास अपना नया ठेला है। हाँ, तुम निश्चिंत रहो, मैं अपना ठेला तुम्हें दे दूँगा।''

''सच में यह आपकी कृपा होगी।'' हांस ने कहा और उसका विनोदी गोल चेहरा हर्ष से पूरी तरह चमक उठा, ''मैं उसे सुधार लूँगा, मेरे यहाँ लकड़ी का एक तख्ता पड़ा हुआ है।''

''लकड़ी का पटरा!'' ह्यूग बोला, ''वही तो है, जो मैं अपनी भूसे की कोठरी के लिए ढूँढ़ रहा था। उसकी छत में बहुत बड़ा छेद हो गया है। मैं यदि उसे बंद नहीं करूँगा तो सारा भूसा गीला होता रहेगा। तुमने कितना बढ़िया सुझाव दिया है। यह गौर करने लायक है कि एक क्रिया सदा अन्य को जन्म देती है। मैंने तुम्हें अपना ठेला दे दिया है और अब तुम अपना तख्ता मुझे दे दोगे। निश्चित ही ठेला लकड़ी के तख्ते से ज्यादा कीमती है। लेकिन सच्ची दोस्ती इन व्यर्थ की बातों पर ध्यान नहीं देती। तुम जल्दी से वह पटरा ले आओ, ताकि मैं आज ही अपनी भूसे की कोठरी का काम शुरू कर सकूँ।''

''बिल्कुल!'' हांस ने उत्साहित होकर कहा और भागते हुए भीतर जाकर तख्ता खींच लाया।

''यह पटरा पर्याप्त बड़ा तो नहीं है।'' ह्यूग ने उस पर दृष्टि डाली। ''और मुझे नहीं लगता कि मैं छत का छेद बंद कर लूँगा तो ठेले के लिए लकड़ी बचेगी। पर इसके लिए मैं दोषी नहीं हूँ। और जब मैंने तुम्हें अपना ठेला दे ही दिया है, मैं उम्मीद करता हूँ कि बदले में तुम मुझे थोड़े-बहुत फूल दे ही दोगे। यह लो मेरी बास्केट और ध्यान रहे, उसे लबालब भरना है।''

''लबालब?'' हांस ने दु:खी होकर कहा, क्योंकि वह बास्केट बहुत ही बड़ी थी। उसे मालूम था कि उसे समूची भर दिया तो बाजार में ले जाने के लिए उसके पास फूल नहीं बचेंगे। और वह अपने चाँदी के

बटन लेने हेतु उतावला था।

''मुझे नहीं लगता कि जब मैंने तुम्हें अपना ठेला दे ही दिया है तो चंदेक फूलों पर मेरा अधिकार नहीं बनता। मैं गलत हो सकता हूँ, पर मैंने सोचा था कि दोस्ती सच्ची दोस्ती स्वार्थ से काफी अलहदा होती है।''

''मेरे मित्र, मेरे सबसे प्रिय मित्र,'' हांस ने प्रोत्साहित हो कहा, ''तुम मेरे बाग के सारे फूल ले जा सकते हो। मैं तुम्हारे अनमोल वचन अपने चाँदी के बटन के ऐवज में किसी रोज सुनना चाहूँगा।'' वह दौड़कर गया और गुलाब के सारे फूल तोड़कर ह्यूग की बास्केट पूरी भर दी।

''अलविदा, हांस।'' ह्यूग ने अपने कंधे पर तख्ता और हाथों में बास्केट लेकर पहाड़ी की तरफ जाने से पहले कहा।

''अलविदा!'' हांस ठेले की होनेवाली प्राप्ति को लेकर प्रसन्न हो कुदाल चलाते हुए बोला।

अगले दिन हांस अपने पोर्च में हनीसकल की बेल को चढ़ा रहा था कि उसने ह्यूग को रास्ते पर से उसे पुकारते सुना। वह सीढ़ी से कूदा और बगीचे से होते हुए परिसर की दीवार तक जा पहुँचा। वहाँ ह्यूग अपनी पीठ पर आटे का बड़ा-सा बोरा लादे खड़ा था। वह बोला, ''मेरे प्यारे हांस, क्या तुम मेरी खातिर यह बोरा बाजार तक ले जा सकोगे?''

''ओह! मुझे माफ कर दो।'' हांस ने उत्तर दिया, ''मैं आज बहुत व्यस्त हूँ। मुझे अपनी तमाम बेलों को ऊपर चढ़ाना है, फूलों के पौधों को पानी देना है और घास काटनी है।''

''अच्छा, ऐसी बात है।'' ह्यूग ने कहा, ''मेरे खयाल से जब मैं तुम्हें अपना ठेला दे रहा हूँ, तुम्हारा इनकार करना दोस्ती का उल्लंघन है।''

''अरे नहीं, ऐसा मत कहो। मैं दोस्ती के विपरीत कभी नहीं जा सकता।'' वह भागते हुए जाकर अपनी टोपी ले आया और अपने कंधों पर ह्यूग का बोरा लादकर घिसटता हुआ आगे बढ़ गया।

उस दिन बहुत गरमी थी। रास्ता धूल भरा था। और जब हांस छह मील पैदल चलता चला गया, वह बुरी तरह थक गया था। वह एक जगह बैठकर थोड़ा आराम करने रुक गया। पुन: हिम्मत कर उठा और बाजार तक जा पहुँचा। मामूली इंतजार के बाद उसने वह आटे का बोरा अच्छी कीमत में बेच दिया। वह तुरंत घर लौट आया कि देर होने पर राह में उसे कोई लूट न ले।

''यह दिन बहुत कठिन रहा'', हांस ने अपने आपसे कहा, जब वह सोने जा रहा था। ''लेकिन मैं खुश हूँ कि मैंने ह्यूग को नकारा नहीं, क्योंकि वह मेरा सबसे अभिन्न मित्र है और अलावा इसके वह मुझे अपना ठेला भी देनेवाला है।''

सवेरे-सवेरे ह्यूग अपने आटे के बोरे के पैसे लेने आ धमका, जबकि थका-माँदा लांस अभी बिस्तर में ही था।

''तुम बहुत आलसी हो। चूँकि मैं तुम्हें अपना ठेला देने जा रहा हूँ, तुम्हें और मेहनत करने की जरूरत है। आलस भयंकर पाप है और मैं अपने किसी भी दोस्त को काहिल और सुस्त नहीं देखना चाहता। मेरी इस साफ-बयानी का तुम्हें बुरा नहीं मानना चाहिए। हाँ, अगर्चे मैं तुम्हारा मित्र नहीं होता, सपने में भी ऐसा न कहता। लेकिन उस दोस्ती का क्या फायदा, जिसमें आदमी खुलकर न कह सके। प्रशंसा की मोहक बातें कर कोई भी किसी को लुभा सकता है, परंतु सच्चा दोस्त अकसर चुभनेवाली बातें कर दर्द दे सकता है। वह ईमानदार मित्र है तो ऐसा करेगा, क्योंकि वह जानता है, वह ठीक कर रहा है।''

''क्षमा करना,'' हांस अपनी आँखें मसलते और रात की टोपी हटाते हुए बोला, ''मैं इतना थका हुआ था कि मैंने सोचा, थोड़ी देर और लेटे रहते हैं, पक्षियों की चह-चह सुनते हुए। क्या आपको पता है, मैं पंछियों के गीत सुनते हुए ज्यादा अच्छा काम कर लेता हूँ।''

''बहुत बढ़िया!'' हांस की पीठ थपथपाते हुए ह्यूग बोला, ''मेरी इच्छा है कि तुम फौरन तैयार होकर मेरी चक्की पर आ जाओ, ताकि मेरे लिए भूसे की कोठरी की मरम्मत कर सको।''

बेचारा हांस अपने बाग में जाकर काम करने के लिए बहुत आतुर था, क्योंकि दो दिनों से वह पौधों को सींच नहीं पाया था। लेकिन वह अपने प्रिय मित्र को कैसे मना कर दे?

''यदि मैं कहूँ कि मैं बहुत व्यस्त हूँ तो क्या वह मित्रता के विरुद्ध होगा?'' उसने संकोची कातर आवाज में पूछा।

''क्या सच?'' ह्यूग ने जवाब दिया, ''मैं तुम्हें अपना ठेला दे रहा हूँ तो आवश्यक नहीं कि मैं तुम पर जोर डालूँ। अर्थात् तुम इनकार करोगे तो वह मरम्मत मैं खुद कर लूँगा।''

''नहीं, नहीं, किसी कीमत पर नहीं!'' हांस ऊँचे स्वर में बोला। वह बिस्तर से बाहर आया, कपड़े पहने और ह्यूग की चक्की पर जा पहुँचा।

वह सूर्यास्त तक वहाँ मरम्मत करता रहा, तब कहीं जाकर ह्यूग उसके हाल-चाल जानने वहाँ आया।

''क्या तुमने छत का छेद पूरी तरह बंद कर दिया?'' ह्यूग ने प्रसन्नतापूर्वक पूछा।

''लगभग हो गया है।'' सीढ़ी से उतरते हुए हांस बोला।

''आह! जो कार्य दूसरों के लिए किया जाता है, उससे उम्दा कुछ नहीं।''

''आपको बोलते हुए सुनना मेरा सौभाग्य है।'' हांस ने बैठकर अपने कपाल से पसीना पोंछते हुए कहा, ''बिरला सौभाग्य! लेकिन मेरा दुर्भाग्य है कि आपकी तरह मुझे सुंदर कल्पनाएँ नहीं सूझतीं।''

''सूझेंगी, तुमको भी सूझेंगी।'' ह्यूग बोला, ''लेकिन तुमको और परिश्रम करना पड़ेगा। अभी तुम महज मित्रता के प्रयोग से जुड़े हो, किसी

दिन सिद्धांत को भी छू लोगे।''

''क्या सच?'' हांस ने पूछा।

''मुझे इसमें कोई शंका नहीं है।'' ह्यूग ने उत्तर दिया, ''लेकिन अभी तुमने छत दुरुस्त कर दी है, बेहतर होगा कि घर जाकर आराम करो, ताकि कल मेरी भेड़ों को पहाड़ पर चरने के लिए ले जा सको।''

अदना-सा हांस इसके जवाब में कुछ कहने की हिम्मत नहीं जुटा सका।

अगली सुबह ह्यूग अपनी भेड़ों को लेकर उसके कॉटेज पर आ गया। हांस चुपचाप उनको हाँकते हुए पहाड़ की ओर चल पड़ा। सवेरे से शाम हो गई, जब वह लौटा। वह थकावट से इतना चूर-चूर हो गया था कि कुरसी पर बैठे-बैठे ही नींद के आगोश में चला गया। जब उसकी नींद खुली, चारों ओर भरपूर उजाला फैल चुका था।

''अब बगिया में कितना मजा आएगा...'' कहते हुए वह सीधे अपने काम में लग गया।

वह अपने फूलों का साज-सँभाल संपूर्ण मन से कर नहीं पा रहा था, क्योंकि उसका दोस्त ह्यूग बारहा आकर अपने किसी-न-किसी मशक्कत भरे लंबे काम में उसे जोत देता या अपनी चक्की पर मदद के लिए बुला लेता। कभी-कभी हांस बहुत अवसादग्रस्त हो जाता कि उसके फूल सोचते होंगे, कहीं वह उन्हें भूल तो नहीं गया है। वह स्वयं को इस तर्क से दिलासा दे लेता कि ह्यूग उसका गहरा मित्र है। फिर अपने-आपसे कहता, वह मुझे अपना ठेला भी तो देनेवाला है, जो शुद्ध उदारता का कार्य है।

हांस इस प्रकार ह्यूग के कामों को अंजाम देता रहा और ह्यूग मित्रता से संबंधित सारी उच्च कोटि की बातें करता रहा। हांस उसके कथनों को डायरी में लिख लेता और रात में पढ़ता रहता, क्योंकि वह एक अध्ययनशील छात्र रहा था।

एक रात ऐसा हुआ कि हांस जब अपनी अँगीठी के नजदीक बैठा था, किसी ने दरवाजा जोर से खटखटाया। वह एक तूफानी रात थी। आँधी भयंकर आवाज करती हुई हांस के मकान की मानो परिक्रमा कर रही थी। उसने पहले सोचा कि इसी वजह से दरवाजा खड़खड़ाया होगा। लेकिन पुनः खटखट हुई, एक बार, दूसरी बार और तेज।

''शायद वहाँ कोई तूफान में फँसा हुआ यात्री होगा।'' हांस बुदबुदाते हुए दरवाजे की ओर लपका।

वहाँ ह्यूग खड़ा था—एक हाथ में कंदील और दूसरे में डंडा उठाए।

वह चिल्लाया, ''मेरे प्यारे हांस, मैं बहुत मुसीबत में हूँ। मेरा छोटा बेटा सीढ़ी से गिर पड़ा है और जख्मी हो गया है। मैं डॉक्टर के पास जा रहा हूँ, पर वह इतनी दूर रहता है और यह रात इतनी तूफानी है कि मुझे अभी-अभी सूझा कि मेरे बजाय तुम जाओ तो बेहतर रहेगा। तुम्हें मालूम है, मैं तुम्हें ठेला देनेवाला हूँ, इसलिए बदले में तुम्हें यह उपकार करना ही चाहिए।''

''बिल्कुल,'' हांस बोला, ''यह मेरे लिए सम्मानसूचक है कि आप मेरे यहाँ आए। मैं अभी जा रहा हूँ। लेकिन यह रात इतनी अँधेरी है कि मैं कहीं गिर सकता हूँ, सो आप अपना कंदील मुझे दे दो।''

''नहीं भाई, यह मेरा नया कंदील है। उसे कुछ हो गया तो मेरा भारी नुकसान होगा।''

''कोई बात नहीं। मैं उसके बिना चला जाऊँगा।'' हांस ने अपना फर का कोट पहना, गले में मफलर लपेटा और निकल पड़ा।

वह भयानक झंझावाती रात थी, ऐसी अँधेरी कि हांस बड़ी मुश्किल से देख पा रहा था। हवाएँ बला की तेज चल रही थीं। हांस के लिए खड़े रहना भी कठिन हो रहा था। किसी तरह तीन घंटे पैदल चलने के बाद वह डॉक्टर के बँगले पर पहुँचा। उसने कुंडी बजाई।

''कौन है वहाँ?'' डॉक्टर ने अपने शयनकक्ष से झाँका।

''डॉक्टर, मैं हूँ हांस।''

''क्या चाहिए तुम्हें?''

''चक्कीवाले ह्यूग का बेटा सीढ़ी से गिर पड़ा है और चोटिल हो गया है। ह्यूग का संदेश है कि आप जल्दी से उसके घर चलें।''

''ठीक है।'' डॉक्टर लालटेन लेकर नीचे आया, अपने घोड़े पर सवार हुआ और ह्यूग के मकान की दिशा में चल पड़ा। निरीह हांस उसके पीछे दौड़ता हुआ आगे बढ़ा।

तूफान की गति पल-पल तीव्रतर होती जा रही थी। फिर मूसलधार बरसात शुरू हो गई। हांस को कुछ सूझ नहीं रहा था। वह घोड़े की रफ्तार साध नहीं पाया और रास्ता भटक गया। वह उस बंजर भूमि में जा फँसा, जहाँ पर बड़े-बड़े गड्ढे थे और एक विशाल गड्ढे में डूब गया।

अगले दिन चरवाहों को उसकी लाश मिली, जो एक लंबे-चौड़े गड्ढे में तैर रही थी। वे उसे उसके कॉटेज पर ले आए।

हांस इतना लोकप्रिय था कि उसकी शव-यात्रा में समूचा गाँव सम्मिलित हुआ। ह्यूग सबसे अधिक शोक व्यक्त कर रहा था। उसने सबको संबोधित किया, ''हांस का मैं घनिष्ट मित्र था। इसलिए मेरा हक बनता है कि मैं सबसे आगे रहूँ।'' वह अपने काले लबादे में उस शव-यात्रा के एकदम सामने पहुँचा गया और अपने रूमाल से हर क्षण आँखें पोंछता जा रहा था।

हांस को मिट्टी के सुपुर्द करने के पश्चात् जब साथ गए कतिपय लोग बार में मीठे केक के साथ शराब का सेवन करने बैठे तो लुहार बोला, ''हांस का जाना हम सबके लिए व्यक्तिगत क्षति है।''

''मेरे लिए तो सबसे ज्यादा।'' ह्यूग बोला, ''क्योंकि मैंने उसको अपना ठेला तकरीबन दे ही दिया था। मैं समझ नहीं पा रहा कि अब उसका क्या करूँ। वह टूटी-फूटी हालत में घर में कबाड़-सा पड़ा हुआ है। मैं उसे बेचूँ तो कोई एक पैसा भी नहीं देगा। मैं दोबारा किसी को अपनी कोई वस्तु देने के प्रति सावधानी बरतूँगा। अधिक दयावान बनने से हर इनसान दुःख ही पाता है।''

बी-४०, एफ-१, दिलशाद कॉलोनी
दिल्ली-११००९५
दूरभाष : ०९९७१७४४१६४

निमाड़ की पारंपरिक दीवाली

● सुमन चौरे

पर्व और उत्सवों की प्रकृति नदी के जल जैसी होती है, वे कुछ पीछे छोड़ते हैं, कुछ नया लेते रहते हैं। पर्व का वैशिष्ट्य तो तब है, जब वह सबके लिए हो, सबके हित में हो और सार्वकालिक हो, चिरायु होता है, और सबको आनंदोल्लास देता है। दीवाली इन सभी कारकों के आयामों की पूर्ति करती है। दीपोत्सव दीर्घकाल से चला आ रहा है। जैसे सूर्य सबको समान प्रकाश देता है, वैसे ही यह पर्व भी सबको समान ज्योति-प्रकाश देता है, सबका अंधकार दूर करता है, चाहे फिर वह अंधकार अज्ञानता का हो, दरिद्रता का हो, वैमनस्यता का हो, अकर्मण्यता का हो या किसी का भी हो। इस पर्व से समाज के सभी वर्गों का सरोकार रहता है। सबको ज्योति के दर्शन होते हैं। चाहे वह ज्ञान की ज्योति हो, सौहार्द की ज्योति हो, संपन्नता और सद्‌भाव की ज्योति हो, आजीविका की ज्योति हो, समरसता की ज्योति हो, चाहे माटी के दीये की ज्योति हो, यह सब दीवाली पर्व को मनाने की परंपरा के मूल से जुड़ा दिखता है। दीवाली का मुख्य केंद्र है, नेह और नेह से भरा गाढ़ी का नन्हा सा दीपक तथा बाती। प्रकाश पर्व का यह दीया कितने ही जीवों की आजीविका का साधन है।

कुम्हार को लगता है, यह पर्व मेरा ही है और मात्र मेरा ही है। यह पर्व मुझसे ही प्रारंभ होता है। मेरे बिना तो दीवाली दीवाली ही नहीं। मैं दीये गढ़ूँगा, तभी तो वे टिम-टिम कर जलेंगे। शरीर की कल्पना दीपक से की जाती है। कुम्हार कहता है, ''शरीर नहीं तो आत्मा कहाँ रहेगी। शेष सब क्रियाएँ तो गौण हैं।'' दीये के साथ ही वह छोटे-छोटे घड़े और ग्वालन भी गढ़ता है। पूजा के समय उनमें नवान्न भरकर लक्ष्मीजी के समक्ष रखे जाते हैं। वह दूध की दुतलियाँ भी गढ़ता है, जो गोवर्धन पड़वा के दिन भगवान् के प्रसाद के लिए दूध से भर दी जाती हैं।

तेली को लगता है, ''यह पर्व मेरा है, मैं ही तो तिली-फली के दानों से तेल निकालता हूँ। जो दीपक और बाती को सार्थक कर देता है। नेह ही तो दीपक में प्राण भरता है। नेह ही तो समाज का नैतिक संबल है, जो लोगों में स्नेह की जोत जलाए रखता है।

निमाड़ का किसान खुशहाल है। किसानों को लगता है, ''मेरी खेती ने खरीब का अन्न उगला है ज्वार, मूँग, चावल, मूँगफली, उड़द, कपास आदि। मेरे द्वारा उपजाया अन्न-फली-कपास दीवाली की अन्न लक्ष्मी है। कपास की बाती फली के तेल और दीपक के साथ मिलकर प्रज्वलित होकर अंधकार को दूर करने का प्रण करती है।'' किसान को लगता है, नवान्नागमन का ही तो पर्व है दीवाली। गोवंश द्वादशी यानी बजबारस के दिन गाय-बछड़े की पूजा कर उन्हें चवला-ज्वार खिलाया जाता है। और रसोई में भी इसी अनाज का भोजन बनाकर सबको खिलाया जाता है। इसीलिए किसान को इस पर्व के साथ निजता का आभास होता है, आत्मीय का बोध होता है।

इमरात अर्थात् बसोड़, 'झाड़ू बुनकर' को लगता है, ''इस पर्व का मुख्य बिंदु तो मैं ही हूँ। हम झाड़ू बनाते हैं, दीवाली आगमन का सर्वप्रथम उपक्रम तो हमसे ही प्रारंभ होता है, लक्ष्मीजी तो शुचिता, स्वच्छता, शुद्धता और पवित्रता प्रेमी है। मेरी झाड़ू से ही दीवाली की तैयारियाँ शुरू होती हैं। घर की स्वच्छता के लिए कार्यारंभ ही दीवाली आगमन की सूचना शुभ है। मैं ही तो विषैले, कँटीले जंगल से बेतरतीब सिंध की टहनियों को लाकर सुंदर और मुलायम रूपायित करता हूँ। तब धन की देवी लक्ष्मी के साथ गृहस्वामी मेरे द्वारा बनाई गई झाड़ू की पूजा करता है। झाड़ू बरकत का एक प्रतीक है। इसीलिए दीवाली की तैयारी में सबसे पहले अप्रत्यक्ष रूप से मैं ही स्मृत रहता हूँ।''

सामान्य धारणा तो यही है कि दीवाली वणिक और व्यापारियों का ही त्योहार है, तिजोरियों के खनखनाने का त्योहार है। वर्षोपरांत नदी-नालों ने अपनी ऊपरी सीमाएँ बाँध लीं। सभी मार्ग यातायात के लिए सुलभ हो गए। फसलें पक-पककर घर में आ गईं। घर में अन्न धन के अंबार लग गए। व्यापार लेन-देन के लिए और क्रय-विक्रय के लिए बाजार खुल गए। अच्छी फसलों के आने से व्यापारियों को अपनी उधारी का धन मिलने की आशा जाग उठती है। वणिक खाता-बही बदलने का पर्व मनाता है। उसका मूल मय ब्याज के लौट आता है। दीवाली वणिक के आनंद का पर्व है, दीवाली उसकी तिजोरियाँ भर जाने का पर्व है।

सुनार की आँखों में लक्ष्मीजी की चमक चमचमाने लगती है। खेतिहर किसान सोने की पाटली नहीं तो चाँदी का पाट तो खरीदेगा ही। बहू के लिए कंठीमाला नहीं तो मुंदरी ने ऊर, आयल तो खरीदेगा ही, जिससे घर में बहू लक्ष्मी के पैर की रुनुक-झुनुक की रौनक बिखरेगी। इतना भी नहीं, तो वह गिरी हालत में नाक की लौंग तो खरीदेगा ही। सोना याने धन, धन याने, लक्ष्मी लक्ष्मी याने सुनार की बिक्री। लक्ष्मी पूजा में परंपरानुसार सोने की पूजा तो की जाती है। इसीलिए सुनार को लगता है कि उसके बिना तो लक्ष्मीजी की पूजा असंभव है। अतः दीवाली आगमन से सुनार के चेहरे पर सोने-सी ही चमक जाग जाती है। उसे लगता है, यह पर्व उसके लिए ही है।

गो-रक्षक और गोस्वामी के लिए तो उसका अपना ही आनंद है दीवाली। गोस्वामी को हर वस्तु में अपने गोधन की उपस्थिति नजर आती है। उसकी धारणा है कि गोवत्स से ही कृषि संभव हुई, जो भी समाज में

आनंद है, वह प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से गोवंश के कारण ही है। गोरक्षक का विश्वास है, यह पर्व उसका अपना है। वह अपने गोधन की पूजा के साथ ही यह पर्व प्रारंभ करता है। उसी की पूजा और उसके प्रति उपकृत भाव से वह इस पर्व को बिदाई देता है।

गाँव का नाई ठाकुर तो मन-ही-मन गुनगुनाता हुआ उस्तरा पत्थर पर घिसकर धार तेज करता है। गाँव का कोई भी व्यक्ति नहीं चूकेगा सुंदर दिखने के लिए, वह नाई के सामने सिर नीचा कर बैठेगा ही। जैसे ही दीवाली की तैयारियाँ शुरू होती हैं, नाई ठाकुर का पूरा परिवार काम में जुट जाता है, पलाश के हरे पत्तों को बुन-बाँधकर पत्तल-दोने बनाता है। अन्नकूट के दिन हर घर में पत्तल दोने की आवश्यकता होती है।

लक्ष्मी पूजन में लक्ष्मीजी पर चर ढुलाने का नेग और साल भर का भाता, नए वस्त्र, सब ही नाई को इसी दिन मिलते हैं। कुछ लोग अपने घर होनेवाली लक्ष्मी पूजा का बुलावा नाई के द्वारा डोंडी पिटवाकर देते हैं। डोंडी पीटने का नेग भी नाई कभी कलदार, तो कभी अनाज के रूप में पाता है। इसे 'भाता' कहते हैं। यह उसके लिए साल भर की उगाहवनी का दिन है, नाई ठाकुर का लक्ष्मी-पूजा का दिन है।

चरवाहे-ग्वाले का मन भी हरे-भरे चारागाह जैसे हरा-भरा हो थिरकने लगता है। यह वही व्यक्ति है, जो गोवर्धन करवाता है। वह गोवर्धन पड़वा के दिन उन घरों में जाता है, जिनके पशु वह चारागाह चराने ले जाता है। घरों में जाकर वह गोरक्षक-गोस्वामियों की प्रशंसा एवं गोधन की प्रशंसा के गीत गाता है। इन गीतों में गोवंश का महत्त्व व गोरक्षक की उदारता की स्तुति होती है। इन गीतों को 'हीड़' कहते हैं। वह डफली बजाकर गाता है, उसे गोरक्षक घरों से अन्न के रूप में भाता देते हैं। नए वस्त्र एवं गोचराई की नगद राशि भी मिलती है। दीवाली के दूसरे दिन से ही पशुओं को चारागाह भेजा जाता है। वर्षाकाल में पशुघर पर ही रहते हैं। गोवर्धन पड़वा से पशुओं को फिर चारागाह ले जाने की शुरुआत से चरवाहों को प्रसन्नता होती है। यह उनकी आजीविका है। इसलिए दीवाली उसके जीवन में खुशहाली लाती है।

बाजार में दुकानदारों की अपनी एक अलग ही खुशी होती है, इस अवसर पर उनकी आँखों में चमक-दमक जाग उठती है। बाजार सज उठते हैं। सेठ-व्यापारियों को लगता है दीवाली उनका ही पर्व है। उन्हें लगता है, उनके बिना न घरों में रँगाई-पुताई होगी, न सुंदर सजावट होगी, न उनके पशुधन माला मनका सेला चोटी पहनेंगे। बाजार में धान की लाई (धानी) के सफेद पहाड़ के पहाड़ भड़भूँजा का आनंद है, दीवाली पर वह भी फूली जैसा फूला नहीं समाता, क्योंकि छप्पन पकवान भी हों, सब एक तरफ और धान की लाई एक तरफ। बिना उसके लक्ष्मीजी का भोग संभव नहीं। बताशों जैसे मीठा बोल-बोलकर बताशे बेच देता है, ताकि उसके घर भी धन लक्ष्मी आ जाए।

पटाखों के व्यापारियों के मन में तो दीवाली से आने से दो महीने पहले से ही फुलझड़ियाँ छूटने लगती हैं। वे जानते हैं कि पटाखे तो दीवाली के पर्याय हैं। दीवाली का नाम लेते ही तड़ातड़ टिकड़ी, धमाधम बम, छर-छर अनार के दृश्य आँखों में रमने लगते हैं। बिना बम के क्या आतिशजबाजी! बच्चों की उमंग तो देखते ही बनती है, जब वे फुलझड़ी छोड़ते हैं, घर्री-अनार को देख-देखकर ताली बजा-बजाकर कूदते हैं। यही रौनक तो बाजार का आनंद बढ़ा देती है।

सबके आनंद का पर्व है दीवाली। दीवाली का असली खालिश मजा देखना हो तो बच्चे किशारों और युवाओं में देखो। उन्हें लगता है, यही एक पर्व है, जहाँ नन्हे-मुन्नों को भी आग-दीये का डर नहीं और किशोरों का तो उत्साह-साहस देखते बनता है। हाथ में ही बड़े-बड़े बम फोड़ लेते हैं। उन्हें मालूम है आज बिना रोक-टोक के बड़े शोर-शराबेवाले बम पटाखे भी चला सकते हैं। दिल खोलकर रोशन कर सकते हैं। खूब मिठाइयाँ खा सकते हैं। छोटे-बड़ों के साथ खूब जश्न मना सकते हैं।

पटाखे चलाने का आनंद भी एक अलग आनंद होता है। यों तो व्यक्ति अपनी हर क्रिया, हर वस्तु गुप्त ही रखना चाहता है, अपनी वस्तु का व्यक्तिगत उपभोग करना चाहता है; किंतु दीवाली एक ऐसा पर्व है, जब व्यक्ति चाहता है, वह जो पटाखे चलाए-जलाए या फोड़े, उस खुशी में सब सम्मिलित हों, सहभागी हों। उनके पटाखों को सब देखें सब प्रशंसा करें। उनके शौर्य की प्रशंसा करे। इस पर्व पर व्यक्ति सब में खुशियाँ बाँटना चाहता है। वह घर द्वार के बाहर पटाखे चलाता है, ताकि उसकी खुशी बहुगुणित हो जाए।

समष्टिगत आनंद ही परिवार की महिलाओं का ध्येय होता है। उन्हें लगता है, दीवाली पर्व पर वे जो भी पकवान, व्यंजन बनाएँ, सभी लोग आएँ और ज्यादा-से-ज्यादा लोग उसे खाएँ और उनके द्वारा बनाई गई भोज्य सामग्री की प्रशंसा करें, वाहवाही दें। यही आनंद उनके खाते का सुख है। भले ही रात-रातभर जागकर गुजिया पपड़ी बनाते-बनाते उनकी हथेलियों की गद्दियाँ लाल हो गई हों, भले ही सूज गई हों और, उनको तलते-तलते कढ़ाई और चूल्हे की आँच से उनका चहरा लाल हो गया हो, पर आँच की यह लाली उनके गालों पर, होंठों पर गुलाबी मुसकान को जन्म दे जाती है।

गृहलक्ष्मी जानती है, उनके लिए दीवाली पर नवीन वस्त्राभूषण आएँगे ही, नहीं ज्यादा तो सोने का एक दाना, तो सोने की एक कील जरूर आएगी ही और उसकी पूजा धनतेरस व लक्ष्मीपूजन के दिन होगी ही। वे प्रसन्न हैं, लक्ष्मी पूजा के बाद घर के पुरुष उन्हें श्री लक्ष्मी स्वरूप मानकर टीका लगाएँगे, इस मान-सम्मान और आदर के आगे, उनके लिए दीवाली पर किया गया अथक श्रम सोना हो जाता है। इस प्रकार पुरुषों द्वारा पूजे जाने पर वह साक्षात् गृह-लक्ष्मी हो जाती हैं। घर-लक्ष्मी, वर-लक्ष्मी, धन-लक्ष्मी, कर्म-लक्ष्मी सभी तो वही हैं। यही तो दीवाली है। जहाँ बहू लक्ष्मी वहाँ सब ही लक्ष्मी प्रसन्न यही प्रसन्नता दीवाली की ज्योति है। यही प्रसन्नता जीवन का सार है। यही प्रसन्नता दीवाली का प्रकाश पर्व है।

१३, समर्थ परिसर, ई-८ एक्स्टेंशन,
बावड़िया कला, पोस्ट ऑफिस त्रिलंगा,
भोपाल-४६२०३९
दूरभाष : ०९४२४४४०३७७

पाठकों की प्रतिक्रियाएँ

'साहित्य अमृत' का सितंबर अंक अपने सम्मोहक कलर में आकर्षित कर गया। संपादकीय तो सारगर्भित रहा ही, अन्य रचनाओं ने भी आकर्षण और उत्प्रेरित किया। स्वनामधन्य अटल बिहारी वाजपेयी का जाना एक गहरा घाव दे गया, जो कभी नहीं भरेगा। 'बुझी हुई बाती सुलगाएँ, आओ फिर से दीया जलाएँ' कितनी उत्प्रेरक और सार्थक है। जो जितना ऊँचा होता है, वह उतना ही एकाकी होती है। हर भार स्वयं ही ढोता है। 'चेहरे पर मुसकानें चिपका, मन-ही-मन रोता है।' बहुत कुछ कह रहा है। सचमुच धरती को बौनों की नहीं, ऊँचे कद के इनसानों की जरूरत है। श्री नारायण चतुर्वेदी का 'श्री शिवपूजन सहाय', प्रकाश मनु का 'घोष बाबू का स्कूल', तुलसी देवी तिवारी का 'और वह रो पड़ा', आचार्य बलवंत का 'अंग्रेजी मानसिकता से मुक्त हों', इंदु शुक्ला का 'विकास की ओर', गोपाल चतुर्वेदी का 'अदृश्य विकास और ईश्वर', रामदरश मिश्र का 'शिक्षक दिवस', रेणुका अस्थाना का 'एडवांस बुकिंग', रूसी कहानी 'वहशत', कुलभूषण सोनी का 'हिंदी का नेतृत्व', शिवमूर्ति सिंह के 'पावस के दोहे' तथा सुशील कुमार पाठक का 'लोककाव्य में कुँवर सिंह' बड़ा भाया। सभी रचनाकारों को धन्यवाद।

—नंद किशोर तिवारी, वाराणसी

'साहित्य अमृत' का अक्तूबर अंक प्राप्त हुआ। संपादकीय का शीर्षक 'महात्मा गांधी की १५०वीं जयंती' में लिखा है 'लेकिन यह दिन एक रस्म बनकर रह गया है, गांधी जयंती।' बहुत ठीक ही लिखा है। हम विश्वशांति के लिए प्रयत्न कर रहे हैं। उपेंद्रनाथ अश्क की प्रतिस्मृति 'चारा काटने की मशीन' पढ़ी। 'सहजो की कमाई' कहानी में सहजो ने जीवन भर मेहनत की, न अच्छा खाया, न पहना। सदा मिर्च से रोटी खाई। किस काम आई कंजूसी और इतनी कमाई? अशोक चक्रधर का नीरजजी पर लिखा स्मरण पढ़ा। नीरजजी की पहली पुस्तक की भूमिका मेरे पिताजी बाबू गुलाबराय ने लिखी थी। श्रीधर द्विवेदी की कहानी 'आखिरी ईद' में कॉलेज के प्रिंसिपल को शिया डिग्री कॉलेज, सुलतान में विज्ञान की स्नातक स्तर की पढ़ाई की स्वीकृति मिल गई। यह आखिरी ईद का तोफा मिला। गोपाल चतुर्वेदी 'राम झरोखे बैठ के' के हर अंक में अच्छा व्यंग्य लिखते हैं। इस बार गुमशुदा की तलाश और खात्मा रिपोर्ट पुलिस पर व्यंग्य है। श्री प्रेमपाल शर्मा के संस्मरण 'वो नन्हा फरिश्ता' में उन्होंने यह अपने प्रिय पालतू लेब्रा डॉगी, जिसका नाम रफ्तार है और वह केवल दो वर्ष जीवित रहा, की याद में लिखा है। उन्होंने उसे अमर बना दिया। 'पावस और प्रेषितपतिका' लेख में श्याम मोहन दुबे ने गद्य में पद्य का आनंद दिया। 'मोबाइल फोन : खतरे की आहट' आलेख लोगों के लिए चेतावनी है कि इसका उपयोग हानिकारक ही होता है।

—विनोद शंकर गुप्त, हिसार

'साहित्य अमृत' के सितंबर अंक में 'वह शर्त' या 'शर्त' चेखव की कहानी का अनुवाद श्री बाल मुकुंदजी ने कहानी-रस में डूबकर किया है। मानो मूल कृति पढ़ रहे हों। मेरी दृष्टि में चेखव की तमाम कहानियों का अनुवाद बाकियों के मुकाबले सर्वाधिक हुआ है। रूसी से सीधा अनुवाद मदनलाल 'मधु', भीष्म साहनी जैसे सशक्त हस्ताक्षरों ने किया, बहुत श्रेष्ठ है। डॉ. आशा गुप्त ने भी शानदार काम किया। जब तक मेरे पास चेखव की किताबें हैं, नई किताबें न भी मिलें तो भी कोई बात नहीं। भाई नंदवानाजी को दोबारा मुबारकबाद। रजनी गोसाईं की कहानी जीवन परिवर्तन चक्र पर है, अच्छी लगी।

—हरदर्शन सहगल, बीकानेर (राज.)

'साहित्य अमृत' का सितंबर अंक मिला। संपादकीय प्रेरक लगा। श्री अटल बिहारी वाजपेयी के निधन पर विचार दर्शन, राजनीति आदि पर उनका मूल्यांकन अच्छा लगा। वास्तव में वे 'अजातशत्रु' थे। 'अपनी बात' में अटल बिहारी वाजपेयी की कही बात प्रस्तुत की गई है। वाजपेयीजी की कविताएँ बहुत अच्छी लगीं। 'नई हिंदी का वैश्विक स्वरूप' आलेख बहुत अच्छा लगा। शिक्षक दिवस की डायरी अच्छी लगी। 'बरसे मेघा फिर से' आलेख उम्दा लगा। 'हिंदी का महत्त्व' तथा 'पावस के दोहे' कविता अच्छी लगी। सारांश यह है कि पत्रिका का अंक पठनीय, संग्रहणीय है। आजकल साहित्यिक पत्रिकाओं में 'साहित्य अमृत' पत्रिका अग्रिम पंक्ति में है।

—विजयपाल सेहलंगिया, महेंद्रगढ़ (हरि.)

'साहित्य अमृत' का अक्तूबर अंक पढ़ा। संपादकीय अति प्रिय लगी। आलेख 'खोंइछा में मॉरीशस' बहुत ही प्रिय और सूचनाप्रद लगा। रिपोर्ट 'अंतरराष्ट्रीय स्वरूप लेता विश्व हिंदी सम्मेलन' भी अति जानकारी पूर्ण लगी। कहानी 'सहजो की कमाई' भी हमें पसंद आई। स्मरण में 'नीरज की चुंबकीय परिधि' बहुत ही प्रिय और सूचनाप्रद लगा। आलेख 'मोबाइल फोन खतरे की आहत' बहुत ही जानकारीप्रद लगी। मोबाइल से हमें बचना चाहिए। साहित्य अमृत पत्रिका हमें खूब पसंद आती है।

—बद्रीप्रसाद अनजान, गोरखपुर (उ.प्र.)

साहित्य एवं संस्कृति का संवाहक 'साहित्य अमृत' का अक्तूबर अंक प्राप्त हुआ। ऐसा लगा जैसे किसी साहित्य-पिपासु को अमृत मिल गया हो और वह जी उठा! वैसे इस सर्वश्रेष्ठ पत्रिका का प्रथम दर्शन ही अत्यंत सुख एवं संतोषप्रद रहा। जिस पत्रिका के संस्थापक संपादक स्वनामधन्य स्व. पं. विद्यानिवास मिश्र एवं पूर्व संपादक स्व. डॉ. लक्ष्मीमल्ल सिंघवी रहे हों, उसका सर्वश्रेष्ठ होना लाजिमी है। जितनी भी सामग्री आपने प्रकाशित की, अतिश्रेष्ठ, ज्ञानवर्धक है। मेरे स्वयं का इसमें प्रकाशित होना मेरे लिए संजीवनी सदृश है।

—श्याम मोहन दुबे, जबलपुर

'साहित्य अमृत' का अक्तूबर अंक प्राप्त हुआ। सदैव की भाँति यह अंक भी पठनीय और उत्कृष्ट है। महात्मा गांधी की १५०वीं जयंती पर प्रकाशित संपूर्ण सामग्री अपनी आभा से जाजवल्यमान है। संपादकीय से लेकर साहित्यिक गतिविधियों तक प्रकाशित निबंधों के साथ कविता, कहानी, यात्रा-वृत्तांत तक सारी सामग्री ज्ञानवर्धक और पठनीय है। इसके लिए संपादक मंडल को बधाई। उपेंद्रनाथ अश्क, ऋता शुक्ल, ललित शर्मा के साथ प्रियदर्शी दत्ता, गोपाल चतुर्वेदी के साथ सुशील सरित के लेख और कविता के विषय नवीनतम स्वरूप में प्रस्तुत किए गए हैं। विशेष रूप से विश्व हिंदी सम्मेलन की विस्तृत समीक्षा पढ़कर 'साहित्य अमृत' की जागरूकता से सम्मोहित होना अनुभव हुआ।

—कृष्ण मित्र, गाजियाबाद (उ.प्र.)

'साहित्य अमृत' के अक्तूबर अंक में विश्व हिंदी सम्मेलन, मॉरीशस पर लिखी ऋता शुक्ल और कृपाशंकरजी की रचनाएँ पढ़ते समय हिंदी प्रेमी होने के नाते आत्मिभोर हो गया। सारे चित्र चलचित्र की भाँति आँखों के आगे तैरने लगे। ऐसा प्रतीत हुआ, मानो मैं भी वहीं मौजूद था। महाराष्ट्र वासी

होने के कारण मराठी भाषियों की रचनाएँ सबसे पहले पढ़ता हूँ। विश्वास पाटील और उज्ज्वला केलकर को फोन पर बधाई दी और बातचीत करके मन प्रसन्नचित्त हुआ। साहित्यकारों के लिखने के ढंग और मन:स्थिति (विनोद शंकर गुप्त) रोचक, मनोरंजक लगा। अटल बिहारी वाजपेयीजी के विशेषांक की प्रतीक्षा में।

—अशोक वाधवाणी, गांधीनगर (महा.)

'साहित्य अमृत' का अक्तूबर अंक समय पर मिला। सभी रचनाओं की अपनी-अपनी विशेषताएँ हैं। 'प्रतिस्मृति' में उपेंद्रनाथ 'अश्क' कृत 'चारा काटने की मशीन' ने देश विभाजन की याद दिला दी। दिल्ली में भी कब्जे पर कब्जे के नजारे देखने को मिले थे। आपाधापी के माहौल में दबंगीय कौशल हावी था। परस्पर झगड़े और गाली-गलौज आम बात थी। चारों तरफ अमानवीय रुख दृष्टिगोचर हो रहा था। 'स्मरण' के अंतर्गत अशोक चक्रधरजी का आलेख 'नीरजजी की चुंबकीय परिधि' ने अभिभूत कर दिया। याद आया वह समय जब कवि-सम्मेलन आधी-आधी रात तक चलते रहते थे और दर्शक उनका भरपूर आनंद लेते थे। एक रिपोर्ताज के रूप में कृपाशंकर चौबेजी का ग्यारहवें विश्व हिंदी सम्मेलन का चित्रण एक बहुत मनोहारी एवं ज्ञानवर्धक लगा। हिंदी प्रेमियों के लिए यह एक संग्रहणीय रचना है। समूचा हिंदी विश्व श्री अटलजी को श्रद्धांजलि देने में एकमत था। मॉरीशस के पूर्व प्रधानमंत्री अनिरुद्ध जगन्नाथ का यह कथन कि भाषा के माध्यम से ही राजसत्ता को चुनौती देने का उपक्रम हो सका। प्रवासी भारतीयों का हिंदी प्रेम वास्तव में प्रशंसनीय है। ऋता शुक्लजी के आलेख 'खोइंछा में मॉरीशस' में लेखिका ने भावपूर्ण ढंग से मॉरीशस यात्रा को अभिव्यक्त किया है। 'अपने कहंवा से आइल बानी' सुनकर ऋताजी भाव विभोर हो गई। उनको ऐसा लगा कि कोई वर्षों पहले बिछड़ा भाई मिला है। इत्तिफाक से उस गिरमिटिया का गाँव तिवारी पर सुनकर तो लेखिका भाव-विह्वल हो गई।

—बी.डी. बजाज, दिल्ली

'साहित्य अमृत' का अक्तूबर अंक प्राप्त हुआ। श्री विश्वास पाटील विरचित ललित निबंध 'वर दे, आया तेरे द्वार' अत्यंत ज्ञानप्रद लगा। ममता की मूर्ति मातेश्वरी दुर्गा का स्मरण दिलाते हुए विद्वान् लेखक ने जिस प्रकार बोधगम्य शैली में ज्ञान की गंगा बहाई है। वह अवश्यमेव प्रशंसनीय है। श्री सुशील सरित रचित यात्रा-वृत्तांत 'अयोध्या अपराजेय आस्था की नगरी' के अवलोकन से जैसे घर बैठे ही अवध का पावन दर्शन सहज-सुलभ हुआ। श्री ललित शर्मा का आलेख 'भारतीय चित्रांकन परंपरा में श्री राम' से सच ही यह स्पष्ट हुआ है कि मध्यकालीन संस्कृति में भारतीय चित्रांकन परंपरा कितनी समृद्ध थी। श्रीराम और अवध का चित्रण एक ही अंक में यह भी प्रस्तुत अंक की विशेषता मानी जाएगी। सुश्री ऋता शुक्ल का आलेख 'खोइंछा में मॉरीशस' मन को छू गया। अप्रवासी भारतीय की कथा की झलक भी इस आलेख में उपलब्ध है। संपादकीय से संपादक की विद्वत्ता और साफगोई का संकेत मिलता है। श्री श्याम मोहन दुबे रचित लेख 'पावस और प्रेषितपतिका' गागर में सागर साबित हुआ। श्री अशोक चक्रधर रचित स्मरण 'नीरजजी की चुंबकीय परिधि' का परिभ्रमण हर क्षण मर्मस्पर्शी लगा। कुल मिलाकर प्रस्तुत अंक आद्यंत सुंदर एवं ज्ञानदायक लगा। बहुत-बहुत बधाई। ज्योतिपर्व की मंगल कामनाएँ।

—सीताराम सिंह 'सरोज'

'साहित्य अमृत' के दो अंक साथ-साथ पढ़े। जुलाई अंक में कविताओं के कांसेप्ट तो अच्छे लगे, पर ये कविताएँ हैं, समझ से परे हैं। यश मालवीय का गीत 'हरा पेड़ कटता है' पसंद आया। मीरा जैन की 'राजा का चुनाव' एक सशक्त लघुकथा है, जो देर तक याद रहेगी। अन्य लघुकथाएँ ध्यान आकर्षित नहीं करती हैं। अधिकांशत: तीन-चार पैरा में पूरी होनेवाली लघुकथा अपने कथोपकथन, संवाद और भाषा शैली पर जीती है। लेखकों को चाहिए, इसकी तकनीक को समझें। कहानियों में एम.डी. मिश्रा की कहानी 'उड़ान' एक ऐसे बेरोजगार युवक की कहानी है, जो योजनानुसार गौमाता की पूँछ पकड़कर राजनीति की वैतरणी पार कर लेता है और केंद्र सरकार में राज्यमंत्री बन जाता है। आनंदजी ने तथाकथित गौसेवकों और तमाशाइयों पर एक सशक्त कहानी लिखी है, उन्हें बधाई। अगस्त अंक में 'वैश्विक हिंदी विशेषांक' के अंतर्गत वैश्विक उन्नति के विकास में हिंदी भाषा के योगदान पर एक से बढ़कर एक आलेख प्रेरणादायी बिंदुओं पर विचार करते हैं। वास्तव में हिंदी भाषा एक अकेली ऐसी भाषा है, जो अन्य देशों की संस्कृतियों और समय में अपनी गतिशीलता के साथ आगे बढ़ रही है। संपादकीय में काशी प्रसाद जायसवाल के साहित्य कर्म को संज्ञान में लेते हुए खोजपूर्ण जानकारी के लिए डॉ. रतनलाल और आपको विशेष बधाई! काशीप्रसाद जायसवाल भारत के प्रसिद्ध इतिहासकार, विश्वप्रसिद्ध पुरातत्त्व के विद्वान् एवं हिंदी भाषा के प्रतिष्ठित साहित्यकार थे, जिन्हें भुलाया नहीं जा सकता।

—विश्वप्रताप भारती, अलीगढ़ (उ.प्र.)

'साहित्य अमृत' का अक्तूबर का अंक पढ़ने को मिला। इस अंक में भी एक से बढ़कर एक लेख आदि का समावेश है। उपेंद्रनाथ 'अश्क' की कहानी 'चारा काटने की मशीन' में लेखक ने बँटवारे के समय होनेवाले घटनाक्रम का विवरण दिया है। उस दौरान किस तरह से लोगों ने छोड़कर गए अपने मकानों, दुकानों को जबरन कब्जाने का प्रसंग लिखा है। 'वो नन्हा फरिश्ता' प्रेमपाल शर्मा द्वारा लिखी गई कहानी है। जो एक डॉगी पर आधारित है। कहानी इस धारा प्रवाह से लिखी गई है, जैसे लगता है कि घटनाक्रम हमारे सामने घट रहा हो। एक अनोखे सुख का एहसास होता है। इतनी अच्छी कहानी लिखने के लिए मैं लेखक प्रेमपाल शर्माजी को बधाई देता हूँ। दुर्गादत्त ओझा का 'मोबाइल फोन : खतरे की आहट' पढ़ा। यह सच है कि आज के दौर में मोबाइल में इनसान को क्या से क्या बना दिया है। मोबाइल फोन से होनेवाले नुकसान तथा काम का वर्णन विशेष रूप से किया गया है और आम लोगों का इसके ज्यादा उपयोग से होनेवाले खतरों के बारे में बताया गया है। लेखक का प्रयास प्रशंसा योग्य है। प्रणय श्री वास्तव 'अश्क' द्वारा लिखा गया स्मरण 'राष्ट्र संत तरुण सागरजी और कड़वे वचन' पढ़ा। यह सत्य है कि तरुण सागरजी महाराज अपने कड़वे वचनों के कारण ही समस्त भारत में जाने-पहचाने जाते हैं। यह जैन समाज का एक ऐसा अनमोल हीरा हुआ, जिसके संपर्क में जो भी आया, वह उन्हीं का हो गया। महाराजजी के बारे जितना भी लेखक ने लिखा है, उससे भी अधिक व्यापक उनका प्रभाव उनका व्यक्तित्व है। मैं लेखक भी प्रणय श्रीवास्तव 'अश्क' जी को बधाई देता हूँ। पत्रिका में अन्य कहानी, कविता, लघुकथा का भी समावेश है, इसी कारण से साहित्य अमृत पत्रिका देश की एकमात्र पत्रिका है, जो इतनी व्यापक स्तर पर पढ़ी जाती है।

—ब्रजमोहन जैन

वर्ग पहेली (१५८)

अगस्त २००५ अंक से हमने '**वर्ग पहेली**' प्रारंभ की, जिसे सुप्रसिद्ध शिक्षाविद् एवं ज्ञान-विज्ञान की अनेक पुस्तकों के लेखक **श्री विजय खंडूरी** तैयार कर रहे हैं। हमें विश्वास है, यह पाठकों को रुचिकर लगेगी; इससे उनका हिंदी ज्ञान बढ़ेगा और पूर्व की भाँति वे इसमें भाग लेकर अपना ज्ञान परखेंगे तथा पुरस्कार में रोचक पुस्तकें प्राप्त कर सकेंगे। भाग लेनेवालों को निम्नलिखित नियमों का पालन करना होगा—

१. प्रविष्टियाँ छपे कूपन पर ही स्वीकार्य होंगी।
२. कितनी भी प्रविष्टियाँ भेजी जा सकती हैं।
३. प्रविष्टियाँ ३० नवंबर, २०१८ तक हमें मिल जानी चाहिए।
४. पूर्णतया शुद्ध उत्तरवाले पत्रों में से ड्रॉ द्वारा दो विजेताओं का चयन करके उन्हें दो सौ रुपए मूल्य की पुस्तकें पुरस्कारस्वरूप भेजी जाएँगी।
५. पुरस्कार विजेताओं के नाम-पते जनवरी २०१९ अंक में छापे जाएँगे।
६. निर्णायक मंडल का निर्णय अंतिम तथा सर्वमान्य होगा।
७. अपने उत्तर '**वर्ग पहेली', साहित्य अमृत, ४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-२** के पते पर भेजें।

वर्ग पहेली (१५६) का शुद्ध हल

१ ब	२ गा	व	३ त	■	४ स	ह	५ ला	६ ना
७ हा	ल	■	८ ला	९ प	ता	■	१० त	ला
दु	■	११ खु	श	न	सी	१२ ब	■	य
१३ र	१४ ब	दा	■	हा	■	१५ धा	१६ व	क
■	१७ ह	की	म	■	१८ र	ई	सी	■
१९ त	स	मा	■	२० इ	■	२१ दे	हा	२२ त
र	■	२३ र	२४ ह	म	२५ खा	ना	■	त्त्व
२६ बू	२७ रा	■	२८ ज	ली	ल	■	२९ आ	ज्ञा
३० ज	ह	न्नु	म	■	३१ सा	व	धा	नी

★ पुरस्कार विजेता ★

१. **श्री अंशुल वर्मा**
क्वा. नं. डी-१००, पो.ऑ.-हिरमी
बलौदा बाजार, जिला-रायपुर (छ.ग.)
दूरभाष : ९८२६१८२१०८

२. **सुश्री खुशी चतुर्वेदी**
सी-२१, देवतरन अपार्टमेंट
एच. पार्क, महानगर विस्तार
लखनऊ-२२६००६ (उ.प्र.)
दूरभाष : ९९५६९१४३०४

पुरस्कार विजेताओं को हार्दिक बधाई।

वर्ग-पहेली १५६ के अन्य शुद्ध उत्तरदाता हैं—सर्वश्री विजयपाल सेहलंगिया (महेंद्रगढ़), अपर्णा गर्ग (लश्कर), शिवानंद सिंह 'सहयोगी' (मेरठ), शोभा दानी (नोएडा), शमीमा खातून, फिरदौस जहाँ (दरभंगा), विष्णुकांत झा (वैशाली), मोहन उपाध्याय (अजमेर), मोहन जगदाले (उज्जैन), पुष्पा व्यास (राजगढ़), वाई.के. श्रीवास्तव (जबलपुर), शिवशरण दूबे (कटनी), रेणु मिश्र (जयपुर), माणिक तुलसीराम गौड़ (बेंगलुरु), कैलास भामरे (नासिक), नीरजा शर्मा (अहमदाबाद), दिनकर सहल, सुभाष शर्मा, कुसुम गोयनका, वी.डी. बजाज, मुकेश जैन, पुखराज वार्ष्णेय (दिल्ली)।

बाएँ से दाएँ—

१. दिखावटी ठाट, दिखावा (४)
४. दादा (४)
७. हरी पत्तियों वाली छोटी वनस्पति (२)
८. व्यापारी, वैश्य (३)
१०. इच्छा, मर्जी (२)
११. नाक में पहनने का एक आभूषण (२)
१३. द्रष्टा, देखनेवाला (३)
१५. विचार, धारणा (२)
१६. कालापन, लांछन (३)
१७. बात करने या पढ़ने का ढंग (३)
१८. मछली, एक राशि (२)
१९. गुणगान, प्रशंसा (३)
२१. सूर्य (२)
२३. मित्र (२)
२५. रूठे हुए को अपने अनुकूल बनाना (३)
२७. आमदनी (२)
२८. एक वृक्ष जिसका फल बड़ा और भारी होता है (४)
२९. एक सरस फल (४)

ऊपर से नीचे—

१. उम्मीद का भरोसा (४)
२. बिच्छू आदि का विषैला काँटा (२)
३. ईश्वर (२)
४. प्रियतम (२)
५. मृत्यु, मरणशील (२)
६. दाढ़ी, मूँछों को काटना (४)
९. तटस्थ (३)
१२. श्रांति, थकावट (३)
१९. भेजे जाने योग्य का भाव (३)
१४. धुले कपड़े में लगाया जाने वाला मांड (३)
१५. किसी पीर या फकीर की कब्र (३)
१८. गंभीर विवेचन करनेवाला (४)
२०. टपकना, चूना, क्रुद्ध होना (३)
२२. विदेश से आया हुआ (४)
२४. चारपाई (२)
२५. गंदगी (२)
२६. पिता का श्वसुर (२)
२७. अपना अस्तित्व, अहंभाव (२)

वर्ग पहेली (१५७) का हल अगले अंक में।

वर्ग पहेली (१५८)

१	२		३	■	४	५		६
७		■	८	९		■	१०	
	■	■	■		■	■	■	
११	१२	■	१३		१४	■	१५	
■	१६			■	१७			■
१८		■	१९	२०		■	२१	२२
	■	■	■		■	■	■	
२३	२४	■	२५		२६	■	२७	
२८				■	२९			

प्रेषक का नाम : .....

पता : .....

.....

.....

दूरभाष : .....

'वैदिक सनातन हिंदुत्व' कृति लोकार्पित

५ अक्तूबर को नई दिल्ली के कॉन्स्टीट्यूशन क्लब में प्रसिद्ध लेखक श्री मनोज सिंह की सद्य:प्रकाशित पुस्तक 'वैदिक सनातन हिंदुत्व' का लोकार्पण विश्व हिंदू परिषद् के अंतरराष्ट्रीय अध्यक्ष मान. पूर्व न्यायमूर्ति श्री विष्णु सदाशिव कोकजे के करकमलों से संपन्न हुआ। केंद्रीय दूरसंचार राज्यमंत्री व रेल राज्यमंत्री मान. श्री मनोज सिन्हा विशिष्ट अतिथि थे। प्रसिद्ध आध्यात्मिक विभूति श्री पवन सिन्हा का इस कार्यक्रम को सान्निध्य मिला। ☐

'लालू-लीला' कृति लोकार्पित

११ अक्तूबर को लोकनायक जे.पी. जयंती के अवसर पर पटना में विहार के उपमुख्यमंत्री श्री सुशील कुमार मोदी की सद्य:प्रकाशित कृति लालू-लीला का लोकार्पण में मुख्य अतिथि सर्वश्री रविशंकर सिंह, राधामोहन सिंह, नित्यानंद राय, गिरिराज सिंह, रामकृपाल यादव, प्रेम कुमार, नंद किशोर यादव, श्रवण कुमार, मंगल पांडेय, राजीव प्रताप रूडी, शाहनवाज हुसैन की उपस्थिति में संपन्न हुआ। ☐

रामायण पर पुस्तक लोकार्पित

१५ अक्तूबर को नई दिल्ली के कॉन्स्टीट्यूशन क्लब में प्रसिद्ध लेखिका श्रीमती सरोज बाला की सद्य:प्रकाशित पुस्तक 'रामायण की कहानी, विज्ञान की जुबानी' का लोकार्पण राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सह-सरकार्यवाह मान. डॉ. कृष्ण गोपाल के करकमलों से केंद्रीय राज्यमंत्री (स्वतंत्र प्रभार) और पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्री मान. डॉ. महेश शर्मा की अध्यक्षता में संपन्न हुआ। मानव संसाधन विकास राज्यमंत्री मान. डॉ. सत्य पाल सिंह तथा राज्यसभा सांसद एवं भारतीय टी.वी. के जनक मान. श्री सुभाष चंद्रा मुख्य अतिथि रहे। ☐

लोकार्पण समारोह संपन्न

विगत दिनों मुंबई के सोमैया कॉलेज के सभागार में अर्धवार्षिकी पत्रिका 'समीचीन' की वरिष्ठ रचनाकार श्री सूर्यबाला पर केंद्रित अंक का लोकार्पण किया गया। इस अंक के अतिथि संपादन का दायित्व डॉ. सतीश पांडेय एवं डॉ. प्रवीण चंद्र विष्ट ने उठाया। ☐

'मृत्यु कैसे होती है?...' कृति लोकार्पित

१५ सितंबर को दतिया में श्री राजेंद्र तिवारी द्वारा लिखित कृति 'मृत्यु कैसे होती है ? फिर क्या होता है ?' का लोकार्पण सर्वश्री जे.के. माहेश्वरी, आनंद पाठक, विवेक अग्रवाल एवं एन.के. गुप्ता द्वारा किया गया। कार्यक्रम में म.प्र. के अतिरिक्त महानिदेशक (पुलिस) श्री सुशोभन बनर्जी विशेष रूप से उपस्थित रहे। पुस्तक की प्रस्तावना सुप्रीम कोर्ट के पूर्व चीफ जस्टिस न्यायमूर्ति श्री आर.सी. लाहोटी के द्वारा लिखना ही पुस्तक की सार्थकता को प्रमाणित करता है। ☐

लोकार्पण समारोह संपन्न

२ सितंबर को नई दिल्ली के कॉन्स्टीट्यूशन क्लब में श्री सत्यनारायण जटिया की अध्यक्षता एवं श्री बालस्वरूप राही के मुख्य आतिथ्य में श्री ओम प्रकाश कल्याणे एवं श्री प्रकाश हरि के साझा काव्य-संग्रह 'चलो रेत निचोड़ी जाए' के लोकार्पण में डॉ. मनोज मोक्षेंद्र ने विचार व्यक्त किए। साथ ही श्री प्रेम बिहारी मिश्र के मुक्तक-संग्रह 'झालर मोतियों की' का भी लोकार्पण किया गया। इस अवसर पर डॉ. मनोज मोक्षेंद्र एवं श्री मकीम कोंचवी को 'साहित्य रत्न सम्मान' से अलंकृत किया गया। संचालन डॉ. विवेक गौतम ने तथा धन्यवाद श्री ओम प्रकाश कल्याणे ने ज्ञापित किया। ☐

लोकार्पण एवं काव्य महोत्सव संपन्न

३० सितंबर को वाराणसी में पं. रवि प्रवेश तिवारी की अध्यक्षता में डॉ. वेद प्रकाश पांडेय की तीसरी काव्य-कृति 'चितेरा कौन है' का लोकार्पण डॉ. जितेंद्र नाथ मिश्र के मुख्य आतिथ्य एवं सर्वश्री रमेशचंद्र पाठक, नलनी श्याम कामिल, हीरा लाल मिश्र मधुकर, हरि राम द्विवेदी, बाबू संतोष सिंह, जितेंद्र प्रकाश भिखारी, नंदलाल शर्मा, विनय शर्मा, देवेश चंद्र सिंह, धीरेंद्र सिंह, विजय शंकर पांडेय, गौरी शंकर, आलोक सिंह, सर्वेश मिश्र, दीपक मिश्र के विशिष्ट आतिथ्य में किया गया। संचालन डॉ. शंभूनाथ शास्त्री ने तथा धन्यवाद डॉ. नंद लाल शर्मा ने ज्ञापित किया। इस अवसर पर आयोजित अखिल भारतीय काव्य-महोत्सव में सर्वश्री प्रिया नागर, शालिनी, अनुरागिनी, शिवानी, सुनील कुमार मिश्र, विवेक चतुर्वेदी, आलोक सिंह, अखलाक अहमद, करुणा सिंह, अनिता शर्मा, आर्या महंता, विवेक पांडेय, सर्वेश मिश्र, दीपक मिश्र ने काव्य पाठ किया। सभी युवा कवि एवं कवयित्रियों का शॉल एवं स्मृति-चिह्न देकर सम्मान किया गया। संचालन डॉ. विनय प्रकाश शर्मा ने तथा धन्यवाद डॉ. नंदलाल शर्मा ने ज्ञापित किया। ☐

'श्रद्धेय' कृति का लोकार्पण

१७ सितंबर को मध्य प्रदेश के रीवा स्थित अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय में भारतीय जनता पार्टी के पितृपुरुष स्व. श्री कुशाभाऊ ठाकरे पर केंद्रित पुस्तक 'श्रद्धेय' का लोकार्पण संपन्न हुआ। इस आयोजन में केंद्रीय मंत्री श्री नरेंद्र सिंह तोमर, राष्ट्रीय महामंत्री श्री कैलाश विजयवर्गीय, अनु.जाति/जनजाति मोर्चा के राष्ट्रीय संगठक श्री भगवत शरण माथुर, खनिज मंत्री (म.प्र.) श्री राजेंद्र शुक्ल, स्थानीय सांसद श्री जनार्दन मिश्रा, राज्यसभा सांसद श्री अजय प्रताप सिंह एवं कुलपति प्रो. के.एन. सिंह यादव उपस्थित रहे। ☐

लोकार्पण व सम्मान समारोह संपन्न

२६ सितंबर को प्रयाग में श्री देवेंद्र कुमार श्रीवास्तव की अध्यक्षता में अखिल भारतीय साहित्यिक-सांस्कृतिक संस्था 'शलभ' का ५८वाँ स्थापना दिवस समारोह महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय वर्धा के इलाहाबाद प्रसार केंद्र में संपन्न हुआ। मुख्य अतिथि श्री पं. केशरी नाथ त्रिपाठी ने श्रीमती देवयानी के काव्य-संग्रह 'मन विहंग' और मीरा 'परछाइयाँ' का लोकार्पण करते हुए पुस्तकों पर अपने विचार व्यक्त किए। विशिष्ट अतिथि श्री राम किशोर शर्मा ने भी अपने विचार व्यक्त किए।

संचालन डॉ. प्रदीप चितांशी ने किया। इस अवसर पर हुए राष्ट्रीय कवि सम्मेलन में श्री राम किशोर शर्मा की अध्यक्षता में सर्वश्री तल जौनपुर, ताजवर सुल्ताना, अशोक स्नेही, मुनींद्र श्रीवास्तव, मीरा सिन्हा, वंदना शुक्ल, अंशुल, शैल तनया, वर्षा श्रीवास्तव, ज्योतिर्मयी, देवयानी, मुकुल मतवाला, देवेश, अरविंद श्रीवास्तव, जनकवि प्रकाश, अखिल श्रीवास्तव आदि ने काव्य-पाठ किया। संचालन सुश्री ज्योतिर्मयी ने तथा धन्यवाद श्री ज्ञान राकेश ने किया। □

कृति लोकार्पित

विगत दिनों में नई दिल्ली में सर संघचालक श्री मोहन भागवत द्वारा डॉ. बालमुकुंद की पुस्तक 'महामना मदन मोहन मालवीय : व्यक्तित्व और विचार' का लोकार्पण संपन्न हुआ। इस अवसर पर सर्वश्री सतीश चंद्र मित्तल, ईश्वर शरण विश्वकर्मा, बी.आर. मणि, बल्देव भाई शर्मा, सुनील आंबेकर, सुस्मिता पांडे, डी.पी. सिंह, रजनीश कुमार शुक्ल, कपिल कुमार, प्रफुल्ल केतकर, सुबेदारजी आदि गण्यमान्य जन उपस्थित रहे। संचालन श्री ओमजी उपाध्याय ने किया। □

'स्पाइल-दर्पण' पत्रिका लोकार्पित

विगत दिनों नॉर्वे की हिंदी पत्रिका 'स्पाइल-दर्पण' का विश्व हिंदी सम्मेलन में लोकार्पण किया गया। इस अवसर पर सर्वश्री जगदीश गोबर्धन, वेसलेर, प्रह्लाद राम शरण, विनोद कुमार मिश्र, अलका धनपत, नवीन लोहानी, गोपीनाथन, अर्चना पैन्यूली, शीला मिश्रा, शैलेंद्र कुमार शर्मा, सुशील कुमार शर्मा, सरदार मुजवार, योगेंद्र प्रताप सिंह, कल्पना गवली, श्रीधर पराडकर, त्रिभुवन नाथ शुक्ल, रमेशचंद्र त्रिपाठी, श्रुति, राधा, कृष्णाजी श्रीवास्तव, जोहरा अफजल, वर्षा डिसूजा, सरवदे, प्रदीप कुमार सिंह, श्याम सिंह शशि, गिरीश पंकज, आशीष खांडवे, विद्याविंदु सिंह, योगेंद्र प्रताप सिंह, के.डी. सिंह, प्रणव शास्त्री, मनोरमा अवस्थी आदि ने शुभकामनाएँ दीं। धन्यवाद ज्ञापन सुरेशचंद्र शुक्ल 'शरद आलोक' ने किया। □

रचना-पाठ व लोकार्पण संपन्न

२८ सितंबर को ओस्लो में स्पाइल के कार्यालय में महात्मा गांधी की एक सौ पचासवीं जयंती पर लेखक संगोष्ठी का आयोजन किया गया। इस अवसर पर सर्वश्री इंगेर मारिये लिल्लेएंगेन, मीना मुरलीधरन, फैसल नवाज चौधरी और सुरेश हुकल ने अपनी रचनाओं का पाठ तथा सुरेशचंद्र शुक्ल 'शरद आलोक' के काव्य-संग्रह 'नीड़ में फँसे पंख' का लोकार्पण भी संपन्न हुआ। □

चार पुस्तकें लोकार्पित

२१ सितंबर को शाखा कोटा, बूँदी में श्री भँवर लाल शर्मा की अध्यक्षता में अखिल भारतीय साहित्य परिषद के तत्त्वावधान में पहला पुस्तक विमोचन समारोह संपन्न हुआ। इस अवसर पर पाँच पुस्तकों 'जीने का हक', 'सामाजिक परिवेश की कहानियाँ', 'उम्मीदों का दीप जला', 'भक्ति के प्रतिबिंब', 'सरस बालगीत' का विमोचन किया गया। सर्वश्री राजेंद्र मिलन, अशोक अश्रु, श्याम प्रकाश देवपुरा, भगतसिंह दातौन मयंक, अरविंद सोरल, गणेश लाल गौतम, भगवतीप्रसाद गौतम, रामू भैया, राजेंद्र मिलन आदि ने अपने विचार व्यक्त किए। श्री श्याम प्रकाश देवपुरा ने रामगोपाल राही को मेवाड़ी पगड़ी, उत्तरीय पहनाकर प्रसाद के साथ सम्मानित किया। □

'चंदायन' कृति लोकार्पित

१२ अक्तूबर को वातायन : पोएट्री ऑन बैंक एवं सोएज-लंदन विश्वविद्यालय एवं हिंदी समिति के आयोजन में श्री कैलाश बुधवार की अध्यक्षता में श्री श्याम मनोहर पांडेय द्वारा संपादित मुल्ला दाऊद के प्रथम प्रेमाख्यान 'चंदायन' (साहित्य भवन-इलाहाबाद) का लोकार्पण मुख्य अतिथि श्री विरेंद्र शर्मा के सान्निध्य में संपन्न हुआ। धन्यवाद ज्ञापन श्री पद्मेश गुप्ता ने किया। □

पुस्तक विमोचन एवं कवि सम्मेलन संपन्न

१६ सितंबर को किशनगढ़ में श्री मुकुटबिहारी मालपानी की अध्यक्षता में श्री कृष्ण चंद्र टवाणी की नवीन कृति 'आदर्श जीवन' का विमोचन श्री धर्मेंद्र एवं श्री जयकृष्ण के करकमलों द्वारा संपन्न हुआ। इस अवसर पर ज्ञान मंदिर द्वारा 'अध्यात्म सेवी सम्मान २०१८' से दस अध्यात्म सेवी साहित्यकारों को सम्मान दिया गया, जिनमें श्री रामस्वरूप चोटिया ही उपस्थित रहे। उन्हें शॉल ओढ़ाकर साहित्य भेंट कर प्रशस्ति-पत्र पूज्य आचार्य धर्मेंद्रजी एवं जयकृष्ण शर्मा द्वारा प्रदान किया गया। ९ अन्य अध्यात्म सेवी सम्मान प्राप्तकर्ता हैं—सर्वश्री राधेश्याम योगी, गोवर्धन लाल झँवर, राजेंद्र प्रकाश अग्रवाल, भीमसेन गोयल, उपकार सागर भारद्वाज, श्याम सुंदर टावरी, भ्रमर राजस्थानी, जुगलकिशोर सोमाणी, सुनील गोबंर आदि। इस अवसर पर हुए कवि सम्मेलन में सर्वश्री शिवपूजन शुक्ल, गाफिल स्वामी, गजादान चारण 'शक्तिसुत', पवन पहाड़िया, राधेश्याम जोशी, प्रताप सिंह सिसोदिया, तेज वीर त्यागी, शिवरतन मोहता, हरिओम 'तरंग', कुंजबिहारी शर्मा ने काव्य-पाठ किया। संचालन श्री शिवपूजन शुक्ल ने तथा संचालन श्री अशोक शर्मा ने किया। आभार सर्वश्री आचार्य धर्मेंद्रजी, जयकृष्ण ने व्यक्त किया। □

'ट्वीट कहानियाँ' कृति लोकार्पित

८ अक्तूबर को कानपुर में श्रीमती लता कादंबरी गोयल के लघुकथा संकलन 'ट्वीट कहानियाँ' के लोकार्पण में सर्वश्री योगेंद्र मोहन गुप्त, आलोक वाजपेयी, ममता तिवारी, नीलम खेमिका, जगतवीर सिंह द्रोण, अनुराधा वार्ष्णेय, सतीस निगम, राकेश गोयल, नवीन आदि उपस्थित रहे। □

'देवपुरा-दर्पण' कृति लोकार्पित

१४ सितंबर को नाथद्वारा में उत्तर प्रदेश भाषा संस्थान लखनऊ एवं साहित्य-मंडल श्रीनाथद्वारा के संयुक्त तत्त्वावधान में राष्ट्रभाषा हिंदी के उपलक्ष्य में तीन दिवसीय आयोजन में श्री भगवती प्रसाद देवपुरा के व्यक्तित्व एवं अमर कृतित्व पर केंद्रित एवं डॉ. राहुल द्वारा लिखित प्रबंधात्मक कृति 'देवपुरा-दर्पण' का लोकार्पण संपन्न हुआ। □

श्रीमती कोमल वाधवानी सम्मानित

विगत दिनों भोपाल में मध्य प्रदेश राष्ट्रभाषा समिति द्वारा हिंदी भवन में

आयोजित हिंदी-सेवी सम्मान समारोह में मुख्य अतिथि श्री उमाशंकर गुप्ता एवं श्री कैलाश चंद्र पंत द्वारा श्रीमती कोमल वाधवानी 'प्रेरणा' को उनके हिंदी काव्य-संग्रह 'नेह की बूँद' के लिए 'सैयद मीर अली मीर पुरस्कार' से सम्मानित किया गया। सम्मानस्वरूप उन्हें शॉल, श्रीफल, स्मृति-चिह्न एवं दो हजार पाँच सौ रुपए की राशि भेंट की गई। संचालन श्री युगेश शर्मा ने तथा आभार श्री सुखदेव प्रसाद दुबे ने व्यक्त किया। □

सम्मान समारोह संपन्न

२३ सितंबर को कानपुर में उत्तर प्रदेश के मंत्री श्री सतीश महाना के मुख्य आतिथ्य में अखिल भारतीय कवि-सम्मेलन एवं सम्मान समारोह आयोजित किया गया, जिसमें सर्वश्री सोम ठाकुर को 'तपेश्वरी प्रसाद गुप्त स्मृति पुरस्कार', नेम सिंह रमन को 'आत्म प्रकाश शुक्ल स्मृति पुरस्कार' एवं सत्येंद्र वर्मा को 'वीना मेहरोत्रा स्मृति पुरस्कार' प्रदान किया गया। सम्मानित विद्वानों सहित सर्वश्री त्रिलोकी शर्मा, गोपाल चतुर्वेदी, राधा शाक्य, चंद्रपाल मिश्र 'गगन' ने काव्य पाठ किया। संचालन श्री अनिल बौहरे ने तथा आभार डॉ. राधेश्याम मिश्र ने व्यक्त किया। □

राष्ट्रीय बालसाहित्य संगोष्ठी संपन्न

२९-३० सितंबर को भीलवाड़ा में 'बालवाटिका' मासिक एवं विनायक विद्यापीठ के संयुक्त तत्त्वावधान में डॉ. विनोद बब्बर की अध्यक्षता में 'संस्कार, संस्कृति और बालसाहित्य' विषय पर दो दिवसीय राष्ट्रीय बालसाहित्य संगोष्ठी का आयोजन डॉ. आईदान सिंह भाटी के मुख्य आतिथ्य तथा डॉ. हरिश्चंद्र बोरकर व प्रो. शिवदेव मन्हास के विशिष्ट आतिथ्य में किया गया, जिसमें सर्वश्री भगवती प्रसाद गौतम, नागेश पांडेय 'संजय', राजकिशोर सक्सेना, रमेश मयंक ने पत्र वाचन किया। सत्र का संचालन डॉ. कैलाश पारीक ने तथा आभार डॉ. भैरूँलाल गर्ग ने व्यक्त किया। श्री बुलाकी शर्मा की अध्यक्षता में आयोजित द्वितीय सत्र में डॉ. विनोद बब्बर के मुख्य आतिथ्य एवं श्री योगेश जानी तथा श्री यज्ञदत्त नागर के विशिष्ट आतिथ्य में सर्वश्री हरिश्चंद्र बोरकर, शिव मृदुल, भगवतीप्रसाद गौतम, शिवदेव मन्हास, रमेश मयंक, नागेश पांडेय 'संजय' को 'आदर्श शिक्षक सम्मान' से, राजा चौरसिया, दिनेश पाठक 'शशि', सत्यदेव सवितेंद्र, नंदकिशोर निर्झर, शील कौशिक, अजीव 'अंजुम' को सम्मान-पत्र, शॉल, श्रीफल एवं नकद राशि भेंट कर 'बालसाहित्य सृजन सम्मान' से सम्मानित किया गया। संचालन श्रीमती रेखा लोढ़ा 'स्मित' ने किया। आभार डॉ. भैरूँलाल गर्ग एवं डॉ. देवेंद्र कुमावत ने व्यक्त किया। □

व्याख्यानमाला आयोजित

७ अक्तूबर को कोलकाता में श्री बड़ाबाजार कुमारसभा पुस्तकालय द्वारा पं. अच्युतानंद मिश्र की अध्यक्षता में आयोजित कर्मयोगी जुगल किशोर जैथलिया व्याख्यानमाला में पद्मश्री राम बहादुर राय ने 'जयप्रकाश नारायण के सपनों का भारत' विषय पर विचार व्यक्त किए। श्री सज्जनकुमार तुल्स्यान एवं श्री जयदीप चितलांगिया ने भी अपने विचार व्यक्त किए। संचालन डॉ. तारा दूगड़ ने तथा धन्यवाद श्री लक्ष्मीनारायण भाला ने ज्ञापित किया। □

प्रादेशिक गजल-संगोष्ठी संपन्न

३० सितंबर को भोपाल के हिंदी भवन में श्री बटुक चतुर्वेदी की अध्यक्षता एवं श्री अबरार नगमी के मुख्य आतिथ्य में आयोजित प्रादेशिक गजल-संगोष्ठी में सर्वश्री हसन मुरैनवी, अरुण अपेक्षित, रफक नागौरी, राजीव नामदेव 'राना लिधौरी', सुरेंद्र श्रीवास्तव, विजय सक्सेना 'वियोगी', जय कृष्ण चांडक, दिनेश 'व्याकुल', शफी लोदी 'रतलामी', हरिवल्लभ शर्मा ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन श्री राजीव नामदेव 'राना लिधौरी' ने तथा आभार डॉ. प्रीति प्रवीण खरे ने व्यक्त किया। □

काव्य-संध्या आयोजित

१ अक्तूबर को नई दिल्ली में नागरी लिपि परिषद् और गांधी स्मारक निधि के तत्त्वावधान में डॉ. परमानंद पांचाल की अध्यक्षता एवं डॉ. रामशरण गौड़ के मुख्य आतिथ्य में आयोजित स्वच्छ भारत अभियान पर केंद्रित काव्यांजलि में सर्वश्री हरिसिंह पाल, संजय सिंह, तारा सिंह अंशुल, ब्रजपाल सिंह, नत्थी सिंह बघेल, नीतू सिंह राय, विनोद बब्बर, अरुण कुमार पासवान, विपिन सौम्य, सुरेश पाल वर्मा जसाला, उमेशचंद त्यागी, नैन सिंह नैन ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन श्री बाबा कानपुरी ने तथा आभार डॉ. हरिसिंह पाल ने व्यक्त किया। □

राष्ट्रीय व्यंग्य महोत्सव संपन्न

विगत दिनों बिलासपुर में अटल बिहारी वाजपेयी विश्वविद्यालय के सभागार में राष्ट्रीय व्यंग्य महोत्सव का उद्घाटन सर्वश्री हरीश पाठक, धीरेंद्र अस्थाना, गिरीश पंकज, नीलकंठ पारटकर के विशिष्ट आतिथ्य में डॉ. गौरीदत्त शर्मा एवं डॉ. प्रेम जनमेजय द्वारा किया गया। श्री गिरीश पंकज की अध्यक्षता एवं डॉ. विनय कुमार के मुख्य आतिथ्य में 'व्यंग्य से मुठभेड़ की रचनात्मकता पर विमर्श' एवं 'छत्तीसगढ़ी व्यंग्य का परिदृश्य' विषय पर आयोजित विमर्श सत्र में सर्वश्री अजय पाठक, रमेश सैनी, विनोद साव, सुनील जैन राही ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन डॉ. संजीव कुमार ने तथा आभार श्री बी.आर. साहू ने व्यक्त किया। इस अवसर श्री संजीव कुमार की पुस्तक का विमोचन भी किया गया। श्री द्वारिका प्रसाद अग्रवाल की अध्यक्षता, श्री के.पी. सक्सेना के मुख्य आतिथ्य एवं श्री राजशेखर चौबे के विशिष्ट आतिथ्य में आयोजित गद्य व्यंग्य पाठ में सर्वश्री रणविजय राव, रमाकांत ताम्रकार, बलदेव त्रिपाठी, केशव शुक्ला, जी.डी. पटेल, भरत चंदानी, सुरेंद्र रावल, महेश श्रीवास, रामविलाश शर्मा, रमेश सैनी, प्रियंका सैनी ने व्यंग्य पाठ किया। संचालन श्री राजेंद्र मौर्य ने तथा आभार श्री रमेश चौरसिया ने व्यक्त किया। उसके बाद काव्यपाठ का भी आयोजन हुआ, जिसमें लगभग दो दर्जन विद्वानों ने अपना योगदान दिया। इस अवसर पर सर्वश्री हरीश पाठक, धीरेंद्र अस्थाना, सोमनाथ यादव, द्वारिका प्रसाद अग्रवाल, अजय पाठक एवं राजेंद्र मौर्य को 'व्यंग्य यात्रा सम्मान' से सम्मानित किया गया। साथ ही समस्त सहभागी साहित्यकारों को बिलासा सम्मान, शॉल, स्मृति-चिह्न भी प्रदान किए गए। संचालन डॉ. सोमनाथ यादव ने तथा आभार श्री राजेंद्र मौर्य ने व्यक्त किया। □

डॉ. कमलकिशोर गोयनका का जन्मदिवस मनाया

१२ अक्तूबर को नई दिल्ली के दीनदयाल उपाध्याय मार्ग स्थित प्रवासी भवन सभागार में आर्यावर्त साहित्य-संस्कृति-संस्थान की ओर से श्री दयाप्रकाश सिन्हा की अध्यक्षता एवं डॉ. रामशरण गौड़ के मुख्य आतिथ्य में आयोजित डॉ. कमलकिशोर गोयनका के ८०वें जन्मदिन समारोह में सर्वश्री अवनिजेश अवस्थी, मुकेश अग्रवाल, कुमुद शर्मा, नारायण कुमार, उमाशंकर मिश्र, अरुण कुमार भगत, रमाकांत शर्मा ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन डॉ. अशोक कुमार ज्योति ने किया। ☐

कथा-गोष्ठी संपन्न

८ अक्तूबर को झाँसी में श्री श्यामसुंदर सेठ की अध्यक्षता में लेखिका श्रीमती मीराजी के आवास पर महान् कथाकार प्रेमचंद की पुण्यतिथि पर आयोजित कथापाठ में सर्वश्री रमाशंकर भारती, जगदीश खरे, दिनेश वैश्य, प्रेमकुमार गौतम ने कथा-पाठ किया। सर्वश्री अजय कुमार दुबे, साकेत सुमन चतुर्वेदी और पत्रकार वाई.के. शर्मा आदि ने कथाओं पर अपनी टिप्पणियाँ दीं। संचालन डॉ. रमाशंकर ने किया। ☐

सम्मान व संगोष्ठी संपन्न

४ अक्तूबर को डी.ए.वी. कॉलेज कानपुर में डॉ. लक्ष्मीशंकर मिश्र 'निशंक' की जन्मशती पर विभिन्न वक्ताओं ने अपने विचार व्यक्त किए। इस अवसर पर कुलसचिव डॉ. विनोद कुमार सिंह, संगोष्ठी संयोजिका डॉ. दया दीक्षित, प्रोफेसर व साहित्यकार हेतु भारद्वाज तथा कवि दीन मुहम्मद दीन को 'बाबू जगेंद्र स्वरूप हिंदी सम्मान' प्रदान किया गया। ☐

व्याख्यानमाला आयोजित

२३ सितंबर को साहित्यिक संस्था रचना, साहित्य एवं कला मंच, पालमपुर ने हिमाचल कला, संस्कृति एवं भाषा अकादेमी के सहयोग से हिमाचल के दिवंगत हिंदी सेवियों के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर सिलसिलेवार व्याख्यानमाला का आयोजन करने का निर्णय लिया है। प्रथम व्याख्यान प्रसिद्ध गजल लेखक, कवि एवं कहानीकार श्री शेष अवस्थी के रचनाकर्म पर डॉ. आशु फुल्ल ने प्रस्तुत किया। प्रिंसिपल श्री शक्तिचंद राणा, प्रो. सराज परमार ने अवस्थीजी से संबद्ध संस्मरण सुनाए। इस अवसर पर गोष्ठी का भी आयोजन हुआ, जिसमें २५ कवियों ने अपनी नव सृजित कविताओं का पाठ किया। संचालन श्री अरविंद ठाकुर ने किया। ☐

साहित्य-सम्मान समारोह संपन्न

विगत दिनों महाकाल की नगरी उज्जैन में आयोजित नौवें अखिल भारतीय शब्द प्रवाह साहित्य सम्मान समारोह २०१८ में हिंदी के प्रतिष्ठित व्यंग्यकार डॉ. रवि शर्मा 'मधुप' को उनके व्यंग्य-संग्रह 'अँगूठा छाप हस्ताक्षर' को प्रथम पुरस्कार एवं 'शब्द रत्न' की मानद उपाधि से सम्मानित किया गया। पूर्व कुलपति डॉ. राम राजेश मिश्र, बाल पत्रिका 'देवपुत्र' के संपादक डॉ. विकास देव, सर्वश्री राजकुमार जैन 'राजन' व संदीप सृजन तथा अनेक विभूतियों ने सम्मान दिया। ☐

महिला साहित्यकार सम्मेलन संपन्न

विगत दिनों गुरुग्राम (हरियाणा) में हिंदी पखवाड़े के तहत श्रीमती नीलिमा गुप्ता की अध्यक्षता में पूर्व विधायक स्व. मीना अग्रवाल की स्मृति में एक-दिवसीय महिला साहित्यकार सम्मेलन का आयोजन किया गया। मुख्य अतिथि वरिष्ठ कवयित्री सुनीता शर्मा, विशिष्ट अतिथि के रूप में डॉ. हेमा देवरानी व वरिष्ठ कथाकार डॉ. अंजना अनिल आदि ने स्त्री विषयों पर अपने विचार व्यक्त किए। युवा कवयित्री लवीना गोयल, शीला स्वामीराज गुप्ता, सरिता भारत, विजयलक्ष्मी आदि ने अपने विचार प्रस्तुत किए। अतिथि साहित्यहार महिलाओं का शॉल ओढ़ाकर सम्मान किया गया। संचालन कवयित्री श्रीमती राज गुप्ता तथा आभार श्रीमती लवीना गोयल ने व्यक्त किया। ☐

काव्य संध्या आयोजित

१३ अक्तूबर को उस्ताद शायर जनाब अमजद की अध्यक्षता में दिवंगत कवयित्री श्रीमती माहेश्वरी निगम की स्मृति में काव्य संध्या का आयोजन बेंगलुरु पुस्तकम प्रकाशन द्वारा आयोजित किया गया। इंदु कांत अंगिरस ने कवयित्री द्वारा रचित काव्य-संग्रह 'राम सागर' से कुछ छंद उद्धृत किए। काव्य संध्या में सर्वश्री स्वर सोनिका, मृदुला चौहान, पीयूष विषाक्त, नंद सारस्वत, प्रतीक पलोड, सुरिंदर 'सूरी', असजद बनारसी, डॉ. सुनील पंवार एवं गुफरान अमजद आदि ने अपनी कृतियों से श्रोताओं को भावविभोर किया। संचालन श्रीमती इंदु कांत अंगिरस ने किया। ☐

महादेवी वर्मा स्मृति सम्मान

अखिल भारतीय साहित्य कला मंच एवं निरुपमा प्रकाशन, मेरठ के संयुक्त तत्त्वावधान में गजल सम्राट् श्री दुष्यंत कुमार की जयंती पर हुए सम्मान समारोह में चार पुस्तकों 'कहानियाँ निर्जन द्वीप' (गोविंद रस्तोगी), 'महिला सशक्तीकरण' (ममता नौगरैया), 'कहानियाँ बाल संस्करणों की' एवं 'कहानियाँ नारी सशक्तीकरण की' (कैप्टन चंद्रपाल सिंह यादव) की कृति का लोकार्पण किया गया। कार्यक्रम की अध्यक्षता वरिष्ठ साहित्यकार प्रो. वेद प्रकाश वटुकजी तथा सान्निध्य सर्वश्री मान सिंह वर्मा, प्रभात राय, महेश चंद्र दिवाकर एवं मीनू भटनागर का रहा। वरिष्ठ लेखिका श्रीमती ममता नौगरैया को 'महादेवी वर्मा स्मृति सम्मान २०१८' से अलंकृत किया गया। आभार डॉ. रामगोलपाल व निरुपमा वर्मा द्वारा व्यक्त किया गया। ☐

कवि-सम्मेलन संपन्न

२८ सितंबर को हैदराबाद में डॉ. भगवंत राव की अध्यक्षता में गीत चाँदनी के प्रतिमास होनेवाले कवि सम्मेलन में विशिष्ट अतिथि श्रीमती शोभा दुबे, सर्वश्री गोविंद राठी, श्रीराम व्यास, गुणवंत राव, श्रीधर, वाई. कृष्णा, महेंदर बतौर विशेष अतिथि मंच पर उपस्थित थे। सर्वश्री कुमुदबाला, सुषमा बैद, सीताराम माने, दुर्गाराज, पटून, संत कुमार मंडल 'जागृति', उमा देवी सोनी, चंद्र प्रकाश दायमा, श्रीकुमार बोरा, विजय बाला स्याल, सूरज प्रसाद सोनी, पुरुषोत्तम कड़ेल, सुरेश गुगलिया, गोविंद अक्षय, रत्नकला मिश्र, गोविंद राठी, सत्यनारायण काकड़ा आदि ने काव्य-पाठ किया। इस अवसर पर डॉ. भगवंत राव का शॉल और पुष्पमाला से सम्मान किया गया। धन्यवाद ज्ञापन श्री रत्नकला मिश्र ने किया। ☐

स्मृति समारोह संपन्न

मध्य प्रदेश के नीमच में डॉ. राजेंद्र सिंघवी निंबाहेड़ा की अध्यक्षता में साहित्य अकादेमी मध्य प्रदेश शासन द्वारा आयोजित शरद जोशी स्मृति समारोह में श्रीमती बीना चौधरी, सर्वश्री आदित्य गुप्ता, ओमप्रकाश चौधरी, उमेश कुमार सिंह ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन सुरेंद्र शक्तावत ने किया। इसी अवसर पर आयोजित कवि-गोष्ठी में सर्वश्री पुनीत लसोड, दीपशिखा रावल, कमलेश दवे, धर्मेंद्र शर्मा, कीर्ति चौधरी, मालती कवि, दुर्गेश नागदा हँसमुख आदि ने अपनी-अपनी रचनाओं का पाठ किया। संचालन श्री कीर्ति चौधरी ने तथा आभार श्री हरीश मंगल ने व्यक्त किया। ☐

सम्मान समारोह आयोजित

ग्रामीण बैंक ऑफ आर्यावर्त के क्षेत्रीय कार्यालय के सभागार में हिंदी पखवाड़े के अंतर्गत शॉल, स्मृति चिह्न और नगद धनराशि देकर श्री अशोक अंजुम का सम्मान किया गया। इस अवसर पर सर्वश्री रंजीत सिंह, ए.यू. खान, भागीरथ शर्मा, डी.के. गुप्ता आदि उपस्थित रहे। तत्पश्चात् श्री अंजुम ने हिंदी की दशा, दिशा, महत्त्व और इतिहास पर अपने विचार व्यक्त किए। ☐

सम्मान समारोह संपन्न

विगत दिनों में लखनऊ में आयोजित हिंदी-पखवाड़ा तथा सम्मान समारोह में सर्वश्री कृष्ण कुमार यादव, आर.एन. यादव, भोला शाह, ओम प्रकाश चौहान आदि ने अपने विचार व्यक्त किए। सचालन श्री जे.के. अवस्थी ने किया। कार्यक्रम के विजेताओं को नकद राशि और प्रशस्ति-पत्र देकर सम्मानित किया गया। निबंध लेखन प्रतियोगिता में रोहिताश्व बाजपेयी, अर्चना झा, रामकिशोर तिवारी, सुमन देवी, अपर्णा वर्मा, ऋषभ गुप्ता, मीनाक्षी जायसवाल, सारिका अवस्थी को पुरस्कार तथा पुष्पलता श्रीवास्तव, जुबैर इकबाल, मीरा गोधवानी, दीक्षा यादव व लाल बहादुर यादव को नकद पुरस्कार देकर प्रोत्साहित किया गया। ☐

पाठक मंच संगोष्ठी का आयोजन

२४ सितंबर को जबलपुर के महाकौशल विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग में मुख्य अतिथि सर्वश्री अमरेंद्र नारायण तथा प्राचार्या सैम्युयल की उपस्थिति में संपन्न हुई संगोष्ठी में सर्वश्री ध्रुव कुमार दीक्षित, गंगाधर त्रिपाठी, श्रीमती नीमा सिंह, राजेश श्याम कुँवर, सुमित पासी, अरुण कुमार मिश्र, दीपिका जैन, हर्षा परमार, मीनाक्षी मरावी, इबादत उल्लाह अंसारी, मनीष जायसवाल, नारायण सिंह अप्रैलिया, भूषण श्रीवास्तव आदि ने विचार रखे। संचालन श्री विवेक रंजन जायसवाल ने किया। ☐

सम्मान व पुरस्कार समारोह संपन्न

विगत दिनों श्रीडूँगरगढ़ में श्री वेद व्यास की अध्यक्षता में साहित्यिक संस्था राष्ट्रभाषा हिंदी प्रचार समिति द्वारा आयोजित साहित्यकार सम्मान समारोह के मुख्य अतिथि श्यामसिंह राजपुरोहित व विशिष्ट अतिथि श्री चंद्रभान भारद्वाज ने अपने विचार व्यक्त किए। इस अवसर पर सर्वश्री माधव नागदा, हरीश करमचंदानी, मंगत बादल, अनुश्री राठौड़, जाकिर आदीब आदि ने भी अपने विचार रखे। आभार श्री बजरंग शर्मा ने व्यक्त किया। इस क्रम में सर्वश्री माधव नागदा को 'साहित्यश्री' से, हरीश करमचंदानी को 'डॉ. नंदलाल महर्षि स्मृति हिंदी सृजन' पुरस्कार, मंगत बादल को 'पं. मुखराम सिखवाल स्मृति राजस्थानी साहित्य सृजन', सुमित शर्मा को बृजरानी भार्गव स्मृति युवा साहित्य पुरस्कार से सम्मानित किया गया। सम्मानस्वरूप ग्यारह-ग्यारह हजार रुपए व युवा पुरस्कार इक्यावन सौ रुपए, प्रशस्ति-पत्र, शॉल एवं प्रतीक-चिह्न भेंट किया गया। इसी समारोह में बख्तावर सिंह राजपुरोहित राजस्थानी कहानी प्रतियोगिता में प्रथम श्रीमती अनुश्री राठौड़, द्वितीय संतोष चौधरी, तृतीय राजेंद्र शर्मा मुसाफिर को पुरस्कृत किया गया। इसके अलावा वाजिद हसन काजी, मनोज कुमार स्वामी, किशोर कुमार निर्वाण, विमला नागला व सुनील कुमार गज्जाणी को सांत्वना पुरस्कार दिया गया। ☐

परिचर्चा संपन्न

१२ अक्तूबर को दिल्ली पब्लिक लाइब्रेरी द्वारा केंद्रीय पुस्तकालय के सभागार में विषय 'भ्रष्टाचार' पर परिचर्चा का अयोजन किया गया। इस अवसर पर सर्वश्री राजवीर शर्मा, लोकेश शर्मा, रामशरण गौड़ आदि ने अपने विचार व्यक्त किए। आभार ज्ञापन श्री लोकेश शर्मा ने किया। ☐

अखिल भारतीय नागरी लिपि सम्मेलन संपन्न

५-६ अक्तूबर को त्रिपुरा की राजधानी अगरतला में श्री परमानंद पांचाल की अध्यक्षता में आयोजित सम्मेलन के मुख्य अतिथि श्री सुदीप रॉय बर्मन तथा विशिष्ट अतिथि सर्वश्री अतुल देव वर्मा, राम प्रसाद पाल, किरण हजारिका, प्राण जग्गी, रविश कुमार थे। उद्घाटन सत्र में सर्वश्री अतुल देव वर्मा, एम.एल. गुप्ता, मिलन रानी जमातिया को 'विनोबा नागरी सम्मान' के साथ प्रशस्ति-पत्र, शॉल, अंगवस्त्र, नागरी साहित्य, डायरी और कलम भेंट की गई। द्वितीय सत्र की अध्यक्षता श्री शहाबुद्दीन शेख ने तथा संचालन श्रीमती शैलजा सिंह ने किया। तृतीय सत्र की अध्यक्षता श्रीमती राजलक्ष्मी कृष्णन ने तथा संचालन श्री इंद्र सेंगर ने किया। पंचम सत्र में श्री दिनेश कुमार चौबे की अध्यक्षता में परिचर्चा हुई। श्रीमती मिलन रानी जमातिया, सदाशिव सिंह, जोराम अनिया ताना, डोजी, जय कौशल आदि ने अपने विचार व्यक्त किए। छठे सत्र में श्री वीरेंद्र कुमार यादव की अध्यक्षता में 'वैश्विक लिपि के रूप में नागरिक के बढ़ते चरण' विषय पर परिचर्चा हुई। संचालन श्री ओम प्रकाश ने किया। सातवें और समापन सत्र का उद्घाटन श्री अमिता शुक्ला ने किया। आठवें सत्र में श्री प्राण जग्गी की अध्यक्षता में विभिन्न राज्यों के कवियों ने सस्वर काव्य-पाठ किया। संचालन श्री बृजपाल सिंह ने तथा धन्यवाद ज्ञापन श्री हरिसिंह पाल ने किया। ☐

सम्मान समारोह संपन्न

विगत दिनों लखनऊ में संस्कार भारती गोमती इकाई द्वारा लक्ष्मीबाई मेमोरियल स्कूल में नटराज पूजन एवं कलागुरु सम्मान कार्यक्रम का आयोजन हुआ। मुख्य अतिथि श्रीमती पुष्पलता अग्रवाल तथा विशिष्ट अतिथि श्री किशोरी शरण शर्मा थे। सर्वश्री सारा, निखिल, अनादि, नरायन सिंह, आर्यन आदि ने अपनी रचनाएँ प्रस्तुत कीं। इस अवसर पर सर्वश्री कौशलेंद्र पांडेय, मीरा माथुर, ललित सिंह पोखरिया, अमरनाथ गौड़ को

'कलागुरु सम्मान' प्रदान किया गया। संचालन श्री अखिलेश्वर नाथ पांडेय ने तथा आभार श्री गौरीशंकर वैश्य 'विनम्र' ने व्यक्त किया। ☐

सम्मान घोषित

१३ अक्तूबर को उर्वरक क्षेत्र की सहकारी संस्था इंडियन फार्मर्स फर्टिलाइजर्स कोऑपरेटिव लि. (इफको) का 'श्रीलाल शुक्ल स्मृति इफको साहित्य सम्मान २०१८' कथाकार श्री रामधारी सिंह दिवाकर को दिया जाएगा। ☐

मातृशक्ति कार्यक्रम संपन्न

२९ सितंबर को जयपुर के इंदिरा गांधी पंचायती राज संस्थान में आयोजित 'मातृशक्ति संगम' के मुख्य अतिथि राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सरसंघचालक मान. श्री मोहन भागवत थे। मातृशक्ति को संबोधित करते हुए उन्होंने कहा कि भारतीय विचार-परंपरा में पुरुष और स्त्री को एक-दूसरे का पूरक माना गया है। स्त्रियों में भिन्न-भिन्न कार्यों को साथ-साथ कर पाने की नैसर्गिक क्षमता होती है, तो वहीं पुरुष अपनी आजीविका के माध्यम से परिवार चलाने और उसे सुरक्षा प्रदान करने का काम करता है, तो महिलाएँ इन कार्यों के साथ-साथ संतान को अपनी वात्सल्यता से योग्य बनाने और परिवार को एक बनाए रखने की जिम्मेदारी का कुशलता से निर्वहन करती हैं। ☐

हिंदी दिवस मनाया गया

विगत दिनों कैलिफोर्निया में हिंदी दिवस तथा हिंदी पखवाड़ा समारोह मनाया गया। इस कार्यक्रम में सर्वश्री वेंकटसेन अशोक, प्रदीप यादव, एडमुंडो नार्टे आदि उपस्थित रहे। श्रीमती नीलू गुप्ता ने दीप प्रज्वलन व सरस्वती वंदना की। श्री अशोक वेंकटसेन ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन श्री शिवि अग्रवाल ने किया। ☐

साहित्य सप्तक कार्यक्रम संपन्न

१७-२३ सितंबर को जयपुर में पीस फाउंडेशन के तत्त्वावधान में आयोजित कार्यक्रम के प्रथम दिवस श्री हेमंत शेष की अध्यक्षता में श्री सवाई सिंह शेखावत को 'सारस्वत सम्मान' हुआ। द्वितीय दिवस को श्री दुर्गाप्रसाद अग्रवाल की अध्यक्षता में श्री सत्यनारायण का 'सारस्वत सम्मान' किया गया। तृतीय दिवस को समारोह के अध्यक्ष श्री प्रबोध गोविल के सान्निध्य में श्री सुदेश बत्रा का 'सारस्वत सम्मान'। चतुर्थ दिवस को श्री माधव हाड़ा की अध्यक्षता में श्री जीवन सिंह का 'सारस्वत सम्मान' किया गया। आभार श्री राजेंद्र मोहन शर्मा ने व्यक्त किया। पंचम दिवस को श्री लोकेश कुमार की अध्यक्षता में श्रीमती अजंता देव का 'सारस्वत सम्मान' किया गया। छठे दिवस को रंगकर्मी श्री रणबीर सिंह का सम्मान किया गया। अंतिम दिन श्री राजेंद्र मोहन शर्मा की अध्यक्षता में श्री फारूक अफरीदी का सारस्वत सम्मान किया गया। ☐

'अक्षर सम्मान' से सम्मानित

विगत दिनों राजस्थान के कोटा में श्री महेश विजय की अध्यक्षता में श्री अशोक 'अंजुम' को 'अक्षर सम्मान' से सम्मानित किया गया। सम्मान स्वरूप उन्हें शॉल, श्रीफल, स्मृति-चिह्न, अभिनंदन पत्र और सम्मान राशि भेंट की गई। मुख्य अतिथि श्री देव कोठारी, विशिष्ट अतिथि श्री पी.के. दशोरा व बिरला ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन श्री विजय जोशी ने तथा आभार श्री योगेंद्र शर्मा ने व्यक्त किया। ☐

श्रीमती ममता कालिया को 'व्यास सम्मान'

१८ अक्तूबर को नई दिल्ली में के.के. बिरला फाउंडेशन की ओर से २७वाँ सम्मान श्रीमती ममता कालिया को उनके उपन्यास 'दुक्खम-सुक्खम' के लिए मुख्य अतिथि श्रीमती मृदुला सिन्हा के द्वारा प्रदान किया गया। सम्मान-स्वरूप नकद राशि व प्रमाण-पत्र दिया गया। इस अवसर पर श्री विश्वनाथ प्रसाद तिवारी ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन श्रीमती रेखा सेठी ने किया। ☐

साहित्यिक क्षति

डॉ. मालती शर्मा नहीं रहीं

१३ अक्तूबर को लोक साहित्य की मर्मज्ञ एवं विदुषी डॉ. मालती शर्मा का पुणे में निधन हो गया। वे ८१ वर्ष की थीं। उनका जन्म १५ नवंबर, १९३७ को हुआ। लोक साहित्य पर उनकी 'संस्कृति के सरोकार', 'माझी आजी डॉक्टर', 'ब्याहुलों की लोक परंपरा और महादेव का ब्याह', 'ब्रज के लोक-संस्कार गीत'; काव्य में 'निर्वासन की आँधी', 'कहाँ गए घर', 'उम्र की पुस्तक में मोरपंख' तथा बाल कहानियों की 'गरम खिचड़ी की सीख', 'कोकाकोला के झरने', 'एक खंभा सभागृह' पुस्तकें बेहद चर्चित हुईं। 'लोक परंपरा : अवधारणा और संरचना' (आठ खंडों में) प्रकाशित होनेवाला था। अनेक पत्र-पत्रिकाओं में वे निरंतर लिख रही थीं। साहित्य एवं लोक साहित्य में उल्लेखनीय योगदान के लिए विक्रमशिला हिंदी विद्यापीठ, भागलपुर द्वारा उन्हें 'विद्या वाचस्पति' की मानद उपाधि से विभूषित किया गया।

डॉ. भवानीलाल भारतीय नहीं रहे

१२ सितंबर को भारतीय नवजागरण में ऋषि दयानंद तथा आर्यसमाज भूमिका के साधिकृत व्याख्याता डॉ. भवानीलाल भारतीय नहीं रहे। वे ९० साल के थे। उनका जन्म १ मई, १९२८ को राजस्थान के नागौर जनपद के गाँव परबतसार में एक परिवार में हुआ। आर्यसमाज में साहित्यिक और लेखन संबंधी प्रवृत्तियों से जुड़े रहे। उनका लेखनकाल पाँच दशकों की सुदीर्घ अवधि तक विस्तृत रहा। इस बीच उनके लगभग १५० ग्रंथ प्रकाशित हुए। उन्होंने आर्यसमाज के ऐतिहासिक और वैचारिक पक्ष को उभारने का सतत प्रयास किया था। वे गत ३३ वर्षों से परोपकारिणी सभा के सदस्य तथा वर्तमान में कार्यकारिणी के सदस्य थे, आर्य लेखक परिषद् अध्यक्ष भी।

साहित्य अमृत परिवार की ओर से दिवंगत आत्माओं को भावभीनी श्रद्धांजलि।